CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६४१

9.3

'उपासना'

॥

अनन्तश्री विभूषित स्वामी सत्यमित्रानन्दजी गिरि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनन्तश्री विभूषित स्वामी श्रीसत्यमित्रानन्दजी गिरि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ॐ

उपासना से मानव-मन विराट परमात्मा के साथ एकता का अनुभव करता है। उपासना प्रभु की निकटता प्राप्त करने का दूसरा नाम है। संसार में सर्वाधिक निकट परमात्मा ही हैं इसीलिये उसे अन्तर्यामी कहा जाता है।

'पेरीवाल जनसेवा ट्रस्ट' कलकत्ता द्वारा मुझे 'उपासना' पर प्रवचन करने के लिये आमंत्रित किया गया था और प्रभुकृपा से यथामति मैंने उस गंभीर विषय पर अपना चिंतन जनता-जनार्दन को समर्पित किया। उन्हीं प्रवचनों का संकलन सौ॰ अरुणा देवी महावीरप्रसाद पेरीवाल द्वारा पुस्तकाकार में हो कर जा रहा है, यह आनंद की बात है। सौ॰ अरुणा पेरीवाल सुधी श्रोता एवं सात्विक साधिका हैं। उनके परिश्रम का लाभ जनसाधारण को मिलेगा ऐसा मेरा विश्वास है। प्रसन्नता के इस युग में इसके अध्येता उपासना हेतु कुछ क्षण नित्य निकालें, ऐसा मेरा आग्रह है।

हरिद्वार
जन्माष्टमी १९८९

स्वामी सत्यमित्रानन्द

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ॐ

प्रार्थना

हे नाथ ! अब तो ऐसी दया हो, जीवन निरर्थक जाने न पाये।
यह मन न जाने क्या-क्या कराये, कुछ बन न पाया अपने बनाये ।।

संसार में ही आसक्त रह कर, दिन रात अपने मतलब की कहकर।
सुख के लिये लाखों दुःख सहकर, ये दिन अभी तक यों ही बिताये।
हे नाथ ! अब तो ऐसी दया हो, जीवन निरर्थक जाने न पाये ।।

ऐसा जगा दो, फिर सो न जाऊँ, अपने को निष्काम प्रेमी बनाऊँ।
मैं आपको चाहूँ और पाऊँ, संसार का भय रह कुछ न जाये ।।
हे नाथ ! अब तो ऐसी दया हो, जीवन निरर्थक जाने न पाये।

वह योग्यता दो सत्कर्म कर लूँ, अपने हृदय में सद्भाव भर लूँ।
नर तन है साधन भव सिन्धु तर लूँ, ऐसा समय फिर आये न आये ।।
हे नाथ ! अब तो ऐसी दया हो, जीवन निरर्थक जाने न पाये।

हे नाथ ! मुझे निरभिमानी बना दो, दारिद्र्य हर लो दानी बना दो।
आनन्दमय विज्ञानी बना दो, मैं हूँ तुम्हारी आशा लगाये ।।
हे नाथ ! अब तो ऐसी दया हो, जीवन निरर्थक जाने न पाये।

❀

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निवेदन

ज्ञान, भक्ति और कर्म के समन्वय की दिव्य मूर्ति, परम पूज्य अनन्तश्री विभूषित स्वामी श्री सत्यमित्रानन्दजी गिरि का शुभागमन कलकत्ता महानगर में गत ६ जनवरी १९८७ को हुआ था। कलकत्ता निवासियों के लिए वह परम सौभाग्य और सुयोग था। परम पिता परमेश्वर की कृपा के फ़लस्वरुप पूज्यपाद ने सानुग्रह उपासना जैसे गहन और महत्वपूर्ण विषय पर छह दिवसीय प्रवचन किया। इन प्रवचनों का श्रवण, मनन और निदिध्यासन सुधी श्रोता समाज के लिए अविस्मरणीय, सुखद और पावन सुयोग रहा, जिससे दिव्य बोध, दिव्य संदेश और दिव्य संकेत प्राप्त हुए एवं अबाध रस-पयस्विनी में अवगाहन करने का पुण्य लाभ भी। पूज्यपाद के प्रवचनों ने अनेकानेक भ्रांतियों का निराकरण और समस्याओं का समाधान किया।

मित्रों, भक्तों व धर्म प्रेमियों की यह आकांक्षा रही कि इन प्रवचनों को प्रकाशित किया जाय, जिससे उनका लाभ अनेकानेक व्यक्तियों को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में प्राप्त हो। इसीसे पूज्यपाद स्वामीजी के प्रवचनों को शब्दशः लिपिबद्ध करने का संकल्प किया, जिन्हें प्रकाशित करके मुझे हार्दिक संतोष का अनुभव हो रहा है। मुझे विश्वास है कि इन प्रवचनों से हमारा बृहत्तर समाज उपकृत होगा। प्रवचनों को लिपिबद्ध करने में कुछ त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। आशा है कि विज्ञ पाठक इनकी ओर ध्यान न देकर पूज्यापाद के पवित्र संदेश को ही हृदयंगम करेंगे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुराणा प्रिंटिंग वर्क्स के संचालक श्रीभागचन्दजी सुराना को धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ कि उन्होंने अल्प समय में ही इसका सुरुचिपूर्ण प्रकाशन किया और हिन्दी के विख्यात कवि व चिन्तक श्री छविनाथ मिश्र का आभार मानती हूँ कि उन्होंने इसके प्रूफ आदि देखने में सहयोग दिया। अब यह पुस्तक पूज्यपाद के आशीर्वचन के साथ ही सुधी समाज के समक्ष प्रस्तुत है। वाग्वै पश्या स्वस्तिः।

अरुणा पेड़ीवाल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मंगलाचरण

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि
परासुव यद भद्रं तन्न आसुव
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

कल्याणां निधानं कलिमल मथनं पावनं पावनानाम्,
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परमपदप्राप्तयेप्रस्थितस्य।
विश्रामस्थानमेकं कविवरवचसां जीवनं सज्जनानाम्,
वीजंधर्मद्रु मस्यप्रभवतु भवतां भूतये रामनाम ॥

यस्यांके च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके,
भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट्।
सोऽयं भूतिविभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा,
शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्रीशंकरः पातु माम् ॥

वसुदेव सुतं देवं कंस चाणूर मर्द्दनम्।
देवकी परमानन्दम् वन्दे कृष्णं जगद्गुरुम् ॥

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गो ब्राह्मण हिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

नारायणं नमस्कृत्य नरंचैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ॐ

श्री राम

उपासना

उपासनाके सम्बन्धमें प्रातः कालीन प्रवचनमें विचार-विमर्श करूँ, मेरे लिए यह आनन्दकी बात है। हम सभी लोग जानते हैं कि जीवनमें जब किसी वस्तु की आवश्यकता होती है तो मानव उसे आविष्कृत करने का प्रयत्न करता है। आवश्यकता ही आविष्कार की जाननी है—यह बात बहुत पहले से पढ़ी-सुनी है और सत्य ही प्रतीत होती है। यदि मानव को सारे संसार की वस्तुओं में तृप्ति मिल जाती तो उसे किसी के भी आश्रय में रहने की आवश्यकता नहीं थी लेकिन संसार में कोई भी वस्तु बिना आश्रय के रह नहीं सकती है। एक छोटे से अनाज के दाने को भी धरती का आश्रय चाहिए। एक वृक्ष को भूमि का आश्रय चाहिए, एक भवन को भूमि का आश्रय चाहिए, कलकत्ता और बम्बई जैसी विशाल नगरी के निकट लहराते हुए उस विशाल समुद्र को भी आश्रय चाहिए। गोस्वामी तुलसीदास ने कहा—

जिमि थल बिनु जल रहि न सकाहीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जल चाहे जितना अधिक हो उसकी मात्रा पृथ्वी में ३ चौथाई है—और एक चौथाई भूभाग के ऊपर पृथ्वी दिखाई पड़ती है। इतनी विशाल जलराशि को भी कोई आश्रय चाहिए। फिर वह चाहे जितना गहरा हो, चाहे जितना विस्तृत हो, चाहे जितने बड़े बड़े पानी के भीतर कितने ही नव उद्यानों की रचनाएँ की गई हों व उसके भीतर चाहे जितनी शिलाएँ हो, चट्टानें हों; लेकिन इन सबको किसी आधार की आवश्यकता है। जैसे—प्रकृति में जो कुछ भी दिखाई पड़ता है। वह वहीं आधारित है। वैसे ही आप विचार कर देखें कि मानव जीवन भी बिना आधार के चल नहीं सकता। जिस आधार की बहुत आवश्यकता है, उस आधार से सम्बन्ध जोड़ने का काम मानव में उपासना के द्वारा उत्पन्न होता है। उपासना वह श्रेष्ठ कार्य कराती है ; नहीं तो संसार के पदार्थों का अभाव तो आज के युग के सम्पन्न व्यक्तियों के पास कहाँ दिखाई पड़ता है। यह अपनी सम्पन्नता, वैभव और धन के द्वारा जो कुछ भी चाहे, उस अर्थ में इतनी शक्ति है कि उसे प्राप्त कर सकता है ; लेकिन दुनिया में अर्थवान व्यक्ति के भीतर भी कोई सहज, अचानक, परिस्थितिवश, किसी ग्रह के कारण, मानव देह के कारण, प्रकृति के कारण और बहुत बार अनजाने कारणों से मानव के भीतर कोई सहज पीड़ा उत्पन्न हो जाती है। उस पीड़ा को कभी वह अपने मित्रों के बीच व्यक्त करता है और कभी ऐसा लगता है कि अपनी व्यथा को किसी के बीच कहने से कोई लाभ नहीं है। मुसलमात कवि अब्दुल रहीम खानखाना ने जो 'रहिमन' के नाम से प्रसिद्ध थे उन्होंने तो ऐसा ही माना है कि व्यक्ति को अपनी व्यथा संसार के लोगों के बीच नहीं कहना चाहिए। जैसे—

रहिमन निज मन की व्यथा
मन ही राखो गोय,
सुनि अठिलैहैं लोग सब
बाँटि न लैहैं कोय।

उस कवि ने कहा—अपने मन की व्यथा लौकिक लोगों के बीच में, जगत के लोगों के बीच में, कहकर उपहास का भाजन व्यक्ति को नहीं बनना चाहिए। तब एक नियम है कि जब तक आदमी अपनी व्यथा को किसी के बीच न कहे तब तक वह हल्कापन महसूस नहीं करता। उसकी वह व्यथा जीवन पर बोझ की तरह बैठी रहती है, इसलिए सहज मन करता है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि अपनी व्यथा किसी से कहें। तब उस व्यथा को आप अपना बहुत अंतरंग मानते हैं। अपने अन्तरंग जीवन में जिसे आप बहुत निकट मानते हैं, अपनी पीड़ा का कथन उस व्यक्ति से किया जा सकता है। इसलिए कि उस पीड़ा का थोड़ा बोझ हल्का हो जाय। लेकिन संसार में सबसे निकट कौन है सबसे अधिक निकट कौन है? इसे जानने का प्रयत्न है। आज के इस व्यस्त युग में जहाँ आदमी को अवकाश नहीं है। भागना दौड़ना ही एक जीवन बन गया है ऐसे समय में पता लगाना व्यक्ति के लिए कठिन हो गया है कि संसार में सबसे अधिक निकट कौन है? कोई अपने पुत्र को निकट मानता है, कोई पत्नी को मानता है, भाई को मानता है, कोई मित्र, कोई कोई राजनैतिक नेता को कोई संत गुरु को निकट मानता है यह सभी ठीक होंगे। लेकिन यदि विचार करें तो पता लगेगा कि ये भी कुछ दूर हैं। इनसे भी निकट कोई है संसार में। और संसार में सबसे अधिक निकट वह है जिसने आपका और मेरा जीवन निर्मित किया है। वह है परमात्मा। परमात्मा सबसे अधिक निकट है संसार में। इसलिए परमात्मा का एक नाम विद्वान महापुरुषों ने अन्तर्यामी दिया है। किसी राजनेता का, किसी परिवार के स्वजन या माता पिता या गुरु का, विद्वानों ने नाम अन्तर्यामी नहीं रखा; लेकित अन्तर्यामी नाम रखा है परमात्मा का। इसलिए यदि विचार करके देखते हैं तो परमात्मा संसार में सबसे निकट है जो कि अपने हृदय में ही, अपने स्पन्दन में, अपनी चेतना में विराजमान है। मानव को शक्ति कौन प्रदान करता है? वह अव्यक्त, अगोचर, सर्वशक्तिमान परमात्मा है। उसकी कोई तरंग इस मानव की बुद्धि को उद्वेलित करती है, प्रेरित करती है। उसमें एक सहज सी क्रान्ति उत्पन्न करती है, जिससे अपनी उस बुद्धि के कारण मानव परिस्थितियों को समझता है। भविष्य को समझता है। अपने जीवन के उन प्रसुप्त तत्वों को जाग्रत करने का प्रयत्न करता है जिससे उसका जीवन मंगलमय और प्रेम से परिपूर्ण हो जाय। उस बुद्धि का प्रदाता कौन है, तो दिखता है कि बुद्धि संसार में केवल परमेश्वर के द्वारा ही प्राप्त होती है। संसार के सबसे बड़े से बड़े सामर्थ्यवान व्यक्ति को और सम्पन्न व्यक्ति को यह सामर्थ्य नहीं है कि वे अपने उत्तराधिकारी को बुद्धि प्रदान कर सकें। वह धन प्रदान कर सकता है, सुविधाएँ प्रदान कर सकता है; लेकिन बुद्धि प्रदान करने का कार्य तो केवल परमात्मा के द्वारा ही हो सकता है। यदि बुद्धि प्रदान करने का काम भी सम्पन्न और वैभववान व्यक्ति के हाथ में आ जाता तो आप निश्चित मानिये कि फिर वह बुद्धि, सम्पन्न व्यक्तियों के हाथ की वस्तु होती।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फिर गरीव घर में उत्पन्न होनेवाला, झोपड़ी में उत्पन्न होनेवाला अत्यन्त विपन्न किसी कुटीर में उत्पन्न होने वाला कोई व्यक्ति अपनी बुद्धि के प्रदर्शन के द्वारा ज्ञान की और कला की कोई भी विधा, कोई भी नई वस्तु नहीं दे पाता। क्योंकि फिर तो सम्पन्न व्यक्ति का ही सारा अधिकार हो जाता। अतः बुद्धि सारे संसार की परमात्मा के द्वारा ही मिलती है, चाहे वह विपन्न हो चाहे वह सम्पन्न हो। भगवान श्रीकृष्ण ने इस बात को गीता में कहा भी है—

'ददामि बुद्धियोगं तम् येन माम् उपयान्ति ते'

मानव को उस बुद्धि योग को मैं प्रदान करता हूँ। पहुँचिये वहाँ कि यह बुद्धि मानव को मिलती कैसे है? वह इसे कैसे अधिक प्राप्त कर सकता है। वैसे तो सबकी समान बुद्धि पूर्व जन्मानुसार लोगों को अलग अलग अपने अपने संस्कारों द्वारा मिली; किन्तु इतिहास में ऐसे कई प्रमाण मिलते हैं जिन्होंने अपनी बुद्धि का भी विकास किया है। अपनी बुद्धि का विकास मानव कैसे कर सकता है? उस बुद्धि के विकास में उपासना वहुत सहायक है। उपासना का अर्थ जानें कि उपासना का अर्थ है क्या। उप शब्द का अर्थ संस्कृत में होता है 'निकट' और 'आसन' का अर्थ होता है बैठना। अभी हम सब परमात्मा का नाम तो लेते हैं, मंदिर भी जाते हैं, पूजा-पाठ भी करते हैं, विद्वानों के प्रवचन भी सुनते हैं; लेकिन मेरी और आपकी यह कठिनाई है कि हम परमात्मा के साथ बहुत निकट बैठकर अपना आसन नहीं लगा पाते। हम परमात्मा से बौद्धिक दृष्टि से बहुत निकटता का अनुभव नहीं कर पाते। और आपने देखा होगा लौकिक जगत में उपासना का वह स्वरूप जिसमें दौड़ता हुआ एक छोटा सा शिशु आता है। वह दौड़कर आता है, उस समय वह यह भूल जाता है कि मेरी माता किसी बहुत बड़े विश्वविद्यालय की कुलपति है और मेरी माता के पास बहुत सारे अध्यापक सीखने आते हैं, मेरी माता दस पन्द्रह हजार विद्यार्थियों की संस्था की प्रधान है। इन सब बातों का बिना विचार किये एक दो वर्ष का शिशु दौड़ता-दौड़ता आया और आने के बाद अपनी माँ के अंक में उलझ-उलझकर बड़े प्यार से बैठ जाता है। उस समय माँ भूल जाती है कि मैंने ४ विषयों में एम० ए० किया है और मैंने २ विषयों में पी० एच० डी० किया है और मैं इतनी बड़ी अधिकारिणी हूँ। इन सब विषयों का विस्मरण कर देती है और उस बालक को इतने प्यार से अपने दोनों हाथों से उठाते हुए पूरा वात्सल्य रस उसके भीतर जग जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और उस वात्सल्य रस को उड़ेलने के लिए वह विवश हो जाती है। हमने कभी सोचा कि ऐसा क्यों होता है? इसलिए होता है कि माँ की महिमा वह याद नहीं रखता। उसे केवल इतना ही ध्यान रहता है कि वह मेरी माँ है और उस माँ के पास जाने से उसकी उपासना सिद्ध हो जाती है, जब वह उसकी गोद में बैठता है। कितने निकट? इतने निकट बैठता है कि दूरी समाप्त। और जब दूरी समाप्त हो जाती है तब माँ का हृदय भी उद्वेलित होता है और वह अपने नन्हें शिशु को अपने हृदय से लगाकर एक ऐसे अनिर्वचनीय सुख का अनुभव करती है, जिसे शब्द और भाषा कभी व्यक्त नहीं कर सकते। माँ के द्वारा प्रदान किये गये वात्सल्य रस का वर्णन माँ नहीं कर सकती और माँ के द्वारा जिस छोटे से बेटे को, इस माँ का वात्सल्य मिला है वह भी उस वात्सल्यरस के सुख का वर्णन नहीं कर सकता है।

हम परमात्मा की औपचारिक रूप से पूजा में तो अवश्य सजग हैं क्योंकि वह हमारे संस्कार हैं। हमारे माता, पिता, गुरु, पंडित और पुरोहित ने गाँव के अच्छे लोगों ने बार बार कहा मन्दिर जाओ और प्रणाम करो। बहुत अच्छी बात है। किसी संस्कारी समाज में ऐसा होना भी चाहिए लेकिन उपासना मानव की इन औपचारिकताओं को भी तोड़ देती है। जब मानव औपचारिकता से भी दूर चला जाता है तब उसके भीतर एक सहजता जाग जाती है। उप माने 'निकट' और आसन माने 'बैठना'। परमात्मा के निकट बैठने की बात जब प्रारम्भ हो जाय तब परमात्मा का जो सहज तत्व है वह सत् है, चित् है, आनन्द है; समस्त संसार के गुणों का परिपूर्ण कोष है। उस परमात्मा के वह सारे सद्गुण और परमात्मा का वह आनन्द तत्व उभरने लगता है। किसी पात्र में कोई वस्तु रखी हो लेकिन वह सब अपनी सीमा तक पहुँच जाय तो उसे अपने आप ही बाहर गिरने की इच्छा होती है। वह अपने आप छलकने लगता है। परमात्मा परिपूर्ण है। उसके मन में कभी कोई विक्षोभ नहीं होता। किन्तु कोई उपासक परमात्मा की उपासना का सचमुच लाभ प्राप्त करता है तो वह सच्चिदानन्द परमात्मा भी सगुण साकार बनकर अपने उस आनन्द के छलकाव में अपना ही विस्मरण कर देता है और अपने छलकते हुए उस आनन्द को किसी पात्र के भीतर-भगवान रामकृष्ण परमहंस जैसे सत्पुरुष के भीतर, भगवान आदि शंकराचार्य जैसे महापुरुष के भीतर, मीरा जैसी मतवाली उस राजरानी भक्तिमती के भीतर, सुदामा जैसे दरिद्र के भीतर, रैदास जैसे कर्मयोगी के भीतर, अपने उस आनन्द के छलकाव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को, विवश होने के कारण वहाँ बहा देता है। थोड़ी सी ही बूँद व करुणा की धार वहाँ पहुँचती है लेकिन जिस बड़-भागी के भीतर उस करुणा की धार ने अपनी करुणा कर दी, वह व्यक्ति तो इतिहास का पुरुष वन जाता है। फिर वह ब्राह्मण हो, क्षत्रिय हो, तुलाधार वैश्य हो। किसी समय में २०-२५ वर्ष पूर्व निष्पक्ष दृष्टि से संतों के मुख से मैंने जिनकी प्रशंसा होती सुनी है, ऐसे कल्याण के सम्पादक भाई श्री हनुमान प्रसादजी पोद्दार बड़े सज्जन व्यक्ति थे। संत जीवन को चरितार्थ करने के लिए कटिवद्ध थे। इस प्रकार बीच बीच में ऐसे मनुष्य आते हैं। वे विरक्त भी होते हैं और गृहस्थ भी होते हैं और इसलिए आते हैं कि जिससे लोगों को यह मालूम हो कि उपासना करने से समाज के लिए आदमी निरुपयोगी नहीं हो जाता। उपासक किसी गुहा में वैठकर, आत्मानन्द में अलमस्त होकर, एकाकी जीवन जीता हुआ समाज के लिए निरुपयोगी हो जायेगा, इस प्रकार की मान्यता को खण्डित करने के लिए भगवान कभी कभी समाज के बीच में ऐसे लोगों को भेजते हैं, जो उपासना की सिद्धि करते हैं और समाज देवता की भी उपासना करते हैं। उपासना से व्यक्ति के भीतर एक ऐसी शक्ति जागती है कि जिसके निकट वह वैठा हो एक वार वह करुणा न करे। किसी आदमी की, किसी राजा से निकटता हो जाय और वह राजा उदार हो तो वड़ी अच्छी बात है—क्योंकि उसकी उदारता से उस व्यक्ति को लाभ होगा। लेकिन किसी व्यक्ति ने किसी राजा से मैत्री की, और वाद में पता चला कि जिस राजा से मेरी मैत्री है वह तो अत्यन्त कृपण स्वभाव का है तो वह सोचेगा कि किसी उदार राजा के साथ मैत्री की होती तो अच्छा होता। एक राजा की मैत्री कृपणता के कारण व्यक्ति को लाभमयी नहीं हो सकती है। किन्तु उपासना एक वार यदि गुण और परमात्मा दोनों की इच्छा न हो तो भी उस इच्छा में भी परिवर्तन ला देती है। इतिहास की घटना का स्मरण दिलाऊँगा—वड़ी प्रचलित है। आप सवको मालूम है लेकिन उसे इस सन्दर्भ में देखने का यत्न करेंगे तो अधिक लाभ हो सकेगा।

एक छोटे से वहुत ही प्रतिभाशाली भील कुमार के मन में जंगल में रहते रहते यह विचार आया कि मैं भी धनुर्विद्या में पारंगत हो जाऊं तो किसी गुरु के पास जाऊँ। जब ऐसा विचार जागा तो उसने सुना कि द्रोणाचार्य इस समय देश के सबसे बड़े धनुर्विद्या के आचार्य हैं तो मुझे वहाँ जाना चाहिए। जब वह वहाँ गया तो उसने आश्रम देखा। देखकर वहुत निराश हुआ क्योंकि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वहाँ तो धनाढ्य लोगों के राजकुमार धनुर्विद्या सीखने आते थे। उसने देखा मैं तो गरीब कुल में उत्पन्न हुआ हूँ। मेरी प्रशंसा करने वाला कोई नहीं। मेरा परिचय कराने वाला कोई नहीं, गुरु के पास जाकर कहे कि इसको भी दीक्षा दो इस प्रकार की कोई मेरे लिए अनुशंसा करने वाला कोई व्यक्ति दिखाई नहीं पड़ता। लेकिन चलो मैं ही अपने आप चलूँ। और अपनी इस बलवती आकांक्षा को लेकर प्रकृति के पावन रम्य राज्य में निर्मित, पर्णकुटी के सुन्दर दिव्य वातावरण में, उद्यान के बीच में ज़हाँ द्रोणाचार्य विचार-विमर्श कर रहे थे अपने सम्पन्न राजकुमारों के द्वारा वहाँ अपने साधारण से वस्त्रों में यह बालक पहुँचा। उसने प्रणाम किया। प्रथम दृष्टि में द्रोणाचार्य उस बालक की प्रतिभा से आकर्षित हो गये। जो जिस विद्या का आचार्य होता है उसे उस विद्या में पारंगत विद्यार्थी को पहचानने में देरी नहीं लगती। थोड़ी सी बातचीत करने से भी उसे उसकी प्रतिभा का ज्ञान हो जाता है। ज्योतिषी ज्योतिषी को पहचान लेता है संगीतज्ञ, संगीतज्ञ को पहचान लेता है। अर्थपति अर्थपति को जानता है। संसार में समान कला को जानने वाले लोग एक दूसरे को पहचानने में अधिक विलम्ब नहीं लगाते हैं। द्रोणाचार्य ने अनेक विद्यार्थियों को पढ़ाया था। अनेक लोगों को दीक्षित किया था। इस विपन्न कुल से आये हुए इस साधारण से बालक को देखकर मन में स्फुरणा हुई कि यह बहुत संस्कारी है। पास बैठाया पीठ पर हाथ फेरा। उसे वात्सल्य मिला, करुणा मिली, बड़ा प्रसन्न हुआ सोचता था वहाँ मेरी गति नहीं है किन्तु फिर भी इतना प्यार मिला तो वह उसके लिए बहुत बड़ी सम्पत्ति थी। एकान्त पाकर उसने अपना प्रस्ताव रखा। द्रोणाचार्य ने कहा मैं विवश हूँ बेटा, मैं तुम्हें धनुर्विद्या का ज्ञान नहीं दे सकूँगा। क्योंकि यदि ऐसा करूँगा तो मेरा एक बहुसंख्यक समाज है और जो बहुत सम्पन्न समाज है—मैं उससे कट जाऊँगा, इसलिए मैं तुम्हें अपना ज्ञान नहीं दे पाऊँगा। उसने कहा गुरुदेव मुझ पर इतनी तो कृपा करें कि मुझे अपना उपासक बन जाने दें एक दो घण्टे के लिए। मैं आपके निकट केवल अपना आसन लगाकर बैठूं और आप का ध्यान कर सकूँ दो घण्टे के लिए, इतना अवसर आप दें। द्रोणाचार्य ने सोचा इसकी प्रार्थना तो मान्य करनी चाहिए। ऐसा विचार करने के बाद उन्होंने कहा कि मध्याह्नोत्तर आना। उस समय मेरे पास इतना समय रहता है कि मैं बैठूँगा। दो घण्टे के लिए द्रोणाचार्य विराजमान हो गये और उस छोटे से बालक ने उनके निकट अपना आसन लगाकर उनके भव्य विग्रह पर, देह के ऊपर, देहयष्टि के ऊपर, उनके सारे अवयवों के ऊपर, उनकी-प्रतिमा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के ऊपर, ज्ञान के ऊपर, अपना ध्यान बार-बार केन्द्रित किया। ध्यान केन्द्रित करने के बाद दो घण्टे का समय पूर्ण हो गया। गुरुदेव ने कहा—'बेटा अब तुम जा सकते हो।' उसने प्रणाम किया और ऐसा लगा कि मानो पूरी विद्या का उसने दोहन किया हो। चित्र तो उसने उतारा ही अपने मस्तिष्क में, लेकिन यह पहली बार दुनिया का कोई कम्प्यूटर, कोई यन्त्र, कोई उपकरण ऐसा कार्य करने में आज तक समर्थ नहीं है जो किसी की आन्तरिक विद्या का दोहन कर ले। लेकिन वहाँ एक छोटा सा विद्यार्थी, साधारण जंगल के भील परिवार का एक बालक, उपासना के द्वारा अपने मन की वृत्तियों का एकत्रीकरण करने के बाद पूरी तरह से एकाग्र होकर अपने उस गुरु की विद्या का दोहन कर रहा हैं! जैसे सायंकाल गायें आती हैं चरकर और ग्वाला दुग्ध का दोहन करता है और पात्र में रखता है उस पात्र को बाजार में ले जाकर छोटे-छोटे नपनों के द्वारा नाप नाप कर अपने ग्राहकों को देता है; लेकिन सन्ध्या को दिन भर की चरी हुई तृप्त गाय का दोहन करना उन ग्वालों का प्रथम कार्य होता है। फिर बाजार में जाकर उस पोषक दुग्ध का वितरण करना उनका दूसरा काम होता है। आज यहाँ ठीक उसी प्रकार से जीवन भर अपने ज्ञान के कोष को एकत्रित करके ऋषि के सामने बैठकर वह भीलकुमार ग्वाला बनकर अपने गुरु की सारी प्रतिभा का अन्तर ही अन्तर से अपने हृदय पात्र में दोहन कर रहा है और द्रोणाचार्य को पता नहीं है। उन्हें मालूम नहीं कि मेरे कोष में से यह कुछ लेकर जा रहा है। ऐसा गुप्त दोहन संसार में किसी ने किया हो, ऐसा एक ही व्यक्ति दिखाई पड़ता है। और वह है एकलव्य। गया, और तालाब से मिट्टी लाया, द्रोणाचार्य का मुख बनाया, केश बनाये, नेत्र बनाये, हाथ बनाये, वैसा ही सुन्दर स्वरूप और फिर गुरु को प्रणाम करके कहता है 'अब धनुष के ऊपर प्रत्यंचा चढ़ाऊँ? अब डोरी खींचूँ? ऐसा लगता है कि द्रोणाचार्य अपनी गर्दन हिलाकर कर रहे हैं हाँ बेटा अब प्रत्यंचा चढ़ाओ। 'अब मैं धनुष पर बाण खींचूँ?' ऐसा लगता है कि द्रोणाचार्य कह रहे हैं कि यह कोण ठीक नहीं है, इस कोण से तुम अपने लक्ष्य का वेध नहीं कर सकोगे। उसे ऐसा लगा कि मानो द्रोणाचार्य हर पल उसे बता रहे हैं, उसे इंगित कर रहे हैं कि यह ठीक है, यह ठीक नहीं है। 'हाँ, हाँ, बड़ा अच्छा है, इससे तुम्हारी यह कार्य सिद्ध हो जायेगा।' कई वर्ष बीत गये। कल्पना भी नहीं की थी। एक श्वान जा रहा था। उसने अपने तूणीर में से निकाल कर बाण मारे और ऐसे मारे कि उसके भीतर से रक्त नहीं निकला और मुँह खुला का खुला रहकर बाणों से भर गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्वान भागता जा रहा है और द्रोणाचार्य के आश्रम से निकला। पाण्डवों ने, कौरवों ने, अन्य राजकुमारों ने देखा कि इतने वाण लगे हुए हैं इसके मुख में, पर रक्त नहीं निकल रहा है। इतने सधे हुए हाथों से वाण लगे हैं, कि माँस के भीतर कोई भी वाण न लगने पाये। इतने सहज कोमल हाथों से अपनी धनुर्विद्या का प्रयोग करनेवाला ऐसा अद्भुत आचार्य कौन होगा? चारों तरफ खोज होने लगी। खोज होते होते एक छोटी सी कुटीर के आगे द्रोणाचार्य की मूर्ति, मूर्ति को प्रणाम करता हुआ एक विद्यार्थी दिखाई दिया। प्रणाम करके अपनी विद्या का प्रयोग करता हुआ युवक दिखाई पड़ा। लोग उसको ले आये। उसने द्रोणाचार्य को प्रणाम किया। द्रोणाचार्य ने कहा—'तुमने श्वान के मुख में ये वाण मारे थे?' 'हाँ गुरुदेव।' 'तुम्हें अपनी कला में इतनी पारंगतता कैसे मिल गई'? युवक ने कहा—'जीवन में एक ही वार तो उपासना की थी। अनेक वार उपासना की होती तब तो कहना ही क्या था। पर आपने मुझे अवसर ही कहाँ दिया महाराज। आपने मुझे एक ही वार अवसर दिया और मुझसे कहा था कि दो घण्टे मेरे निकट बैठकर तुम्हारी श्रद्धा से तुम जो चाहो ले सकते हो। एकलव्य ने कहा—'गुरुदेव उस दो घण्टे की उपासना में मैं जितना दोहन कर सकता था मैंने किया, और आपकी कृपा और आशीर्वाद से इस विद्या में मुझे पारंगतता और नैपुण्य की प्राप्ति हुई है'। घटना बड़ी पुरानी है। एक प्रेरणा की वात है कि यदि मानव परमात्मा की उपासना के लिए ५ मिनट भी नित्य बैठे किन्तु इस ५ मिनट में उसे ऐसा लगे कि अब और किसी के निकट मैं नहीं बैठा हूँ; क्योंकि भगवान की एक ही कठिनाई है कि जब कोई व्यक्ति अन्य के साथ बैठे तो उनको उतना अच्छा नहीं लगता है। ठीक वो तो वैसा ही हो जैसे एक म्यान में दो तलवार नहीं रह सकती। वैसे ही परमात्मा जब भक्त के साथ रहना चाहता है, साधक के साथ रहना चाहता है तब उसकी अपेक्षा ध्यान के काल में होती है उपासना के काल में होती है कि अब वह इतनी देर मेरे ही साथ रहे। संसार के साथ में रहते हुए यदि हम परमात्मा को सदा साथ रखें तो वहुत अच्छी वात है। लेकिन जब आप उपासना के निमित्त बैठे हैं तब यह प्रयास होना चाहिए कि मनुष्य वास्तव में परमात्मा के इतने निकट हो कि उसके बीच में कोई आवरण, कोई पतला सा भी आवरण शेष न रह जाये और वह निरावृत उपासना का काल परमात्मा की निकटता और परमात्मा की एकता का अनुभव कराता है। मैंने निवेदन किया आपसे कि परमात्मा से अधिक निकट कोई नहीं। क्योंकि अत्यन्त विपत्ति के क्षणों में कई भक्तों का, कई उपासकों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का यह अनुभव है कि मानव के उस उपासना के क्षणों में जब गहन विपत्ति के क्षण आयें तब कोई सहायता करनेवाला दिखाई नहीं पड़ता। और जब कोई सहायता करनेवाला नहीं दिखाई पड़ता तब उस समय आर्द्र हृदय से, रिक्त हृदय से, रिक्त बुद्धि से, रिक्त जीवन से पूरी प्राण शक्ति से परमात्मा का स्मरण करता है। ऐसा योगशास्त्र में वर्णन आया है कि प्राणों को सूक्ष्म करके मानव यदि अपनी देह को उठाने का यत्न करे तो यह देह भी उठ जाती है और आसनोत्थान होता है। महर्षि अरविन्द के जीवन में ऐसा होता था। उनके निकट के साधकों ने ऐसा होते देखा है। प्राचीनकाल के ऋषि प्राणायाम के द्वारा अपने प्राणों को सूक्ष्म करके एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रकट होने की शक्ति भी रखते थे। अब वे सारी विद्याएँ विलुप्त हो गई हैं; लेकिन हमें इसकी आवश्यकता भी नहीं है। कारण इतने सालों तक प्राणों का उत्क्रमण करें और फिर कलकत्ता से दिल्ली पहुँचने का यत्न करें तो फिर यह सारी एयर बस और विमान बन्द हो जायेंगे और फिर इंडियन एयर लाइन्स का क्या होगा? इसलिए यह सब करने की जरूरत नहीं। लेकिन प्राणों के उत्क्रमण से मानव इतना सूक्ष्म होने का प्रयत्न करता जाये कि परमात्मा की निकटता का अनुभव होने लगे। और परमात्मा की निकटता का अनुभव ही मानव के जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है। सबसे बड़ी उपलब्धि क्या है यह तो आपने ज्ञात कर लिया होगा, और यदि ज्ञात नहीं है तो ज्ञात कर लेना चाहिए। मनुष्य जब कोई भवन बनाता है तो वह यह जानता है कि मैं भवन इसलिए बना रहा हूँ कि मैं इसमें रहूँगा। वह वस्त्र बना रहा है तो वह जानता है कि वस्त्र इसलिए बना रहा हूँ कि मैं इसे पहनूँगा। यदि वह आभूषण बना रहा है तो वह जानता है उससे अपना शृंगार करूँगा। यदि वह भोजन की थाली पर बैठा है तो वह जानता है कि इससे मैं अपनी भूख की निवृत्ति करूँगा। मानव का जीवन मिल गया। अब मानव भी कम से कम अपने से पूछे कि मैं क्यों जी रहा हूँ। मैं क्यों व्यापार कर रहा हूँ, क्यों मैं स्वजनों के साथ और समाज के साथ सम्बन्ध स्थापित कर रहा हूँ। यदि यह पहला प्रश्न अभी नहीं जगा है तब तो बड़ी कठिनाई है क्योंकि वह गंतव्यहीन जीवन जी रहा है। व्यक्ति चल रहा हो और उसे यह मालूम न हो कि मुझे कहाँ पहुँचना है तब तो यह उस व्यक्ति की सबसे बड़ी अज्ञानता का ही स्वरूप होगा। इसमें उसके जीवन की नादानी और नासमझी प्रकट हो जायेगी। इसलिए देश के विचारकों और बड़े-बड़े विद्वानों ने मानव से कहा कि जैसे ही मानव का जीवन मिले और थोड़ी सी प्रज्ञा— बुद्धि और मति आये उस समय व्यक्ति को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूछ लेना चाहिए अपने आप से—कि आप संसार में क्यों आये। जिस व्यक्ति ने अपने से यही नहीं पूछा कि मैं क्यों आया हूँ और मेरा गंतव्य क्या है, तब तो उसके लिए बड़ी कठिनाई है। उसके पास पैसा भी है—वस्तुएँ भी हैं—समाज में प्रतिष्ठा भी है और उसे यदि यही ज्ञात न हो कि मुझे जाना कहाँ है तो इस कठिनाई को दूसरा कौन सा व्यक्ति दूर कर सकता है? यह तो अपनी कठिनाई है। व्यक्ति की कठिनाई है। व्यक्ति की कठिनाई को तो व्यक्ति को ही सुलझाना होगा। इसमें बाहर से कौन आपकी मदद कर सकता है। किसी आदमी के पास पैसे भी हैं, स्टेशन पर पहुँच भी गया है, जहाँ से टिकट मिल रहे हैं वहाँ खड़ा भी है और टिकट बाँटने वाले आदमी के सामने पैसे भी रख दिये हैं उसके बाद जब टिकट बाँटने वाला पूछता है कि आपको कहाँ की टिकट दें तो आप कहते हैं कि यह तो तुम जानो कि कहाँ का टिकट देना है। मैंने तुम्हें पैसे दे दिये हैं। वह बड़े असमंजस में होगा। पैसे गिन कर देखता है कि २०० किलोमीटर के इसने पैसे दिये हैं। फिर वह पूछता है कि २०० किलोमीटर की यात्रा मैं करा सकता हूँ। इतनी सामर्थ्य आपकी मुट्ठी में थी और वह आपने मुझे समर्पित कर दी है लेकिन बन्धु, मेरी कठिनाई यह हैं कि मैं तुम्हें पूर्व भी पहुँचा सकता हूँ पश्चिम भी, उत्तर की ओर भी पहुँचा सकता हूँ और दक्षिण की ओर भी पहुँचा सकता हूँ। आपको किस दिशा में जाना है। तब आप फिर कहते हैं कि तुम्हीं बताओ कि किस दिशा में मुझे जाना है। तब वह यही कहेगा कि मेरी खिड़की छोड़ो—बहुत सारे लोग खड़े हैं। तुमसे इस समय ज्यादा बात करने का मुझे समय नहीं है। कई बार मानव के पास धन भी है मानव के पास विद्या भी है साधन भी है सम्पत्ति और प्रतिष्ठा भी है; मान भी हैं; लेकिन वही कठिनाई है कि गन्तव्य क्या है। जीवन मिला क्यों है? सबसे बड़ा प्राप्तव्य क्या है? प्राप्तव्य के मध्य आनुषंगिक बहुत सारे प्राप्तव्य हो सकते हैं। बदरीनाथ जाते समय ऋषिकेश में भी रुका जा सकता है, और हरिद्वार में भी रुका जा सकता है। वाराणसी में भी रुक सकते हैं और पाण्डुकेश्वर में भी रुक सकते हैं। लेकिन गन्तव्य तो है बदरीनाथ। जैसे बदरीनाथ जाने वाला व्यक्ति मार्ग के अनेक आयामों में से एक दो आयाम को इसलिए स्वीकार करता है कि जाना तो है तीर्थ में। कई दिनों से संकल्प कर रखा है। वैसे ही हम लोग जगत में आये हैं। इसलिए गृहस्थ आश्रम में भी रुक सकते हैं, वानप्रस्थ में भी रुक सकते हैं, और संन्यास में भी रुक सकते हैं। धन, वैभव, प्रतिष्ठा में भी रुक सकते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं। लेकिन ये सब बीच के आयाम हैं और इन आयामों को यदि सत्य मान लिया गया तो बड़ी कठिनाई हो जायेगी। गन्तव्य विस्मृत हो जायेगा। गन्तव्य यदि विस्मृत हो जाय और मानव अपने आयाम को ही गन्तव्य मान ले तो यह बहुत बुद्धिमानी की बात नहीं होगी। उपासक को सबसे पहले यह जान लेना चाहिए कि जिसकी उपासना करने वह जा रहा है, जिसके निकट बैठने जा रहा है, जिसकी समीपता साधने जा रहा है उसमें वह सब कुछ है, जो मैं पाना चाहता हूँ ? नहीं तो बड़ी निराशा होगी। किसी व्यक्ति ने ऐसा मान लिया कि मुझे यहाँ से सब कुछ मिलेगा और बहुत समय तक उसके साथ रहनेके बाद उसका भ्रम टूट गया तो बड़ी पीड़ा होगी। दो नुकसान होंगे। दो गलतियाँ होंगी। एक तो समय चला जायेगा। दूसरा विश्वास जब टूटता है तो उस विश्वास को जोड़ने में बहुत समय लग जाता है। मानव को यह प्रयास करना चाहिए कि उसके विश्वास पर आघात न लगे। ऐसा उपास्य तत्व ढूँढ़ना चाहिए कि जिससे उसके जीवन की ज्वाला, जीवन का संताप नष्ट हो जाये। आज सारे संसार में तो संताप की बड़ी भयंकर आँधी चल रही है। इस भयंकर आँधी के बीच अपने उपास्य तत्त्व की सारी महिमा को पहले जान लेना चाहिए और तब उपासना प्रारम्भ करनी चाहिए। अपने उपास्य तत्व के सम्बन्ध में सारी जानकारी बुद्धिमान व्यक्तियों से, अनुभवी व्यक्तियों से, शास्त्रों से और स्वयं के पुरुषार्थ से किंचित जान लेनी चाहिये। फिर उसकी उपासना कभी विचलित नहीं होगी। और उपासना विचलित नहीं होगी, तो उपास्य को भी उपासक पर दया आयेगी। जब आदमी कठिन परिस्थितियों में भी विचलित नहीं होता है तब उस समय जिसकी उपासना वह कर रहा है, उसके भीतर अपने आप ही करुणा जागती है। उसकी करुणा में छलकाव आता है, और उस करुणा के अनेक अमृत विन्दु उपासक के ऊपर अपने आप पड़ जाते हैं, जिससे वह धन्यता का या तृप्ति का अनुभव करने लगता है। यह तो निश्चित बात है कि लौकिक और पदार्थजन्य सुख का जितना अनुभव भी आप कर लें, वह महापुरुषों का अनुभव है कि एक सीमा तक जाकर ये आपको छोड़ देंगे। यदि वहाँ से आगे के गन्तव्य का ज्ञान नहीं है तो उसी सुख की सीमा में पहुँचकर लोटते-पोटते, रमण करते, आसक्त होते जीवन समाप्त कर लेंगे। लेकिन जीवन की कोई छटपटाहट जीवित रह जायेगी। इस व्यथा का निरसन नहीं हो पायेगा। इतिहास इस बात का साक्षी है। बिना किसी से माँगे हुए, भरतलालजी को चक्रवर्ती साम्राज्य मिल गया था। जब वे अयोध्या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आये हैं तब उन्हें ज्ञात हुआ है कि चक्रवर्ती साम्राज्य उनके पिता, उनकी माँ को वरदान में दे गये हैं और माँ ने सारा बल छल करके उनके लिये यह व्यवस्था की है। उन्हें मालूम था कि यदि कल वे स्वर्ण सिंहासन पर बैठ जायें तो अयोध्या के लोग उन्हें दोष तो देंगे नहीं। क्योंकि उन्होंने तो इसके लिए कोई प्रयत्न किया नहीं। स्वप्न में भी उनकी इच्छा नहीं थी कि वे चक्रवर्ती सम्राट बनें। इसलिए कोई उन्हें दोष नहीं देगा। 'मुझसे तो सब लोग आग्रह कर ही रहे हैं इसलिए मुझे क्या? मुझे तो चक्रवर्ती सम्राट बन ही जाना चाहिए'। बड़ा मन्थन किया। 'यदि मैं चक्रवर्ती सम्राट बन भी जाऊँ तो मुझे देखना यह है कि मेरे भीतर जो ज्वाला जल रही है, जो एक संतापकी अवस्था का मैं निरन्तर अनुभव कर रहा हूँ, वह संताप की अवस्था मेरी मिटेगी या नहीं? यदि वह संताप मिट जाये तब तो मुझे राज्य अवश्य स्वीकार करना चाहिए। यदि राज्य के इतने बड़े स्वर्ण सिंहासन पर बैठने के बाद भी मेरा संतप्त मन शीतलता का अनुभव नहीं करे, तो फिर मैं इस राज्य को लेकर क्या सुखी हो पाऊँगा?' ऐसा एक प्रश्नवाचक चिन्ह भरतलालजी ने अपने ऊपर स्वयं लगाया। लोगों ने बहुत समझाया, बहुत हठ किया। तब उन्होंने कहा कि आपलोग मुझे क्यों राजा बनाना चाहते हैं? उन्होंने कहा माता ने तुम्हारे लिए वरदान में माँगा है। दशरथजी ने दिया है। और जब दिया है तब आप बैठो! भरतलालजी ने कहा—आप सबको अपनी चिन्ता है! आप तो बड़े सुख से रहोगे।

तब उन्होंने अपनी उस व्यथा का वर्णन केवल एक पंक्ति में किया। और उन्होंने कहा कि भाई अयोध्या के लोगों जरा मेरे ऊपर दया करो। तुम अपने राज्य संचालन की चिन्ता में हो लेकिन मैं बहुत कष्ट में हूँ। व्यथा से जला जा रहा हूँ। मेरे ऊपर तो इतनी उष्णता है, इतनी जलन है कि :—

'देखे बिनु रघुवीर पद
जिय कै जरनि न जाय।

भगवान के दर्शन की लालसा व्यक्त करते हुए भरतलालजी ने ये पंक्तियाँ कहीं। बहुत पुरानी पंक्ति है। पर आज के सन्दर्भ में देखने का प्रयत्न करें कि चाहे जितनी भी वस्तुओं के मध्य हम और आप हों; लेकिन जबतक मानव जीवन में उपासक बनने का प्रयत्न नहीं करेगा तब तक वस्तुएँ मिल आयेंगी लेकिन ताप शमित नहीं होगा। मानव पूर्ण सन्ताप रहित हो जाये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके लिए सचमुच उपासना की बड़ी आवश्यकता है। एक बात और स्मरण रखें कि उपासना और भक्ति, यह दोनों कहीं कहीं पर्यायवाची शब्द हैं। उपासना ही अन्त में भक्ति बन जाती है। उपासना ही भक्ति का स्वरूप ग्रहण कर लेती है, और फिर उपासना और भक्ति में बहुत अन्तर नहीं रह जाता। इसलिए मानव को आज यह देखने का प्रयत्न करना है कि सबसे निकट कौन है, और उसकी निकटता कैसे साधी जा सकती है? उसकी निकटता साधने के बाद व्यक्ति को मिलता क्या है और जीवन का वास्तविक लक्ष्य क्या है। हमारे चलने का गन्तव्य क्या है? जीवन का ध्येय क्या है? जब मानव का कोई ध्येय रहता है तब उस ध्येय की तृप्ति के लिए कुछ छोड़ना पड़ता है और कुछ ग्रहण करना पड़ता है। श्रीमद्‌भगवत् गीता में तीन बस्तुओं का परित्याग करने की बात कही गई है। कामः क्रोधः तथा लोभः तस्मात् एतत् त्रयं त्यजेत्। इन तीन वस्तुओं के परित्याग करने के लिए १६ वें अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन के माध्यम से मुझे और आपको संदेश दिया है। क्योंकि व्यक्ति उपासक बनना चाहता है तो स्वाभाविक है कि वह कुछ अधिक निर्मल होना चाहिए। यदि नहीं भी हो तो उस निर्मलता की ओर चलने का मन में संकल्प तो होना चाहिए। यदि आप किसी बहुत बड़े उत्सव में जा रहे हों तो उस उत्सव के अनुरूप वस्त्र पहनते हैं। एक बार मैंने देखा मेरा एक परिचित भक्त है और अच्छे धुले वस्त्र पहने हुए है। उन कपड़ों को उसने निकाला जो एक वर्ष पहले उसने निकाले थे पर उसमें बहुत स्थानों पर हरे, पीले, नीले, लाल रंगों के दाग लगे हुए थे। मैंने कहा—यह वस्त्र क्यों पहन रहे हो भाई। उसने कहा—'वर्षमें एक बार इन्हें पहनता हूँ'। मैंने कहा—'क्यों पहनते हो'। उसने कहा—'आज धुलेटी का दिन है। होली का पर्व कल बीता है आज लोग रंग लगायेंगे। और यदि अच्छे कपड़ों को पहनकर जाऊँ तो वे भी फिर रंगे जायेंगे; इसलिए रंगे हुए कपड़ों को अच्छी तरह साफ करके रख लेता हूँ। अब फिर दूसरे वर्ष जब होली का दूसरा दिन आता है, तो फिर एक बार उन्हें पहन लेता हूँ। होली खेलने चला वह व्यक्ति तो उसने उस दिन के कपड़े पहन लिये। जब किसी और उत्सव में गया तो उस दिन के कपड़े पहन लिये। भाई उपासना करने चले हैं तो अपने आवरण को कुछ तो स्वच्छ करने का यत्न करना ही पड़ेगा। भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा—कि अर्जुन, दैवी सम्पत्ति में से परिपूर्ण बनना है। उपासक दैवी भाव में जीने का यत्न करता है। दो ही भाव है संसार में; एक आसुरी भाव और दूसरा दैवी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाव। यदि आसुरी भाव में जीने का प्रयत्न करेंगे जगत में ; तो दूसरों को भी दुःख मिलेगा और हम स्वयं भी दुःखी होंगे। क्योंकि प्रत्येक असुर भाव में जीने वाला व्यक्ति आसुरी भाव के उतर जाने पर, जब वह सहज मानव के रूप में कुछ क्षणों के लिए आता है तब उसे अनुभव होता है कि उससे कुछ ठीक जिया नहीं गया। वह क्षण अच्छे नहीं थे। हर असुर भाव में जीने वाला व्यक्ति सामान्य अवस्था में आने के बाद दैवी भाव की विशेषता को स्वीकार करने के लिए अपने ही आप भीतर से विचार करने लगता है और उसकी प्रशंसा में अपने आप ही अपने को धिक्कारता है कि मैं आसुरी भाव में क्यों चला गया। अर्जुन को भगवान श्रीकृष्ण ने कहा—उपासक बनना है, भक्त बनना है—सद्‌गुणी बनना है—दैवी भाव से सम्पन्न बनना है, तो कुछ छोड़ना पड़ेगा और कुछ ग्रहण करना पड़ेगा। तो उन्होंने कहा है—'तस्मात् एतत् त्रयं त्यजेत्' इन तीनों को धीरे-धीरे छोड़ने का यत्न करना चाहिए और उन्होंने कहा कि उपासक के जीवन में सामान्य कुछ बातें हैं जो धर्म के बहुत गहरे तत्व हैं उनको तो छोड़िये—उनके लिये तो बहुत अभ्यास करना पड़ेगा। किन्तु बहुत सामान्य बातें हैं। उन सामान्य नियमों के द्वारा भी उपासना में सहायता मिलती है।

मातृवत् परदारेषु
पर द्रव्येषु लोष्ट्रवत्,
आत्मवत् सर्व भूतेषु
यः पश्यति सः पण्डितः।

भारतीय संस्कृति ने कहा उपासक सामान्य नहीं होता है उपासक तो पण्डित होता है। पण्डित ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुआ हो या न हुआ हो। लेकिन पण्डित का यहाँ अर्थ है बुद्धिमत्ता के मार्ग पर चलने वाला साधक। बुद्धिमानीपूर्वक जीने की इच्छा रखने वाला मानव। तीन वस्तुएँ तो केवल बताई हैं और बहुत सरल हैं। मातृवत् परदारेषु। सारे संसार में जहाँ जहाँ नारी शक्ति है वहाँ मानव धीरे-धीरे अपनी सम्पूर्ण दृष्टि का परिवर्तन करते करते मातृ भावना का विस्तार करे। मातृ भावना का विस्तार करने का अर्थ है वात्सल्य प्राप्त करने के लिए अपने मन की तैयारी करे। जहाँ मातृभाव का विस्तार होगा वहाँ सारे संसार में करुणा—अनुग्रह अपने आप मिलने लगेगा। इसलिए मैंने कई उपासक देखे हैं, जो भगवान में केवल माँ का ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वरूप मानते हैं। भले ही वे विष्णु के उपासक हों, या राम के उपासक हों, या शिव या कृष्ण के उपासक हों। किन्तु वे पुरुष तत्व में भी माँ की उपासना इसलिए करते हैं जिससे कि निरन्तर करुणा और वात्सल्य मिलता रहे और संरक्षण अपने आप ही मिलता चला जाये।

'पर द्रव्येषु लोष्ट्रवत्'

श्रम करने से जो प्राप्त हो वह मेरा है। आज के युग में बड़ी कठिनाई है। जो मेरा अधिकार नहीं है उसे प्राप्त करने के लिए मानव कितना मचल रहा है। चाहे वह औद्योगिक क्रांति करने वाले बड़े-बड़े श्रमिक नेता हों और चाहे समाज के अन्य स्थानों पर देखें। एक सामान्य व्यक्ति से लेकर एक महान व्यक्ति तथा एक कुटीर के साधु से लेकर एक मठाधीश व प्रवचनकर्ता तक यह दुर्बलता सबके भीतर बढ़ती दिखाई पड़ती है। कम श्रम में अधिक प्राप्त हो जाय। मैंने जितना श्रम किया है उतना तो मुझे अवश्य ही मिलना चाहिए और इस श्रम का न्यायपूर्ण पुरस्कार यदि अधिक मिल जाय तो बड़ी अच्छी बात और यदि एक बार न भी मिले तो कोई चिन्ता की बात नहीं है—व्यक्ति आज सारी जगह सोचता है कि जितना मैं श्रम कर रहा हूँ उससे तो बहुत ही ज्यादा मिलना चाहिए और उस ज्यादा मिलने के लिए फिर कई बार नीति टूट जाती है। और फिर नीति टूट जाती है तब शान्ति कैसे मिले। शान्ति न मिलने का कारण तो यही है कि नीति की जो रेखाएँ हैं उनको हम अपने आप भग्न कर देते हैं। और अनीति की रेखा में जीने का जब विचार जागता है तब वह अशान्ति बनकर मेरे मस्तिष्क पर मँडराने लगती है। इसलिए शास्त्रकारों ने उपासक बनने के लिए बड़े सामान्य से कुछ नियम बताए हैं। सारे संसार में मातृभाव की कल्पना नारीजगत में और दूसरे के द्रव्य को, अनधिकारी यदि है तो उसे प्राप्त न करने की इच्छा से लोष्टवत; आज तो यह विचार स्वप्न जैसा लगने लगता है किन्तु जहाँ सिद्धान्तों का वर्णन किया जाता है, वहाँ ऐसी कठिन बातें समाज के सामने रखनी पड़ती हैं क्योंकि यदि मैं लक्ष्य को प्राप्त न कर सकूँ तो लक्ष्य ही अनुचित है ऐसा तो नहीं कहा जा सकता। किसी सिद्धान्त को मैं स्वीकार न कर पाऊँ इसलिए सिद्धान्त को ही जमीन पर लाकर पटक देना चाहिए, उसकी ऊँचाई समाप्त कर देनी चाहिए, यदि ऐसा तर्क दिया जाय तो यह तर्क न्यायपूर्ण नहीं हो सकता। व्यक्ति की सामर्थ्य बढ़नी चाहिए कि वह अपने अन्तः का जागरण करके सिद्धान्तों की ऊँचाई तक पहुँचे। लेकिन अपने स्वार्थ और अपनी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayū Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महत्वाकांक्षा और अपनी क्षुद्र वृत्ति के कारण सिद्धान्तों को घसीट कर पंक में लपेट देने का प्रयत्न करने की इच्छा करने वाला व्यक्ति फिर मानव को सिद्धान्त विहीन बनाकर मानव का समाज नहीं रहने देगा। वह तो पशुओं का समाज हो जायेगा। जहाँ मानव का समाज है वहाँ तो कुछ गुरुता रहती है और सिद्धान्तों की उस गुरुता को स्वीकार कर, उसे स्पर्श कर, उसे प्राप्त करने की चेष्टा ही तो मानव की सबसे बड़ी सफलता है। सफलता मिले न मिले लेकिन प्रयत्न करना यह भी अपने आप में सफलता है। एक मानव में अच्छा विचार जागा। उस अच्छे विचार को मूर्त रूप देने के लिए सामान्य प्रयत्न हुए। सामान्य प्रयत्नों के साथ रसानुभूति हुई, तो उन प्रयत्नों को और तीव्रतर करने का विचार जागा। यह सब परमात्मा की कृपा ही तो है और ये सब उपासना की ओर ले चलने वाले दिव्य गुण ही हैं।

'आत्मवत् सर्वभूतेषु'

सारे संसार में मेरा ही स्वरूप है। भारतीय संस्कृति की अद्‌भुत कल्पना है कि हिंसा नहीं होगी, झगड़े नहीं होंगे। मतभेद रहते हुए भी मानव, मानव के प्राणों का हनन नहीं करेगा। जहाँ उसने विचार किया कि मैं ही तो हूँ। जहाँ आप अपनी कल्पना करते हैं कि मैं हूँ वहाँ निश्चित रूप से आपके मैं की कल्पना उसको सुधारने के लिए आपको बाध्य करती है। जब आपने सोचा कि मेरा मकान है तब आप उसको दिवाली पर रंगते हैं, अच्छी तरह से व्यवस्थित करते हैं। जब आपने माना कि थोड़ी देर को कि यह मेरा शरीर है तो आप उसको नहलाते हैं अच्छी तरह स्नान कराते हैं—वस्त्र करते हैं भोजन कराते हैं। जब आपने माना कि मेरा पुत्र है तो उसकी अच्छी शिक्षा का प्रबन्ध करते हैं। भारतीय संस्कृति ने यह कहा कि अपने को सीमित मत रखो। इसमें धीरे धीरे वृद्धि, उदारता, विस्तारवाद दो। भौगोलिक विस्तारवाद युद्ध कराता है और आत्मिक विस्तारवाद सारे संसार में प्रेम कराता है। आत्मा की दृष्टि से विस्तार का दृष्टिकोण बना कि यह सारा संसार मेरा ही स्वरूप है। 'आत्मवत् सर्व भूतेषु।' संसार के समस्त प्राणियों में वही एक आत्म तत्व है जो मुझमें विराजमान है ऐसी पवित्र कल्पना। ऐसा पवित्र चिन्तन यदि मेरे और आपके मन में जागता है तो संसार में युद्ध अपने आप रुक जायेगा। कभी कोई अपने आप को मारता है? आज तक कभी नहीं देखा कि आदमी ने अपने हाथ से उठाकर और अपना ही हाथ काट डाला हो। कोई आदमी पागल हो गया हो वह अलग बात है लेकिन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिसमें थोड़ी भी बुद्धि हो वह गुस्से में आकर और तलवार उठाकर अपना ही हाथ नहीं काट डालता है। रोज लोग कटते हैं—बड़ा दुःख होता है—बड़ी पीड़ा होती है। मानों उन्हें कि जिस संसार को अच्छा बनाने के लिए रचा होगा भगवान की कृपा और इच्छा से उसी संसार को ध्वस्त करने का कैसा कलुषित विचार सारे संसार में निरन्तर वृद्धि को प्राप्त करता जा रहा है। यदि मानव उपासक हो जावे, तो उससे केवल व्यक्ति का भला नहीं होगा। मैंने पहले ही कहा व्यक्ति समाज से कट कर नहीं रह सकता। इस समाज का शृंगार होगा उपासक के द्वारा। लेकिन शृंगार वही कर पायेगा जिसने पहले अपना शृंगार पहले किया हो। जिसने अपने जीवन में शृंगार की कला सीखी ही न हो वह सजायेगा कैसे दूसरे को। इसलिए वह सारे समाज का शृंगार हो। ईश्वर के निकट बैठने का प्रयत्न उपासना। ईश्वर संसार में सबसे अधिक निकट है क्योंकि वह हृदय में है, बुद्धि में है, जीवन में है, प्राणों में है, साँसों में है और इसलिए उसका नाम है अन्तर्यामी। इस अन्तर्यामी के निकट कुछ क्षण बैठने की कला में यदि हम पारंगत हो जायँ तो हम उपासक हो जायेंगे। वही कुछ क्षणों का विचार फिर पूरे जीवन में व्याप्त हो जायेगा। वह उपासना तत्व, वह उपासक तत्व और वह उपासक की दृष्टि मानव के जीवन में कैसे वृद्धि करे यह मैं अगले पाँच प्रवचनों में निवेदन करने की कोशिश करूँगा।

प्रवचन की शृंखला के द्वितीय दिवस पर हम सब आज यहाँ एकत्रित हैं और उपासना के ऊपर कुछ विचार-विमर्श करेंगे। कल कहा गया, कि मानव आधार रहित हो जाय तो जीवन निरर्थक हो जाता है। सब कुछ मिला रहने पर भी उसका उन क्षणों में सब निरर्थक हो जाता है जब वह अपने जीवन में कहीं, कोई ऐसा सूत्र ढूँढ नहीं पाता है जिससे उसे प्रेम और आनन्द की रसानुभूति होती हो। जीवन दो प्रकार का होता है, जिसे चारों प्रकार की सुविधाओं से सींचा जाता है और वह उसमें लहलहाता दिखाई पड़ता है। प्रारब्ध वश, परिस्थितियोंवश, कुछ लोगों को ऐसा जीवन भी मिल जाता है, जिनके पास लौकिक सुविधाओं का अभाव होता है। कई बार तो ऐसा भी होता है कि ये सुविधाएँ उन्हें मिलती ही नहीं। लेकिन इन दोनों प्रकार के जीवन की एक अंतरंग विशेषता भी हो सकती है, एक कठिनाई भी हो सकती है। एक आदमी बहुत सुविधा में रहने पर भी, बार बार रिक्तता का इतना अनुभव करता है कि उसे कहीं से रस की कोई भी धारा मिल न रही हो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूसरी ओर, ऐसा व्यक्ति जो अभाव में हो लेकिन जीवन क्या है यह जानकारी किसी महापुरुष से, किसी शास्त्र से अथवा अपने ही चिन्तन से प्राप्त हो जाये तो चारों ओर तो दिखाई पड़ रहा है मरुस्थल लेकिन उस मरुस्थान में भी वह व्यक्ति, हरे वृक्ष की तरह दूर खड़ा हुआ दिखाई पड़ सकता है। क्योंकि उसने जीवन के आनन्द प्राप्त करने की स्थली वाहर के पदार्थों में नहीं मानी है, वल्कि अपने अन्तर को माना है। भारतीय संस्कृति में प्रत्येक महापुरुष के द्वारा इस विशेषता को वार वार वताया गया है कि मानव को जगत में तो रहना चाहिए पर जगत कितना परिवर्तनशील है और जगत कितना विनाशी है इस बात की जानकारी भी उसको अवश्य होनी चाहिए। यदि उसको इस जानकारी के वीच में रहने का अभ्यास हो गया तो कुछ आये, कुछ जाये, उसका वहुत प्रभाव उसके जीवन पर नहीं होता। कोई व्यक्ति पूछे कि उपासना का फल क्या है? वहुत लोग तो यह मानेंगे कि उपासना का फल तो भगवान है। सचमुच है। पारम्परिक उत्तर यही हो सकता है—है भी। लेकिन मेरे विनम्र मत में **उपासना का फल है पूर्ण आत्म संतुष्टि।** यदि व्यक्ति पूर्ण आत्म संतुष्टि में है तो परमात्माकी कृपा का ही फल है। चाहे उसे परमात्मा कह लें, अथवा परमात्मा के द्वारा प्रदत्त प्रसाद। आपकी आन्तरिक वृत्ति की सहजता, आप्त कामत्व, इन शब्दों में अन्तर हो सकता है लेकिन उसकी स्थिति लगभग एक जैसी होती है। कई वार ऐसे महापुरुष भी दिखाई पड़े हैं इतिहास में, जिन्होंने वहुत उपासना की और उपासना करने के वाद उनसे पूछा गया कि आप क्या चाहते हैं परमात्मा? प्रभु? ईश्वर? तो उन्होंने कहा नहीं, मैं अपने आपको चाहता हूँ। जो अपने आपको चाह रहा है वह भी तो परमात्मा को चाह रहा है। क्योंकि आप अपने आप का निर्माण अपने आप नहीं कर सकते हैं। वहाँ आप का अर्थ 'आत्मा'। देह नहीं, पदार्थ नहीं, जगत नहीं। जो मानव अपने अंतरंग जीवन और अपनी अंतरंग वृत्ति के साथ एकात्मा का अनुभव करता है वह मानव वेदान्त की पराकाष्ठा पर विराजमान होता है। वेदान्ती संसार में सव जगह अपने ही स्वरूप का दर्शन करने के कारण अपने से अतिरिक्त, किसी दूसरे के वोध में जीते ही नहीं। क्षमा कीजिएगा मेरा और आपका जितना वोध द्वितीय को होगा, उतना ही भय होगा। संसार में जहाँ जहाँ ऊपर की कल्पना है, भिन्नता की कल्पना है वहीं वहीं डर लगता है। और जहाँ जहाँ मानव के जीवन में भिन्नता का अभाव हो जाता है, वहाँ मानव निजात्म सुख में जीने का सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लेता है। इसको प्राप्त करते हुए महापुरुषों का दर्शन हमने इतिहास में किया है। जहाँ स्वामी राम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तीर्थ अपनी मस्ती में हिमालय के पावन आंगन में, हिमगिरि की उपत्यकाओं में, गुहाओं में विचरण करते हुए, अचानक एक सर्प को देखते हैं। भाव निष्ठा में परिपूर्ण, आत्मनिष्ठा में परिपूर्ण इस महापुरुष ने उसके निकट बैठकर उसके ऊपर अपने मृदुल हाथ को फेरना शुरू किया। मुझे और आपको तो डर लगता और ऐसा लगता कि यह विषधर मुझे डस लेगा और जीवन का अन्त हो जायेगा। लेकिन बड़ी विचित्र बात है। मानव देह के मूल्य को समझ लेने के बाद भी अपने ही स्वरूप का सर्वत्र दर्शन करने वाले उस महापुरुष ने उस विषधर को स्पर्श करने के बाद ऐसा विचार नहीं किया कि यह मुझे कोई हानि पहुँचा सकता है। उसका कारण एक ही दिखाई पड़ता है कि उन्होंने अपने भाव का इतना विस्तार किया कि 'पर' की कल्पना ही समाप्त हो गई। जहाँ, पर की कल्पना समाप्त होती है, वहाँ भय अपने आप ही मिटता चला जाता है। महापुरुषों ने कहा—**'द्वितीयात् वै भयम भवति'**। जहाँ द्वितीय की कल्पना है वहीं वास्तव में मानव के जीवन में भय आता है। और इस भौतिक युग में, हम सब उस भिन्नता के बीच में ही मानो जी रहे हैं। वह विभेद और दीवारें मानव की बढ़ती जा रही हैं और जितनी दीवारें मानव के अन्तर में बढ़ती जाती हैं, उतना उतना ही वह सुख को सीमित करता जाता है। लौकिक पदार्थ मनुष्य को सुख देते हैं इसमें सन्देह नहीं। लौकिक पदार्थों की निन्दा हमारे ऋषियों ने और गीताकार लीला पुरुषोत्तम भगवान श्री कृष्ण ने भी नहीं की है। उन्होंने धर्मपूर्वक अर्थ और काम के सेवन को निषिद्ध नहीं माना है। लेकिन उन्होंने मुझे और आपको जो दृष्टि दी है उसमें निरन्तर उदारता और विस्तार हो, और इतना विस्तर हो कि जहाँ जो कुछ भी दिखाई पड़े अपना ही स्वरूप दिखाई पड़े। जहाँ व्यक्ति की कल्पना साकार रूप धारण करती है, वहाँ एक बार सामने आने के बाद कोई जल्लाद भी उसको विचलित नहीं कर पाता है। महापुरुषों, संतों, ऋषियों की बात तो जाने दें इस देश में छोटे-छोटे बालक, जिन्होंने वेदान्त और दर्शन का श्रवण तो संभवतः नहीं किया होगा लेकिन पारम्परिक रूप से संस्कार में, परिवेश में, अमरत्व का बोध ले आने के कारण उन्होंने मृत्यु को स्वीकार नहीं किया। जीवन गया। मृत्यु की स्वीकृति एक अलग वस्तु हैं। और मृत्यु को प्राप्त होना एक अलग वस्तु है। जब जीव देह धारण करके मानव आया है, तो उसमें देहान्तर तो होगा ही। उसमें परिवर्तन तो होगा ही। उसे कोई रोक नहीं सकता है। जो सारे संसार में वस्तु आती है और जिस दिन आती है उस दिन एक वस्तु और अपने साथ लेकर आती है और उसका नाम है 'प्रस्थान'। जिसका आगमन हुआ है, उसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तो यह मान ही लेना चाहिए कि प्रस्थान जरूर होगा। जैसे आगमन में सुखानुभूति होती है मुझे और आपको वैसे ही प्रस्थान की सुखानुभूति की तैयारी ही जीवन को सार्थक रूप में जीने की कला है।

जिस व्यक्ति ने अध्यात्म विद्या में जीने की पारंगतता पाने का प्रयत्न न किया हो उस व्यक्ति के जीवन को इस भारत की भूमि में प्रशस्त नहीं माना गया है। विद्याओं का अन्त नहीं है। ६४ कलाओं का वर्णन आता है। अनेक विद्याओं का वर्णन आता है पर जब भगवान श्रीकृष्ण से अर्जुन पूछते हैं भगवन् 'एकस्मिन् विज्ञाते सर्वम् विज्ञातम् भवत' एक को जान लेने पर सबको जान लिया जाता है वह कौन सी विद्या है। भगवान ने कहा—अनेक विद्याएँ हैं पार्थ। लेकिन सबसे श्रेष्ठ विद्या है 'अध्यात्म विद्या विद्यानाम् वादः प्रवदताम् अहं'। भगवान ने कहा—विद्याओं में सर्वश्रेष्ठ विद्या है अध्यात्म विद्या। क्योंकि इसके द्वारा मानव के भीतर अभाव की अनुभूति नष्ट हो जाती है। अभाव में कोई व्यक्ति जी रहा है तब तक अभाव उसे पीड़ा नहीं देता है, जब तक अनुभूति न हो। आप अपने सामान्य जीवन में बहुत अच्छी तरह जीते होते हैं; लेकिन एक सामान्य व्यक्ति बहुत अच्छे सम्पन्नव्यक्ति के यहाँ जाय और किसी ऐसी वस्तु को देखकर आये जो उसने जीवन में कभी न देखी हो। वस्तु को देख ले इसमें भी कोई कठिनाई नहीं, लेकिन वस्तु की महिमा का श्रवण करने के बाद उसके मन में एक नया चिन्तन जागा कि मेरे पास यह वस्तु नहीं है। एक क्षण पहले तक अभाव में जी रहा था ; लेकिन अभाव पीड़ाकारक नहीं था। अभाव उसके जीवन में कोई कष्ट का प्रसार नहीं कर रहा था। लेकिन किसी वस्तु की महिमा सुनकर आया। आने के बाद उसने सोचा कि इतना प्रयत्न करने के बाद भी एक छोटी सी वस्तु मैं घर में नहीं बसा सका। और उसके यहाँ यह वस्तु थी। अब उसका चिन्तन अभाव की अनुभूति में गया। जीवन उन्हीं २ क्षणों में दो धाराओं में बँट जाता है। जब वह सुख की अनुभूति करता है तब भीतर ही भीतर किसी रस के साम्राज्य में विराजमान अपने को अनुभव करता है। अभाव में जीते हुए भी यदि किसी को अभाव की अनुभूति नहीं होती तो अभाव उसको पीड़ा नहीं देते हैं। अध्यात्म और क्या करेगा? किसी व्यक्ति के शरीर को तो बदल नहीं सकता। उसके प्रारब्ध में भी बहुत कम परिवर्तन हो पाता है और यदि प्रारब्ध भोग में परिवर्तन हो पाता तो श्री रामकृष्ण देव जैसे सिद्ध पुरुष को अपने जीवन में व्याधि के रूप में इतने बड़े कष्ट को स्वीकार न करना पड़ता।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि कोई और परिवर्तन हो जाता तो भगवान आदि शंकराचार्य के जीवन की उत्तरावस्था में प्रस्थान से पूर्व जो उनको शारीरिक वेदना हुई थी, वह उनको नहीं होती। अध्यात्म केवल चिन्तन और अनुभूति को बदलता है। मानव अभाव में चाहे जितना जीता हो। लोग आकर उसको कहते हैं आपके पास यह वस्तु नहीं है, आपको इतनी पीड़ा हो रही है, तो वह सहज रूप में मुस्करा कर कहता है 'तुम अपनी दृष्टि में जीते हो, अपने राज्य में जीते हो, इसलिए तुम्हारी अपनी तुला, तुम्हारा अपना मापदण्ड, तुम्हारे अपने नापने के यन्त्र, सब अलग हैं। इसलिए तुम मुझे नहीं नाप पाओगे।' उस व्यक्ति की उस सहज श्रद्धा के कारण वह मुस्कराता है। और विचार करता है कि वह व्यक्ति अपनी भावना के वश में होकर इस प्रकार के उद्‌गार मेरे सामने प्रकट कर रहा है। भगवान श्रीकृष्ण ने, पूर्वाचार्यों ने, ऋषियों ने हम सब को उपासना की बात बताई है। जिसके निकट बैठते २, बाहरी जगत में तो बैठना पड़ेगा ही, लेकिन आन्तरिक निकटता उसके साथ हो जाये जिसकी बात मैंने कल निवेदन की थी कि परमात्मा संसार में सर्वाधिक निकट है क्योंकि वह अन्तर्यामी है। जगत के किसी भी सम्बन्धी को अन्तर्यामी नहीं कहा गया – न पुत्र को, न पति को, न पिता को, न गुरु को, न संत को, न भृत्य को, न मालिक को। इन सब लौकिक व्यवस्थाओं में एक दूरी रखी गई और शब्दकोषकारों ने भी उनको इतनी महिमा नहीं दी। परमात्मा को ही दी कि वह अन्तर्यामी है। उस अन्तर्यामी ने मानव का कितना रक्षण किया है कोई नहीं कर सकता। मैं तो कभी कभी परमात्मा की करुणा का स्मरण करता हूँ तो कृतज्ञता से शीश न जाने कितनी देर तक झुका ही रह जाता है। अन्तर्यामी जानता है कि मेरे भीतर कौन सी असत् वृत्ति इस समय चल रही है। आपके भीतर कौन सा प्रवाह इस समय चल रहा है। हम कभी असत् में और कभी सत् में जीते हैं। समाज के भीतर व्यक्ति की बड़ी प्रतिष्ठा है। उस प्रतिष्ठा को प्राप्त करने के के लिए उसने श्रम भी किया है—प्रतिभा भी प्राप्त की है—यत्न भी किये हैं—पुरुषार्थ भी किये हैं, और उसका फल मिला है कि उसको एक सम्मानपूर्ण स्थान समाज में मिला है। लेकिन ऐसा सम्मानपूर्ण जीवन जीने वाला व्यक्ति भी, कभी-कभी अपने अन्तर रोगों के द्वारा, अन्तरव्याधियों के द्वारा पीड़ित होता है और अन्तरव्याधि के समय उसका वह स्वरूप जो समाज के सम्मुख प्रकट दिखाई देता है, वह बदल जाता है। उस समय मानव के हृदय में कोई कामना की रेखा, कोई क्रोध की तरंग, कोई लोभ का विचार और कोई मद का उत्तुंग शिखर खड़ा हो जाता है और ऐसी कठिनाई के बीच इसको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कौन देख रहा है? समाज नहीं देख रहा है। मेरे पास में बैठा हुआ व्यक्ति भी मेरी इस अन्तर्स्थिति को नहीं देख रहा है। और मैं समाज में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति माना जाता हूँ। आप समाज में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति माने जाते हैं। उस प्रतिष्ठा के बीच जहाँ ऊपर से तो एक बहुत ही निर्मलधारा प्रवाहित हो रही है और वहीं अन्तर में पंक का मलिन प्रवाह प्रवाहित हो रहा है, उसे कौन देख रहा है? उसे देख रहा है अन्तर्यामी! वह अन्तर्यामी इतना कुछ देखने के बाद भी कितनी करुणा करता है, कितना क्षमा करता है कि मेरे अंतर के उस पंकिल प्रवाह को प्रकट नहीं करता है। वह जानता है कि मेरा है यह। इसने मेरे पास बैठकर मेरी उपासना की है। मेरे निकट आसन लगाया है। आपने तो कई बार देखा होगा—गृहस्थ जीवन में जिया होगा कि आपके छोटे से शिशु पर अचानक आततायी प्रहार करने के लिए आये—उस समय माँ की ममता एकदम पूर्ण रूप से प्रकट होती है और माँ क्या करती है? अपने बालक को घसीटकर, अपने अंक में बिठाकर, अपने आँचल से पूरी तरह ढककर, जितनी उसकी शक्ति है, दोनों हाथों से अपने बालक को पकड़ लेती है। आततायी को प्रहार नहीं करने देती। एक बार ऐसा विचार करती है कि 'अगर निकट आ ही गया और इसने प्रहार किया तो मैं अपने लाडले लाल को बचाऊँगी। इसके ऊपर प्रहार न होने दूंगी। मेरे ऊपर प्रहार हो तो कोई बात नहीं।' यह तो लौकिक माँ की करुणा है। पारमार्थिक माँ; परमात्मा है। न जाने कितने दोष आपके और हमारे भीतर प्रकट होते हैं। समाज के कई लोग जो आपसे विद्वेष करते होंगे, वे उन्हें प्रकट भी करते होंगे। लेकिन करुणा का सम्पूर्ण मूर्तिमन्तस्वरूप वह परमात्मा अपने उपासक को अपने अंक में बैठाकर, अपने करुणा के आवेष्टन से ऐसा लपेटता है, जैसे माँ अपने बालक को अपने आँचल में छिपाती है। अन्तर्यामी अपनी करुणा से आपका और मेरा अद्भुत रक्षण करके, समाज में बने हुए स्वरूप को जीवित रखता है और मेरे और आपके पंकिल प्रवाह को धीरे धीरे स्वच्छ बनाने कि पुनः शक्ति प्रदान कर देता है। यदि उस पंकिल प्रवाह में ही पूरा जीवन हमारा और आपका व्यतीत होने लग जाय तो उपासना ही व्यर्थ हो जायेगी। उपासना मानव के अन्तर के विकार को धीरे धीरे धोती है।

'करहुँ सदा तिनकर रखवारी,
जिमि बालकहि राखि महतारी।'

जैसे माता अपने बालक का रक्षण करती है, वैसे उपास्य अपने उपासक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का रक्षण करता है। और कभी कभी जब भगवान देखते हैं कि उपासक को इतने अवसर दिये गये और वह सुधरने का नाम नहीं ले रहा है, तब वही परमात्मा उस अनुशासनप्रिय माँ की तरह कठोर भी होता है। आपने कई वार रामचरित मानस के पावन प्रसंग श्रवण किये हैं। जब उपासक के मन में स्वयं की अवधारणा न जागी, शक्ति न जागी, तब जैसे किसी व्यक्ति को फोड़ा हो जाय और वह किसी शल्य चिकित्सक के पास जाये और ले जाने वाला अभिभावक कहे कि इसकी शल्य चिकित्सा तो करनी ही पड़ेगी और आवश्यकता पड़े तो उँगली भी काटनी पड़े, तो काटो, हाथ काटना पड़े तो भी काटो ; क्योंकि हाथ काटने से जीवन तो बचेगा। जीवन बचेगा तो शेष जीवन में यह कोई अच्छे सत्कर्म कर सकेगा। समाज का काम कर सकेगा। लेकिन शल्य चिकित्सक कहता है—अपनी पूरी कला, पूरी विद्वत्ता, पूरी शक्ति, पूरे अस्त्र-शस्त्र, विज्ञान, औषधि इन सब का प्रयोग करने पर भी मेरी कठिनाई है कि मुझे इसका एक अंग भंग करना होगा। तभी मैं इसका जीवन बचा सकूँगा। अभिभावक की इच्छा नहीं है। पिता की इच्छा नहीं है। माता की इच्छा नहीं है, लेकिन जीवन बहुत दीर्घ है और जीवन बहुत मूल्यवान है। मूल्यवान वस्तु को बचा लेने के लिए जो कम मूल्यवान वस्तु है उसका परित्याग करना ही पड़ता है। नीतिकार कहते हैं कि **'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः'**। पण्डित व्यक्ति, बुद्धिमान व्यक्ति वह है जो सर्वनाश उपस्थित होता हो तो उसमें से थोड़ा सा जाता हुआ स्वीकार करे और बाकी का रक्षण करने के लिए संकल्प करे। जब उपासक अपनी उपासना में डगमगा जाता है, तो ऊपर से मैं उपासक रहता हूँ और भीतर से मेरे अन्तर में बहुत सारे दोष आ जाते हैं तो भगवान मुझे शुद्ध करने के लिए शल्य चिकित्सक की तरह कोई कोई प्रतिकूल परिस्थिति भी जीवन में देता है। उस प्रतिकूल परिस्थितिमें भी परिमार्जन करने का अवसर है। वह प्रतिकूल परिस्थिति उपासक को तोड़ डालने के लिए नहीं हो सकती। यदि ऐसा हो तो परमात्मा का अपना जो वास्तविक करुणामय स्वरूप है वही कलंकित हो जायेगा। परमात्मा अपने उस स्वरूपको कभी धूमिल होने नहीं देता है; लेकिन अपने कर्तव्य का भी परमात्मा स्वयं अपने आप पालन करता है, क्योंकि परमात्मा नियामक है। यदि नियामक शक्ति अपने नियमन का परित्याग कर दे तो उसका नियामक तत्व जो है वह समाप्त हो जायेगा। इसलिए परमात्मा मेरा और आपका, उपासक का, नियमन करने के लिए है। मैं रोता हूँ, साधक रोता है, उपासक रोता है कि जो प्रिय है वह मिलना चाहिए। भगवान सोचते हैं जो मन का प्रिय दे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देंगे तो इसका तो इतिहास बिगड़ जायेगा। इसका जीवन बिगड़ जायेगा। रामचरित मानस में आपने श्रवण किया कि, बहुत उपासना करने वाले देवर्षि नारद का मन बिगड़ गया। आदमी का थोड़ा बहुत धन कभी कम हो जाये तो बहुत चिन्ता की बात नहीं होती। यदि धन में कमी आये तो उसे तो आप कभी न कभी अपनी कला और अपनी व्यवस्था शक्ति से पुनः प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन यदि मानव का मन बिगड़ जाये तो जीवन बिगड़ जाता है। धन बिगड़ने से जीवन नहीं बिगड़ता। लेकिन मन बिगड़ जाने से जीवन बिगड़ जाता है और जीवन एक बार बिगड़ा तो फिर पता नहीं कितनी यात्रा प्रारम्भ हो जाती है। पड़ाव ऐसा पड़ाव हो कि जहाँ से किसी दूसरे पड़ाव पर रुकने की आवश्यकता न आये। ऐसी शक्ति परमात्मा ने आपको और मुझे देकर इस मानव तन में भेजा है—उस संभावना को, जो प्रसुप्त पड़ी हो, उसे जाग्रत करने के लिए भेजा हो, और हम और सो जाँये। हम और आप विस्मरण की गहरी निद्रा में सभा जायें, और यह जान ही नहीं पायें कि यह तो वह पड़ाव है जहाँ से अब दूसरे पड़ाव पर रुकना नहीं पड़ेगा। बस यहाँ से छलांग मारी तो गन्तव्य पर पहुँच कर फिर पुनरागमनकुतः। वहाँ से तो फिर आगमन नहीं है जहाँ पहुँचने के बाद मृत्यु और जीवन को विराम मिल जाता है, उस स्थिति पर पहुँचने के लिए मानव जीवन में आया। कल मैंने निवेदन किया था हम क्यों आये हैं यह प्रश्न आपको अपने से ही पूछना पड़ेगा। मेरे और आपके इस प्रश्न का उत्तर बाहरी व्यक्ति नहीं दे सकेगा। सन्त, सत्पुरुष, विद्वान, अनुभवी लोग ही मार्गदर्शन करते हुए कुछ रेखाएँ खींच सकेंगे। उन रेखाओं पर चलते हुए जीवन के गन्तव्य की अवधारणा और अपने गन्तव्य के प्रति दृढ़ भाव मन में स्थिर करने का कार्य तो हर व्यक्ति को अलग अलग करना पड़ेगा, और उपासना मानव के गन्तव्य की अवधारणा को स्थिति प्रदान करती है। उसमें व्यक्ति को प्रतिष्ठित करती है। जब व्यक्ति की प्रतिष्ठा हो जाती है, मानसिक रूप से, चिन्तन के रूप से, तब उसके बाद वह निश्चिन्त हो जाता है। तभी तो रामकृष्ण देव कहते थे कि भाई—आपने घर में, परिवार में देखा है जब माताएँ दूध-दही जमाती हैं, तब उस दूध को वे ऐसे स्थान में रखती हैं, जहाँ उसमें स्पन्दन न हो। और उतनी देर तक स्पन्दन न हो जब तक वह एकदम जम न जाये। उतनी देर तक उसे कोई हिलाता नहीं है। वह पात्र एकदम एकान्त में रखा रहता है और उसकी एक अवधि निश्चित होती है कि उतने समय के भीतर वह दूध अपने को रूपान्तरित कर के दधि के रूप में प्रकट कर देता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उपासक को भी उपासना के काल में इतना शान्त बैठने की बात ऋषियों ने क्यों बार-बार कही ? सब शास्त्रों ने ऐसा उपदेश क्यों दिया कि एक छोटे से पात्र यदि मानव को, दूध को, दही के रूप में परिवर्तित करना हो तो उसे भी बैठना पड़ता है। अचंचल बैठना पड़ता है। अगर अनेक जन्मों के विचारों रूपी दूध को ध्यान के रूप में परिवर्तित करना हो तो व्यक्ति को उपासना के काल में उतनी देर तक तो निश्चित रूप से स्थिर बैठने का यत्न करना ही होगा। और इसीलिए श्रीमद्‌भगवत् गीता में भी कहा—चारों ओर बिना देखे हुए।

'सम्प्रेक्ष्यनासिकाग्रम-स्वम दिशश्चानवलोकयन्'।

छठे अध्याय में ध्यान योग का वर्णन करते हुए भगवान श्रीकृष्ण ने उपासक को कहा कि बैठना किस तरह चाहिए। उपासना चलते फिरते भी हो सकती है। जिन लोगों की उपासना संकीर्तन की है वे चलते फिरते कर सकते हैं। लेकिन जिन लोगों को विशेष लाभ प्राप्त करना है और अनुभूति के राज्य में जाना है, उन लोगों को उपासना का काल निश्चित करना होता है—प्रारम्भ में। एक वार उपासक की वृत्ति वन जाने पर जहाँ जहाँ आप जायेंगे, वहाँ आपकी उपासना होगी। जहाँ चलोगे, वहीं आपकी परिक्रमा हो जायेगी। जो जो कर्म करेंगे वही आपकी उपासना वन जायेगी। लेकिन यह वाद में होगा। 'यत् तत् कर्म करोमि तत् तदखिलाम शम्भो तव आराधनम्' आपकी ही आराधना हो रही है ऐसा विचार तो वाद में आयेगा लेकिन प्रारम्भ में हरेक व्यक्ति को कुछ क्षण निश्चित करने पड़ते हैं। जब व्यक्ति अपनी उपासना का काल ही निश्चित न कर पाये, तो वड़ी कठिनाई होगी कि जीवन का गन्तव्य कैसे निश्चित करेगा। मैं निवेदन कर रहा था—उपासक के जीवन के अन्तर के दोष जव अन्तर में ही प्रकट होने लगते हैं तव अन्तर्यामी उसे देखता है। अन्तर्यामी देखने के वाद विचार करता है। अव पहले तो इसके दोष का शमन करने के लिए इसे अधिकार देना चाहिए कि यह स्वयं ही प्रयोग करे। और जव वह स्वयं प्रयोग करते करते, या प्रमाद के कारण प्रयोग न करने से प्रमादी वन जाता है, तव वास्तव में मनुष्य के जीवन का एक२ क्षण जो वहुत मूल्यवान है। आयुषः क्षणं एकोपि सर्वरत्नैर्न लभ्यते।

नीतिकार ने कहा कि एक आदमी के पास जितने रत्न हों वह दे डाले और कहे कि सम्पूर्ण रत्नों को देकर मैं अपने जीवन के वीते हुए क्षणों को प्राप्त करना चाहता हूँ किन्तु 'न लभ्यते' नीतिकार के कहा कि किसी व्यक्ति ने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रमादपूर्वक उन क्षणों को यों ही व्यतीत कर दिया है बड़ा कठोर शब्द प्रयोग किया है। **सः नीचः सः नराधमः।**

इस नीतिकार ने कहा जो रत्नों के बदले भी प्राप्त न होने वाले जीवन के क्षण को प्रमाद पूर्वक व्यतीत कर देता है वह अच्छा व्यक्ति नहीं कहा जा सकता। उन्होंने तो ऐसा अधम कह दिया। हम सब लोगों को प्रेरणा मिल सकती है कि उपासना के क्षणों को ठीक से व्यतीत करने का यत्न उपासक को करना चाहिए। और फिर जब उसके भीतर, अपने ही अन्तर के दोष कुलबुलाने लगते हैं और वह असमर्थ हो जाता है तब भगवान विचार करते हैं कि अब कुछ करना चाहिए। मन कुछ माँगता है। अभी मैं निवेदन कर रहा था कि एक ऋषि के मन में, एक परिव्राजक के मन में, एक तपस्वी के मन में, सबके भीतर भगवान के दर्शन करने वाले भगवत् सेवी सन्त के मन में परिणय का विचार जग जाये इससे बड़ा और पतन का कारण क्या हो सकता है? लेकिन देवर्षि के मन में ऐसा ही एक क्षुद्र विचार जग गया। जब देवर्षि नारद के मन में यह विचार जागा तब भगवान ने सोचा कि यह तो मेरा उपासक है। इसके मन में क्या विचार जागा यह सोच नहीं पा रहे हैं, इतने ऊँचे होकर भी। और बल्कि अपने उस दोष का वर्णन करने के लिए एक अहंकार मन में जागा है। एक ओर तो कहते हैं कि मैंने काम पर विजय प्राप्त कर ली है, और दूसरी ओर मन में एक ऐसा विचित्र सा विचार जागा है जो एक ऋषि के लिए शोभा नहीं देता। जब भगवान शंकर से जाकर कहते हैं तब भगवान शंकर ने कहा बहुत अच्छी बात है—

जिताकाम अहमिति मन माहीं

अपने काम को जीत लिया है बड़ी अच्छी बात है। भगवान विष्णु को कहने जाते हैं। भगवान नारायण बड़े अच्छे हैं। वे विचार करते हैं कि बड़े उपासक हैं ये, लेकिन अब मन में जो विचार उठा है उसके कारण तो जीवन बिगड़ जायेगा। लौकिक व्यवस्था बिगड़े तो जीवन पूरा नहीं बिगड़ता है क्योंकि उस व्यवस्था को ठीक करने के लिए कोई न कोई प्रारब्ध का योग दो चार दस वर्षों में अनुकूल आ जाता है और आदमी उस व्यवस्था को ठीक कर सकता है। लेकिन मन के बिगड़ जाने पर यदि मानव उस विचार का साथ देता चला जाये तो जीवन ही बिगड़ जाता है। वस्तुएँ देकर संसार का कोई व्यक्ति जीवन प्राप्त नहीं कर सकता। जीवन बहुत मूल्यवान है। जीवन और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वस्तुओं में चयन करना पड़े तो व्यक्ति को जीवन का चयन करना पड़ता है। उपनिषद् में ऐसा वर्णन आता है—कोई व्यक्ति दस्यु हो, बहुत बड़ी सम्पत्ति हो और रात्रि में अपने शयनकक्ष में विश्राम कर रहा हो और कोई दस्यु उसके ऊपर शस्त्र प्रहार करके उसके प्राण लेने लगे, तब वह कहता है प्राण मत लो; वस्तुएं दे देता हूँ। कभी ऐसा भी होता है कि अपने ही प्राणों पर बाधा आ जाती है। स्वामी रामतीर्थ ने एक बार यह दृश्य देखा। उन्होंने अपने ग्रन्थों में उल्लेख किया है—एक बार पुरानी झाड़ी, ऋषिकेश में, अब तो वह झाड़ी नाम की रह गई है—उस समय सघन झाड़ी थी। वर्षा का दिन था। बाढ़ आ गई थी। रामतीर्थजी वहाँ निवास कर रहे थे। उन्होंने देखा बहुत पानी बढ़ता जा रहा है। पानी इतना बढ़ गया कि जो शीर्ष शाखा थी वृक्ष की; वहाँ तक पहुँच गया। और वे दूसरा दृश्य देख रहे हैं कि एक बन्दरिया अपने उदर से छोटे से शिशु को चिपटाये हुए वृक्ष की शीर्ष शाखा की ओर बढ़ती जा रही है। पर एक बड़ा विचित्र दृश्य देखा उन्होंने, कि पानी जब बढ़ता गया और दोनों में से एक के प्राण की बारी आयी तब उन्होंने एक अद्भुत दृश्य देखा कि उस बन्दरिया ने अपने शिशु के ऊपर आसन लगाकर अपने को ऊँचा रखा और शिशु को नीचा रख दिया—कि यदि डूबने का काल आ रहा है और सचमुच जीवन जा ही रहा है तो पहले यह चला जायेगा और बाद में मैं चली जाऊँगी। रामतीर्थजी ने लिखा कि मानव को संसार में धन और जीवन दोनों में से एक को चयन करने का समय आये तो वह धन को छोड़ देगा और जीवन का चयन कर लेगा। संसार की कोई वस्तु इसलिए प्रिय होती है कि उसके जीवन को कहीं अन्तर से उसमें प्रियता की रसानुभूति होवे। कई बार तो संसार में ऐसा देखा जाता है कि पुत्र संसार में गृहस्थ को बहुत प्रिय है। मैं परिव्राजक हूँ। वर्ष में लगभग ३०० दिन तो मुझे भ्रमण ही करना पड़ता है। कुछ वर्ष पूर्व मैं किसी परिवार में गया था। छोटे-छोटे किशोर थे। वह व्यक्ति अपने पुत्रों की बड़ी प्रशंसा कर रहा था। मैंने कहा—'बड़े भाग्यशाली हैं कि आपको ऐसे अच्छे पुत्र मिले।' १०-१२ वर्ष बाद जाने का अवसर मिला तब तक भी कुछ ठीक था। फिर उसके बाद ४-५ वर्ष बाद फिर गया तो उनसे पूछा, 'सब लोग कैसे हैं—आनन्दित तो हैं।' बड़ा विचित्र सा लगा इतने वर्षों तक जिनकी वह प्रशंसा करता रहा, उसी व्यक्ति ने धीरे से मेरे कान में कहा कि मेरे पुत्रों के विषय में आप मुझसे कुछ न पूछें। दूसरी बात कहिए। मैंने कहा क्या हुआ? मुझे मन ही मन में विस्मय हुआ कि कहीं कोई अघटित बात तो नहीं हो गई? कहीं कोई प्रियजनों का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामूहिक वियोग तो नहीं हो गया और मैंने इनकी दुखती हुई शिरा को छू दिया हो ; मुझसे बड़ा अपराध हो गया हो ? मैंने कहा, 'कुछ अघटित घट गया क्या ?' कहने लगे, नहीं । 'हम तो उनको देखते भी नहीं—और हम उनके साथ बात भी नहीं करते । उन्होंने कुछ ऐसा व्यवहार किया कि मन में कुछ विचार ही नहीं आता ।' कैसी विचित्र बात । कहाँ प्रियता का मधुर सम्बन्ध और इतनी निकटता—और कहाँ उस व्यक्ति का नाम लेते हुए भी मानव को संकोच हो रहा है ! व्यक्ति के अपने ही इतने अन्तरंग के साथ भी ऐसे सम्बन्ध कैसे हो गये कि वह उसका नाम भी लेने में संकोच करता है । इसलिये मैंने कल भी कहा था, आज भी कह रहा हूँ । जगत में रहना बुरा नहीं है, लेकिन जगत के सम्बन्धों के साथ इतनी प्रगाढता हम सब लोगों के लिए कभी विषाद का कारण बन सकती है । इसलिए सम्बन्ध स्थापित करना ही है तो अन्तर्यामी से ही करना चाहिए । व्यवहार जगत में निभाना—कर्तव्य को पूरी तरह से निभाना जिन लोगों के साथ अपने सम्बन्ध हैं—उनमें कहीं कटुता नहीं आनी चाहिए । कहीं कोई दूरी नहीं मालूम पड़नी चाहिए । उस माधुर्य में भी कहीं कोई अभाव मालूम नहीं होने देना चाहिए । पर यह तो समझने की बात है—समझने की बात का प्रदर्शन नहीं होता है । यदि हममें से कोई प्रवचन सुननेके बाद घर पहुँचे और घरवालों से कहे कि प्रवचन का हम पर प्रभाव तो हुआ है । आज से हम रहेंगे तो आपके साथ लेकिन कैसा सम्बन्ध है हमारा, यह तो हम आज से समझ गये हैं—तब तो बड़ी कठिनाई होगी । बीच में विभेद और बढ़ जायेंगे । जो वस्तु बुद्धि के साथ समझी जाती है उसे प्रकट करने की आवश्यकता नहीं होती और अध्यात्म अन्तर में समझा जाता है । फिर व्यावहारिक जीवन में वह अपने आप आचरण से प्रस्फुटित होने लगता है, वह दूसरी बात है—लेकिन इसका कोई विज्ञापन नहीं करता है । वास्तविकता तो यह है कि जो विज्ञापन करते हैं, उनमें अध्यात्म कम ही होता है । (जिन २ वस्तुओं का संसार में विज्ञापन होता है । लोगों का अनुभव है कि विज्ञापन जितना अधिक हो रहा है उतनी वस्तु वास्तव में ठहरती नहीं ।) अध्यात्म तो विज्ञापन की वस्तु है भी नहीं । अध्यात्म से मनुष्य को कुछ लाभ लेना हो, तो चाहे गृहस्थ व्यक्ति हो ; चाहे विरक्त, वह आध्यात्मिक व्यक्ति लाभ समाज को यूँ ही बाँट देगा । वह अपने पराग और किंजल्क को यूँ ही वितरित करेगा । रामकृष्ण देव कहते हैं कि कमल जब खिलता है तब किसी को सूचना थोड़े ही देता है । वह जैसे ही खिला तो जहाँ २ भृंग हैं, न मालूम किस सूक्ष्म संदेश से उनको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह संदेश मिल जाता है कि अमुक सरोवर के कमल खिल गये हैं। वहाँ न कोई आकाशवाणी से उनको संदेश देता है न दूरदर्शन से। न कोई समाचार पत्र उनको संदेश देता है, न कोई व्यक्ति उनके पास संदेश ले जाता है। अपितु अन्तर का सम्बन्ध और उस वस्तु के प्रति प्रगाढ़ स्नेह उस व्यक्ति को अपने आप ही वहाँ ले जाता है। कमल कहाँ खिला है, कौन से सरोवर में—भृंग को ज्ञात होता है। भृंग कहाँ जाता है और उसमें से पराग या किंजल्क ले आता है। अध्यात्म कहाँ प्रस्फुटित हुआ है इसके विज्ञापन की आवश्यकता नहीं है। न विरक्त को आवश्यकता है और न गृहस्थ को। वह तो अत्यन्त गोपनीय तत्व है। और जो गोपनीय तत्व है, जिसे ज्ञात करना है। भगवान उसे तो ज्ञान करा ही देंगे। जिसको जिसके द्वारा राह मिलनी है भगवान उसको तो वहाँ प्रेषित करा ही देंगे। देवर्षि नारद के मन में उपासना होने के बाद भी आज जीवन विगड़ने का काल सामने समुपस्थित हो गया है। वे ऐसे सूक्ष्म क्षण हैं, इतने संवेदनशील क्षण हैं—यदि इधर चले जाते हैं तो जीवन समाप्त है—इतिहास विगड़ रहा है—जन्मान्तर की स्वीकृति है। पता नहीं फिर कितने दिन यात्रा चलेगी इसे कोई जान नहीं पाता है। भगवान ने कहा :—

उर अंकुरेउ गरबतरु भारी,
बेगि सो मैं डारिहउँ उखारी।

अन्तर्यामी ने देखा है। किसी दूसरे ने देखा नहीं। सब लोग तो वहाँ बैठे हैं लेकिन अन्तर्यामी ने विचार किया कि अरे मेरा उपासक, मेरा भक्त मेरा शरणापन्न इस व्यक्ति के मन में दूषित अंकुर अंकुरित हो गया। सारी बगिया ही इसकी दुर्वासित हो जायेगी। कोई ऐसा फूल होता है जो बहुत दूर तक सुगन्ध देता है। जब कलकत्ता और बम्बई जाता हूँ तो रजनीगंधा के ये फूल कितने सुवासित दिखाई पड़ते हैं—बड़ी दूर तक आप रखें तो सारा वातावरण इससे सुवासित होता है और कभी जंगलों में ऐसा फूल भी मैंने देखा कि यदि उसको रख दें तो नासिका फटने लगती है। मन को अच्छा नहीं लगता। एकदम ऐसा लगने लगता है कि विष उतर रहा है। भगवान ने देखा—उस अन्तर्यामी ने देखा कि मेरा उपासक, इसने कितना प्रयत्न किया। अपने जीवन का कितना शृंगार करके, साधना करके, एक उद्यान लगाया जिसमें प्रत्येक पुष्प अपनी अलग अलग सुषमा, सौंदर्य और सुगन्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेकर लहलहा रहा है। और कहाँ से इसमें अहंकार का एक ऐसा पुष्प उग आया है कि सारी सुवास को ही आच्छादित करने चला है—

'बेगि सो मैं डारिहउँ उखारी'

भगवान ने कहा इनसे तो गर्व तरु उखड़ने वाला नहीं, क्योंकि इन्हें तो प्रमाद ने जकड़ लिया है। और जब लोग प्रमाद से ग्रस्त होते हैं तो उनको अपनी बात ठीक दिखाई देती है। सारे शास्त्र उसके समर्थन में उसको खड़े दिखाई पड़ते हैं। उसकी प्रतिभा इतनी पैनी हो जाती है कि अपने व्यसन के समर्थन में वह महात्माओं के वचन झुठलायेगा। उसका तर्क इतना मुखरित होगा कि सामान्य व्यक्ति तो उसके सामने पराजित हो जायेगा। लेकिन यह कौन कर रहा है। यह मन कर रहा है। यदि इस समय मन का साक्षी बनने का कुछ प्रयत्न कर लिया जाये, तो फिर उपासना लहलहा जायेगी और यदि मन को मारने का प्रयत्न न किया जाये तो उस खेती पर फिर पाला पड़ जायेगा। जिसे बहुत अच्छी तरह पाला गया उसके ऊपर यदि पाला पड़ जाये तो इससे बड़ी क्षति और क्या हो सकती है। इसलिए उपासक को बहुत सावधान रहना पड़ता है। उपासना क्यों ? इसलिए कि, वह मानव जीवन, परमात्मा से ही परम शान्ति को प्राप्त करता है। कल के प्रसंग में निवेदन किया था कि चक्रवर्ती साम्राज्य मिल रहा है लेकिन भरतलालजी ने कहा है कि :—

'देखे बिनु रघुनाथ पद, जिय कै जरनि न जाइ'

इतना बड़ा साम्राज्य भी जीव की ज्वाला को, अन्तर की ज्वाला को शान्त नहीं कर सकता है। इसलिए पदार्थों की एक सीमा है और वे सुख के शिखर पर पहुँचायेंगे। जब सुख के शिखर पर आदमी पहुँच जायेगा तब वह सोचेगा कि अब क्या करें ? तब अध्यात्म निश्चित रूप से मानव को सुख के शिखर पर पहुँचाने के बाद, परम सुख की ओर प्रवृत्त करता है। क्योंकि परम सुख पदार्थ प्रदान नहीं करा सकते। जो सुख वे पदार्थ प्रदान कराते हैं उनकी कितनी भी सीमा हो ; लेकिन एक काल निर्धारित है। युवावस्था का सुख मानव को मिला तो वृद्धावस्था में वह उसे खो बैठेगा। संगीत का रस किसी व्यक्ति को मिला, लेकिन उसका एक काम है—उसके बाद उसे बन्द करना पड़ेगा। किसी को भोजन का सुख है तो वे पदार्थ खाते खाते यदि व्याधियोंने मुझे घेर लिया तो अपने आप ही वे पदार्थ सामने होने पर भी न खाने की इच्छा जागृत होने लगेगी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुख जितने भी प्राप्त किये जायें सीमा पर पहुँचने के बाद वे व्यक्ति को अपनी असमर्थता वतला देते हैं। लेकिन परम सुख का एक क्षण भी असीम होता है, और उसे पाने के बाद आदमी को कभी लगता नहीं कि अब इसे बन्द कर देना चाहिए। उसे अवरुद्ध करने की मानव की कभी इच्छा नहीं होती। मीरा मतवाली ने विषपान किया, लेकिन विषपान करने के बाद जिस अमृतत्व का अन्तर में अनुभव किया, उसकी सीमा कोई नहीं थी। और उस असीम में जीने के कारण उसने परमात्मा से बड़ी एकता स्थापित की। आज तक बहुत भक्त हुए हैं, लेकिन मीरा के सदृश तो कोई नहीं हुआ। उपास्य और उपासक दोनों कहीं जागतिक क्षेत्र में एक दिखाई पड़ते हैं तो वह मीरा के जीवन में ही दिखाई पड़ते हैं। इतने अपमान, इतनी कठिनाइयाँ सहने के बाद, जब भ्रमण करते हुए द्वारिका पहुँची तो द्वारिकाधीश से कहती है, 'महाराज अभी और कुछ बाकी है क्या ?' अपने आराध्यदेव से कहती है कि अभी कुछ और बाकी है क्या ? 'यदि कुछ और बाकी हो तो वो भी मैं तैयार हूँ। लेकिन अब यहाँ से वापस मत भेजना। इतने दिनों तक तुम्हें अन्तर में विठाकर रखा है। आज अपनी करुणा की सीमा पर पहुँचकर तुम मुझे अन्तर में बैठाओ प्रभु।' और लोग ऐसा कहते हैं कि विग्रह ने सदा २ के लिए मीरा को अपने में आत्मसात् कर लिया। विग्रह में समा जाने की धन्यता तो केवल मीरा को ही प्राप्त हुई, जहाँ आराध्य ने भेंट कर उसे अपने भीतर सदा सदा के लिए समाविष्ट कर लिया। उपासक की अन्तिम सीमा तो वह है जहाँ उपास्य दौड़कर उसे पाने के लिए छटपटाने लगे। ऐसे बड़भागी हम और आप हो जायें तो बड़ी अच्छी बात है। लेकिन बड़ी कठिन बात है क्योंकि वातावरण, परिवेश, संस्कार और वह भी न जाने कौन सा संस्कार मानव का कब जग जाता है। संस्कार का क्षय करना बहुत कठिन काम है। सम्पूर्ण वासना क्षय हो जाय यह तो परमात्मा की बहुत कृपा हो किसी भाग्यशाली साधक के ऊपर तभी ऐसा होता है। लगता है ऐसा कि बिलकुल ठीक हो गया है। गंगा के तट पर रहता हूँ इसलिए स्नान करने जाते हैं। जब वर्षाकाल समाप्त हो जाता है तब गंगाजी के नीर का दर्शन तो बड़ा आनन्ददायी होता है। ऐसा लगता है कि सब कुछ स्वच्छ है। किन्तु एक व्यक्ति के स्पर्श करने से धरातल में जो कुछ है सब कुछ ऊपर आ गया। उसमें गंगा का क्या दोष है ? यह तो मेरे ही अपने प्रवेश करने के कारण धरातल की माटी और कुछ उसका पंक ऊपर आ गया। उपासना चल रही है, नियमित हो रही है, मन कहता है अब तो हृदय का सरोवर बिलकुल निर्मल हो गया। परमात्मा के प्रति और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अधिक कृतज्ञ होने का भाव जागता है। कई बार तो अश्रु भी आपकी आखों से निकलते होंगे। रोम भी आपके पुलकित होते होंगे। बड़े भाग्यशाली होते हैं वे क्षण जीवन में, जब उपासना के क्षणों में ऐसे क्षण अवतरित होते हैं। अवतरित मैंने इसलिए कहा है कि जिनका अवतार होता है, वे कभी २ आते हैं। वास्तव में जीवन में ऐसे क्षण कभी २ आते हैं और वे क्षण बड़े सार्थक होते हैं। उन दिनों में लगता है बहुत अच्छा हो गया। लेकिन जैसे निर्मल नीर में जाकर पैर पड़ते ही कीचड़ आ जाता है, वैसे ही शान्त उपासना के काल में संस्कार का स्पर्श होते ही एकदम चंचलता कहाँ से आ जाती है, वह पता ही नहीं लगता। मन कहाँ चला जाता है पता ही नहीं लगता। जिन विचारों के संबंध में कभी सोचा भी नहीं था ऐसे विचार कहाँ से आ जाते हैं—यह ज्ञात नहीं होता। यह परमात्मा की कृपा से सम्भव होगा। साधना व्यक्ति को निरन्तर करनी चाहिए। उपासना व्यक्ति को नित्य करनी चाहिए—पर उपासना से ही उपास्य को पकड़ा जा सकेगा यह संभव नहीं। क्योंकि उपासना का अहंकार भी मानव के लिए बाधक होगा। उपासना कर्त्तव्य समझकर, जीवन का सर्वश्रेष्ठ क्षण है इसलिए उसे विनियोग करने का इससे अच्छा और कोई अवसर, मानव के लिए और कोई दूसरा कार्यक्रम नहीं हो सकता है। ऐसा मानकर उसे करना चाहिए। जिस दिन मानव के मन में अपनी उपासना का अहंकार आयेगा उस दिन और बड़ी कठिनाई होगी। उपास्य उससे दूर हो जायेगा। अहंकार परमात्मा का बहुत अप्रिय है।

'हरि से गर्व कियो सो हारयो'

एक बड़े सीधे साधे संत ने कहा कि जो अहंकार करता है फिर वह चाहे सात्विकता के तत्व का ही क्यों न हो, वह सात्विकता का अहंकार भी व्यक्ति के पतन का कभी भी कारण बन जाता है। उन महापुरुष ने जिन्होंने यह पद लिखा होगा हिन्दी के पुराने सन्त कवि थे। जंगल में घूमते हुए घुमची को देखा। घुमची का छोटा फल होता है। पुराने जमाने में सुनार लोग अपनी दूकान पर उसको रखते थे। उसका सारा वर्ण लगभग लाल होता है और उसी से वे माशा रत्ती तोला करते थे। उसी को घुमची कहते थे। सो उन्होंने कहा—

'हरि से गर्व कियो सो हारयो'

परमात्मा से जिसने घमण्ड किया वह हार गया। जंगल में सभी वनस्प-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तियों के बीच में सबसे सुन्दर होने के कारण वह घुमची सबसे कहती थी 'मैं बहुत सुन्दर हूँ'। सन्त कवि ने कहा—

'ता दिन से मुख कियो कारो,
हरि से गर्व कियो सो हारो,'

घुमची थी तो सुन्दर। लेकिन जब बार बार अपना बखान करने लगी तो परमात्मा ने कहा—अहंकार करती है तो इसके इस सौंदर्य का थोड़ा सा भाग कालिमामय कर दिया जाये।

हम और आप उपासना के क्षेत्र में निरन्तर सावधान होकर अग्रसर होते रहें। उसकी कृपा से ही उसकी उपासना हो रही है। और जब सफलता मिले तो अहंकार को अपने निकट न आने दें यह पहली बात है। दूसरी बात मानव को नित्य सत्कारपूर्वक अपनी उपासना करनी चाहिए। नियम का पालन करना यह बहुत अच्छी बात है, लेकिन नियम का पालन करते समय सत्कार बुद्धि होनी चाहिए नियम में। क्योंकि इसके द्वारा मेरे जीवन में प्रकाश होगा, जीवन में आनन्द आयेगा इसलिए जो मैं करने जा रहा हूँ, यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जो संसार में महत्वपूर्ण होता है उसी को व्यक्ति स्वीकार करता है। योग दर्शन के एक सूत्र में इसीलिए यह बात कही गई कि उपासक को अपनी उपासना के समय में स्थिरता-दृढ़ता, निरन्तरता और सत्कार बुद्धि इन चारों का ध्यान रखना चाहिए। यदि उसमें निरन्तरता रहती है, तो निरन्तरता रहने के कारण उसमें से उसका मैल हट जाता है। गंगाजी के किनारे आप रहते हैं। तीर्थ भी अपने देश के उत्तम २ प्रायः गंगातट पर हैं। गंगाजी की महिमा शायद इसीलिए स्वीकार की गई होगी कि गंगा के प्रवाह में निरन्तरता है। आज तक किसी साधक ने जब से गंगा प्रकट हुई होगी, और भगवान ने कृपा करके सगर पुत्रों को उद्धार करने के लिए भगीरथ को यह पुण्य प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया होगा, तब से लेकर आज तक किसी व्यक्ति ने गंगा के किनारे बैठकर, यह कहीं इतिहास में नहीं लिखा कि एक दिन गंगाजी को मैंने देखा था विश्राम कर रही थी—उसका प्रवाह अवरुद्ध हो गया था ऐसा कोई साधक, कोई इतिहास का विद्यार्थी नहीं कह सका। अर्थात् गंगा ने अपनी निरंतरता को एक दिन भी विराम नहीं दिया। उपासना एक गंगा है। वह मानव के जीवन के कलुष को धोती है। जैसे गंगा कभी अपनी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निरन्तरता में अवरोध नहीं लाती, वैसे ही हजार काम आने पर भी हमको और आपको अपनी उपासना की निरन्तरता में अवरोध नहीं आने देना चाहिए। तब निश्चित परिणाम—परिणाम तो उसका क्या है? परिणाम अभी मैंने आपसे निवेदन किया—

'सन्तुष्टो येन केन चित्'

परमात्मा के मंगलमय विधान में पूर्णरूप से अपने को प्रसन्न रखने की इच्छा। जब अपने २ जीवन में मन के अनुसार, सोचे हुए के अनुसार बहुत कुछ सुखद प्रदान किया हो तब यही कहते रहे कि भगवान की कृपा है। और यदि कभी अपनी इच्छा के विरुद्ध, अपने मन के विरुद्ध १-२ या १० दिन के लिए कुछ प्रतिकूलता भी वह दें तो उस समय यही विचार आये कि परमात्मा इतने वर्ष तक निरन्तर मुझे अनुकूलता का प्रसाद देता रहा। यदि कुछ काल तक प्रतिकूलता का प्रसाद दे रहा है तो जैसे मैं उस प्रसाद में प्रसन्न रहा था इस प्रसाद में भी प्रसन्न रहने की सामर्थ्य परमात्मा मुझे दे। परमात्मा से हर कोई सामर्थ्य माँगता है जिसमें उसके संतुलन को कोई तोड़ न सके। और यदि आप आन्तरिक रूप से संतुलित हैं—वाह्य रूप से कर्तव्य पालन करने के लिए उग्रता का कभी नाटक करना पड़े—कभी आपको व्यवस्था चलाने के लिए अपने धन के संबंध में बातचीत भी करनी पड़े तो इसमें कोई क्षति नहीं। संसार में अभिनय करते हुए भी व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूप का विस्मरण नहीं करता है। वैसे उपासक उपासना करते हुए उसमें से एक शक्ति लेता है। और वह शक्ति उसके जीवन का संजीवनी रस बन जाती है। जिसको जीवन के संजीवनी रस की प्राप्ति हो गई, वह व्यक्ति म्रियमाण नहीं होता। जीवन छूटने के समय भी उसकी संजीवनी शक्ति, उसकी आराधना और उपासना का बल, उसे अपने वस्तु तत्त्व में स्थित करता है और उसे परतत्त्व का बोध नहीं होता। सबमें वह अपने स्वरूप का दर्शन करता है। प्रारम्भ में मैंने निवेदन किया उपासक के जीवन का पल है परतत्त्व का निषेध। निजत्व की प्रतिष्ठा और उसका विस्तार। और जहाँ निजत्व का बोध हुआ वहाँ भय समाप्त हो जाता है।

'द्वितीयाद्वै भयम् भवति'

दूसरे की कल्पना भय देती है। अपर की कल्पना का विनाश निर्भयता देता है और जो व्यक्ति जितना निर्भय है वह उतना ही अध्यात्म में है। एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

छोटे से युवक की बात कहने चला था रह गई है। कल पुनः निवेदन करने का यत्न करूँगा।

उपासना परमात्मा के साथ निकटता स्थापित करने का एक उपाय है। हमारे शास्त्रों में अनेक उपाय बताये गये हैं, और अनेक व्यक्ति की अपनी २ भाव-धारा भी भिन्न होती है। इस भाव-धारा के अनुसार मानव अपने जीवन में उस परमतत्व के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का यत्न करता है। पर जो जिस भी अवस्था में वह रहे हों, चल रहे हों, उनके जीवन की साधना पद्धति भिन्न होनेपर भी, प्रारंभिक स्थिति में उन्हें निश्चित रूप से उपासना तत्व से अपने को जोड़ना पड़ता है। साधारण धर्म की शिष्टाचार-विधि को भी यदि देखने का यत्न किया जाय तो यह ज्ञात होगा कि वैदिक सभ्यता के प्रारंभिक काल में, जब वैदिक सभ्यता के सूर्य ने धरती पर अपनी पहली किरण का अवतरण किया होगा, उसी दिन से मानव को निराधार न रहना पड़े या उसके लिए कुछ व्यवस्था नहीं—और तब ऋषियों ने कहा :—

'अहरहः सन्ध्यां उपासीत्'

प्रतिदिन मानव को संध्या करनी चाहिए। वैदिक वचन में, ब्राह्मण ग्रन्थों में उपासीत् शब्द यहाँ आया कि अहः-अहः—प्रतिदिन, मानव को संध्या करनी चाहिए। संध्या का अर्थ है परमात्मा से अपने को जोड़ने का किंचित प्रयत्न। जो नित्य करना चाहिए। हम सभी को मालूम है कि विद्युत प्रवाह जो देखते हैं, वहाँ प्रकाश कहाँ से आ रहा है। और जहाँ से आ रहा है वह मुख्य एक स्थान है। जहाँ इसको उत्पन्न किया जाता है। वहाँ से वह बिजली आती है पावर हाउस की सारी की सारी बिजली यदि एक ही स्थान पर आ जाये तो हो सकता है कि आधार बहुत दृढ़ न होने के कारण वह आधार वह पड़े, और उसमें से कोई स्फुलिंग निकले—विस्फोट हो जाये और प्रकाश के स्थान पर ज्वाला भी प्रकट हो सकती है। इसलिए वैज्ञानिकों ने जहाँ से वह विद्युत उत्पादन हो रहा है, वहाँ से उसे प्रवाहित करने के लिए बीच-बीच में छोटे-छोटे आधारों का निर्माण किया। उन ट्रान्सफार्मरों के द्वारा हम सभी लोगों के घरों में वह विद्युत प्रवाह एक छोटे से बल्ब के रूप में, सबके अन्धकार को दूर करने के लिए मिलता है। इसमें बिजली के खम्भे की भी आवश्यकता है, तार की भी आवश्यकता है, और पूरा का पूरा वह विद्युत प्रवाह किसी अन्धकार को मिटाना चाहे तो उसे एक बहुत छोटे से उपकरण बल्ब की भी आवश्यकता है। इनमें जितने भी उपकरण दिखाई पड़ रहे हैं उनमें से किसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक को भी नकार पाना संभव नहीं लगता है। एकके विना दूसरा अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर नहीं पायेगा। एक को दूसरे के साथ विना संयुक्त किये हुए, संभवतः उस प्रकाश को हम प्राप्त नहीं कर सकेंगे। इसलिए वैदिक काल के ऋषियों ने कहा—मानो एक छोटी इकाई है। परमात्माकी उस अपार शक्ति के प्रकाशन के लिए भी मानव ही एक ऐसा आधार है जिसके भीतर से वह प्रकट होती है। अपनी वहुत सारी दिव्य लीलाओं को महापुरुषों के पावन चरित्रों के द्वारा समाज में प्रस्थापित करता है। वह फिर चाहे भगवान आदि शंकराचार्य हों और फिर चाहे भगवान रामकृष्ण परमहंस हों। उनके पावन चरित्रों के द्वारा, परमात्मा कुछ ऐसे आचरणों की स्थापना समाज में करता है कि जिनसे लोग प्रेरणा लेकर अपने आचरण को शुद्ध और दिव्य वनाने के मार्ग पर चलते हैं। पूर्व संस्कारों के कारण असफलता भी हाथ लगती है। पर वार-वार, चलते २, मानव आगे पूर्ण सफलता की भी सिद्धि प्राप्त कर लेता है। कोई व्यक्ति यह मान ले कि साधना करनी प्रारम्भ की और फिर असफलता न मिले यह तो संभव नहीं। क्योंकि मानव के पूर्व संस्कार कहाँ कहाँ कव उदित होते हैं इसका कोई निश्चित विज्ञान नहीं है और इसके विषय में ज्योतिषी पूरी तरह से कोई उद्‌घोषणा सम्भवतः नहीं कर सकते हैं। लेकिन 'अहरहः संध्या उपासीत्' कहकर वैदिक काल के ऋषियों ने मुझे और आपको यह संदेश दिया कि जीवन में जैसे अन्य सव कार्य हम करते हैं, वैसे ही जीवन में एक अनिवार्यता मानव की वन जानी चाहिए। यदि मानव के जीवन में कोई ऐसा पावन तत्व अनिवार्य रूप से जुड़ जाये, तो उस अनिवार्यता के कारण मानव के जीवन में निरन्तरता आती है। कल मैंने कहा था कि मानव की उपासना में निरंतरता—दृढ़ता और नियमितता, यह तीन वातें आ जाने के वाद स्वयं जीव यह अनुभव करता है कि उपासना मेरे जीवन में प्रतिपालित हो रही है। एक नियम के रूप में स्वीकार करना अच्छी वात है! उसमें से भी अनुशासन जीवन में आता है। अनुशासित व्यक्ति अनुशासित समाज, अनुशासित राष्ट्र, सभी मानव के कल्याण के लिए हैं। व्यवस्थाऐं अच्छी चलती हैं। लेकिन मशीनीकरण कर दिया जाय तो स्वाभाविक रूप से कई वार अपने आप ही मशीन के द्वारा संचालित व्यवस्था, मानव के द्वारा संचालित व्यवस्था से भी कभी कभी अधिक ठीक दिखाई पड़ती है। उपासना एक एक ऐसी व्यवस्था नहीं है जो कि मशीन की तरह संचालित होती हो। क्योंकि मशीन व्यवस्था को तो संचालित कर सकती है, किन्तु उसके वाद भावोद्रेक उसमें नहीं हो सकता है। भावना का उद्रेक तो मानव को उपासना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करने के लिये परमात्मा ने प्रथम आधार दिया है यह देह। जिसकी बहुत वन्दना की गई। अपने आप में मानव-देह प्राप्त करना भी बहुत श्रेय की बात है। बड़े कल्याण की बात है। आप सभी सुधी श्रोता यहाँ उपस्थित हैं—इसलिए मानव-तन की वंदना के संबंध में, उसके वैशिष्ट्य का वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है ; क्योंकि मानस में और श्रीमद्भागवत में अनेक बार उन शब्दों को उच्चारित होते श्रवण किया है, जिनमें इस मानव-तन की वन्दना बार बार की गई। और इस मानव-तन को पाने के लिए सचराचर में प्रत्येक व्यक्ति लालायित दिखता है ऐसा भी शास्त्रकार और पंडित कहते हैं।

'जीव चराचर याचक देही'

सारे संसार के चर और अचर जीव इसकी याचना करते हैं। याचना करना बहुत अच्छा कार्य नहीं माना गया है, लेकिन याचना इसलिए करते हैं कि यदि मानव-तन मिल गया तो इस मानव तन को प्राप्त करके देवत्व का जागरण हो सकता है—नारायणत्व की प्रतिष्ठा हो सकती है, और उस उपासना की सिद्धि हो सकती है जिसे सिद्ध कर लेने के बाद मानव के मन में किसी प्रकार की दूसरी कोई आकांक्षा शेष नहीं रह जाती।

'ये मानवाः विगतराग परावरज्ञा
नारायणं सुरगुरुं सततं स्मरन्ति
ध्यानेन तेन हतकिल्विषस्ते
मातुः पयोधर रसं न पुनः पिबन्ति'

महर्षि वेदव्यासजी ने कहा—फिर से मानव को धरती पर आना नहीं पड़ता है। एक ओर मानव बनने के लिए सारे संसार के जीव, चराचर प्राणी परमात्मा से प्रार्थना कर रहे हैं, याचक बन रहे हैं। और दूसरी ओर हमारे शास्त्रों के परम पारंगत आचार्य महर्षि वेदव्यासजी कहते हैं कि मानव बनकर फिर संसार में उस व्यक्ति को आना नहीं पड़ता है। दोनों ही चिन्तन हैं। मानव इसलिए बनकर आना चाहता है कि उपासना मिले। उपासना इसलिये करना चाहता है कि फिर से मानव अब न बनना पड़े। मैं मुक्त हो जाऊँ। आवागमन का यह चक्र मेरा अवरुद्ध हो जाये। बहुत ही सुन्दर बात कही। उपासना तो कीजिए, किन्तु उपासना करते करते मानव को अपने अन्तःकरण की शुद्धि का भी बार बार विचार करना है। जो उपासक होता है वह मृत्यु से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

डरता नहीं और वह बच भी जाता है। देह की मृत्यु हो तो मानव उस मृत्यु का भी साक्षी हो जाता है। जब कोई साक्षी होता है, द्रष्टा होता है तब घटने वाली घटनाएँ उससे भिन्न हो जाती हैं। इसलिये उसे प्रभावित नहीं करतीं। कबीर और कमाल पिता और पुत्र हैं लेकिन बड़ी नोकझोंक आपस में कई बार हुआ करती थी—कबीर ने तो यह कह दिया—

'चलती चक्की देखकर दिया कबीरा रोय
दो पाटन के बीच में साबुत बचा न कोय'

कबीर ने कहा—द्वन्द्वों की यह बहुत बड़ी चक्की चल रही है। इन द्वन्द्वों के दो पाटों के बीच में सारा संसार पिसता चला जा रहा है। गीताकार भगवान श्रीकृष्ण ने बार बार कहा कि—इन पाटों के चलने पर अपने को पृथक रखने का प्रयत्न करो। अर्जुन को उन्होंने कहा।

'द्वन्द्वातीतो भवार्जुन'

अरे अर्जुन! तू द्वन्द्व से अतीत हो जा। जब कबीरदास ने यह बात कही तब कमाल ने कहा—'पिताजी मुझे तो आपकी बात से सहमति प्रकट करने का मन नहीं हो रहा है'। कबीर ने कहा—'मैं अपना अनुभव बता रहा हूँ कि चक्की के दो पत्थरों के पाटों के बीच में जो भी आ जायेगा वह तो पिस ही जायेगा'। उसने कहा—

'चलती चक्की देखकर हँसा कमाल ठठाय
जो कीली से जा लगा, सोइ धन्य बच जाय'

कबीर ने कहा कि दोनों पाटों के बीच में जो आ गया वह पिस जायेगा। कमाल ने कहा—'नहीं, बाबा आप जो बात कह रहे थे उसमें, कुछ परिवर्तन करना चाहता हूँ। आप कहते हैं दुनिया रो रही है पर कमाल तो हँस रहा है'। कबीर ने कहा—'तू ठठ्ठा मार कर क्यों हँस रहा है—उसने कहा, 'मेरा चिन्तन आपसे कुछ भिन्न है। मेरा चिन्तन यह बिलकुल ठीक है लेकिन इसमें थोड़ा-सा परिवर्तन कीजिए कि 'जो कीली से जा लगा सोइ धन्य बच जाय।'

जो उसके मध्य बिन्दु में लोहे की कील के पास दाने पड़े रह जाते हैं वे बच जाते हैं। सुबह से शाम तक पीसने वाली माताएँ बहनें पीसती हैं—गाँव में ५-१० किलो जितनी जिसकी सामर्थ्य होती है। और शाम को जब अपनी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चक्की को स्वच्छ करती हैं, तब उन्हें बड़ा विस्मय होता है कि इतने सेर दाने तो पिस गये ; लेकिन ३०-४० बच गये। कैसे बच गये ? यह सारा द्वन्द्व के पाट में संसार पिस रहा है। दब रहा है—पीड़ा का अनुभव कर रहा है। लेकिन जो परमात्मा की उपासना कर रहा है अन्तःकरणपूर्वक ; उस मध्य विन्दु संसार का जो मध्य विन्दु है जिसके चारों ओर संसार नाच रहा है, या फिर जो संसार को नचा रहा है—जो भी कह लें, दोनों की बातें ठीक हो सकती हैं। क्योंकि सारे संसार को नचाने वाली शक्ति परमात्मा ही है। एक दिन पूर्व मैंने कहीं कहा था कि सारे संसार में जो कुछ हो रहा है यदि आध्यात्मिक दृष्टि की पराकाष्ठा पर पहुँच जाये तो न किसी को सुधार करने की इच्छा है न विचलित करने की इच्छा है फिर तो जो कुछ हो रहा है—

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई
करे अन्यथा नहिं अरु कोई।

जो कुछ भगवान करना चाहते हैं, वही होता है और कोई अन्यथा उसे करना चाहे, ऐसा दिखता नहीं। रामचरितमानस में एक चौपाई इतना आश्वासन देती है कि आदमी को चुपचाप बैठ जाने का मन चाहता है। लेकिन दूसरी ओर फिर गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं कि यदि चौपाई पर पूरा विश्वास कर लोगे, तो तुम्हारे भीतर में जो परमात्मा ने सम्भावनाएँ प्रसुप्त करके छिपा रखी हैं उनके प्रकटीकरण का काम कब आयेगा ? मानव तन एक ऐसा तन है जिसमें मानव उन समस्त गुणों की संभावनाओं को मूर्त रूप प्रदान करने के बाद स्वयं अपने लिये और विश्व के लिए ऐसे पावन साम्राज्य का निर्माण कर सकता हैं जिसमें पवित्रता में जीने वालों की संख्या बढ़ती चली जावे और लोक जीवन में रहता हुआ मानव आत्मिक दिव्य राज्य का अनुभव करते हुए परम सुख का अभिलाषी बन जाये। इसके लिए परमात्मा ने मुझको और आपको इस सृष्टि में प्रेषित किया है। इसीलिए गोस्वामी तुलसीदासजी ईश्वर के विधान को पूरा स्वीकृत करते हुए भी, व्यक्ति के कर्म जो जागृत रखने के लिए कहते हैं कि—

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा।
जो जस करिय सो तस फल चाखा ॥

कर्म के सिद्धान्त का फिर से समर्थन किया।

मध्य विन्दु है परमात्मा। उसके चारों ओर हम और आप घूम रहे हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह ऐसी नियामक शक्ति है जो सारे संसार को नचा रही है। कमाल ने कहा, मेरे पिता कबीर, मैं तुम्हारी बात से इसलिए सहमत नहीं हो पाया कि तुमने सभी को दोनों पाटों के बीच में दबा दिया और सबको रुला दिया। मानव का पूरा का पूरा रुदन ऐसा नहीं हो सकता। यह ठीक है कि जब जीव संसार में आता है, अज्ञान के कारण रुदन करता है। पौराणिकों का मत है कि किसी दिव्य शक्ति के साथ अचानक उसका नाता टूटता है और नाता टूटने का अनुभव अपने अन्तर में करता है इसलिए प्रथम दिवस में आने वाला जीव शिशु के रूप में रुदन करता है। लेकिन रुदन उसके जीवन का लक्ष्य नहीं है। रुदन के लिए मानव संसार में आया नहीं है। शोक, उदासी और रुदन की अवस्था का विनाश करने के लिए तो सम्पूर्ण शास्त्रों का सृजन हुआ है। उनकी रचना हुई। अर्जुन को भगवान ने पूरी गीता इसीलिए तो कही कि तुम शोकमुक्त हो जाओ। और उपासक और आत्मवित व्यक्ति की पहचान भी यही है। किसी ने पूछा कि **आत्मवित्** की पहचान क्या है? उसके पास ऋद्धियाँ सिद्धियाँ होंगी? वह कोई चमत्कार दिखाता होगा? वह बहुत बड़ी प्रतिष्ठा के शीर्ष सिंहासन पर बैठ जायेगा। ये सब बातें तो अवान्तर हैं। कभी किसी के साथ घटती हैं और कभी किसी के साथ नहीं भी घटतीं। लेकिन **आत्मवित्** और उपासक व्यक्ति की सबसे बड़ी पहचान तो यह है कि—

'तरति शोकं आत्मवित्'

जो **आत्मवित्** व्यक्ति है, शोक से पार चला जाता है। शोक उसमें आयेगा ही नहीं यह भी संभव नहीं है। यदि कोई सरिता प्रवाहित है तो उस सरिता में तरंग नहीं उठेंगी यह कैसे संभव है? यदि वह तरंगायित नहीं होगी तो वह सरिता नहीं होगी। वह तो फिर वर्फ का जमा हुआ सरोवर हो जायेगा। इसलिए यह भी संभव है कि, जिस तरह सरिता में तरंग उठती है वैसे ही मानव होने के कारण आपके भीतर भी सहज रूप से एक क्षणिक तरंग, शोक की भी आ सकती है। लेकिन यहाँ तो विचारकों ने कहा—'तरति'। उस शोक को पार कर जाता है। तरंग उठी; लेकिन उस तरंग को स्थायी अपने जीवन में नहीं रहने देता है। यदि जीवन की सरिता में तरंग ही न उठे तो इस जीवन की सरिता की सुषमा भी क्या है? उसके प्रवाह का ही तो आनन्द है। उसमें उठने वाली ऊर्मियाँ ही तो उसकी जीवन्तता का स्वरूप हैं। और वह इसे प्रमाणित करती हैं कि इसमें गति है। इसमें जीवन है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसमें अपने किसी प्रिय से मिलने की आकांक्षा है। अपने श्रद्धास्पद से भेंट कर, अपने को कृतार्थ करने का एक समग्र चिन्तन इसके भीतर व्याप्त है। यह उसकी ऊर्मि ही उसका दर्शन कराती है। ठीक इसी प्रकार हम और आप आये हैं। कभी मान मिलता है, कभी अपमान मिलता है। कभी व्याधि मिलती है, कभी स्वास्थ्य मिलता है। कभी वियोग मिलता है, कभी संयोग मिलता है। इन द्वन्द्वों को समग्र रूप से मिटा पाना न भगवान के लिए शक्य हुआ और न भक्त के लिए शक्य हो सकता है। यदि भगवान के लिए होता तो राम के जीवन में वनवास का काल नहीं आता। चलो एक बार आ गया, जैसे तैसे १४ वर्ष पूर्ण कर लिये जाते। लेकिन फिर उसके बाद सीता के अपहरण का समय नहीं आता। सीता के अपहरण का समय भी आ गया फिर चलो उस दुःख को भी पार कर लिया जाता। पर युद्ध के मैदान में सर्व समर्थ सारे संसार के नियामक—प्राणों के पोषक—जीवन के प्रदाता श्रीराम की उपस्थिति में लक्ष्मण को मूर्छित होकर एक कष्ट में और वृद्धि करने का अवसर नहीं आना चाहिए था। लेकिन ये सारे प्रमाण भगवान की लीलाओं में भी इसलिए घटित होते हैं, कि संसार में सामान्य जीवन व्यतीत करने वाले उपासक को इस बात का ज्ञान बना रहे कि जीवन की ये घटनाएँ, परात्पर पुरुष यदि मानव बनकर आये तो भी उसे छोड़ती नहीं। और ये घटनाएँ साधारण-सामान्य व्यक्ति को छोड़ दें यह संभव ही कैसे हो सकता है। जैसे—भगवान श्रीराम के जीवन में चक्रवर्ती साम्राज्य मिलने जा रहा है। और वे वनवासी होते हैं। वनवासी होते समय भी भगवान की सुख श्री म्लान नहीं होती। आनन पर उदासी की कोई रेखा नहीं दिखाई पड़ती। वैसे ही द्वन्द्व के पाटों में बार बार पिसने पर भी व्यक्ति, जो परमात्मा रूपी कील है, उस परमात्मा रूपी कील के निकट पहुँचने का यदि यत्न करता रहेगा तो, उस उपासक के जीवन में बाह्य जगत में घटने वाली घटनाओं का उतना प्रचुर प्रभाव नहीं होगा जितना सामान्य संसारी के ऊपर होता है। स्वाभाविक रूप से पदार्थ के ऊपर पूर्ण विश्वास करने वाला व्यक्ति यह प्रश्न कर सकता है कि यदि संसार में घटने वाली घटनाओं का निवारण नहीं किया जा सकता, तो उपासक बनकर उसके लिए इतना कालक्षेप करने की आवश्यकता क्या है? मैं अभी निवेदन कर चुका हूँ कि घटनएँ भले ही परिवर्तित न हों; किन्तु घटनाओं का प्रभाव आपके ऊपर नहीं पड़ेगा। किसी गाँव में बड़े गरीब लोंग रहते हैं। वर्षा होने लगी है। बड़े जोर की वर्षा हो रही है। परिवार का एक छोटा सा बालक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अस्वस्थ हुआ है। झोपड़ी में रहने वाली महिला ने अपने पति से आग्रह किया है कि जाओ बालक बहुत अस्वस्थ है इसलिए औषधि लेकर आओ। पैसे तुम्हारे पास नहीं होंगे लेकिन मैंने मितव्ययिता के कारण थोड़े से पैसे बचा रखें हैं, तुम ले जाओ। जब उसने देखा कि यह मुझे २५ रुपये के नोट दे रही है लेकिन ये तो कागज के हैं। बाहर मूसलाधार वर्षा हो रही है। पति कहता है कि गरीबी के कारण अपने पास तो छाता है नहीं। और तुम आग्रह कर रही हो कि मुझे इस समय चिकित्सक के पास जाना चाहिए। कैसे जाऊँ? यदि जाता हूँ तो ये नोट भीग जायेंगे। महिला चतुर है, बुद्धिमान है। उसने कहा—एक दिन तुम बाजार से मिठाई लाये थे। प्लास्टिक के थैले में लाये थे। मैं गरीब हूँ इसलिए छोटी छोटी चीजों को भी सँभाल कर रख देती हूँ। छाता नहीं तो कोई बात नहीं। प्लास्टिक के इस थैले में नोट को बाँधकर देती हूँ। जितनी भी मूसलाधार वर्षा में जाओ, चिन्ता नहीं। तुम भले ही भींगो पर ये नोट नहीं भींगेंगे। चिकित्सक के पास से औषधि लाना इसी में फिर से बाँध लेना। तबतक मौसम बदल जायेगा। वातावरण अनुकूल हो जायेगा। तुम्हारी कठिनाई मिट जायेगी। बड़ी सामान्य, गाँव की रहने वाली महिला, उसने उन नोटों को लपेट दिया। आवेष्टित कर दिया प्लास्टिक के एक साधारण थैले में; विज्ञान के इस युग में मिलने वाले एक नये वस्त्र के स्थान पर प्रयोग में लाये जाने वाली वस्तु में। अब देखें। दृष्टान्त के रूप में विचार करें। उपासना आपने प्रातःकाल की, सायंकाल की। जब आपको समय मिला तब की। आज आपको पता नहीं लग रहा है कि आपको कुछ लाभ मिलेगा। उस महिला को भी पता नहीं था कि मैंने जो प्लास्टिक का छोटा सा थैला, जो बिलकुल बेकार-सा है, मैंने रख छोड़ा है कभी कोई लाभ देगा। लेकिन मेघ बरसे—पूरी वर्षा हुई; किन्तु नोट न भींगे। घटनाओं की वर्षा हुई। परिस्थितियों की वर्षा हुई। कभी अनुकूलता बनकर बरसी और कभी प्रतिकूलता के सघन मेघ निरन्तर पूरी शक्ति और वेग के साथ बरसते गये। पर उपासना के आवेष्टन में लिपटा हुआ आपका अन्तःकरण परिस्थितियों की वर्षा में भीगा नहीं। और आप निश्चिन्त होकर उसमें आनन्द के साथ रह सके। उपासना का फल यदि व्यक्ति प्रतिदिन देखने का प्रयत्न करे तो भी, यदि ऐसा दर्शक बन जाये तो उसकी अनुभूति होती है। यदि प्रतिदिन उसका कोई फल न दिखाई पड़े तो भी कई बार ऐसा संभव नहीं होता है कि एक ही दिन में कोई लाभ दिखाई पड़ेगा। जो बड़े साधारण लोग होते हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जो एक एक बूंद करके इकट्ठा करते हैं उनका घट भर जाता है, घटों से सरोवर भर जाता हैं। एक एक कण से बहुत बड़ी राशि बन जाती है। उपासना का एक एक क्षण परमात्मा की ओर प्रस्थान करने की, जीवन की वह गति है, जहाँ वह आराध्य के निकट पहुँचने का प्रयत्न कर रहा है। अभी मैंने महर्षि वेदव्यासजी का एक श्लोक उद्धृत करने का यत्न किया था जिसमें वह कह रहे हैं कि उपासना करते २ मानव को फिर संसार में नहीं आना पड़ता है। किसको नहीं आना पड़ता है —

'ये मानवाः विगतराग परावरज्ञा, नारायणं सुरगुरुं सततं स्मरन्ति'

संस्कृत भाषा और प्राचीन ऋषियों के एक एक शब्द बड़े गहरे हैं और उनमें बड़ा भाव है। उन्होंने कहा —'सततं स्मरन्ति' और एक शास्त्र दूसरे शास्त्र का समर्थन करता है। उपासना के सातत्य को श्रीमद्भगवत्गीता भी सार्थक करती है। गीता में भी भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

तेषां सतत् युक्तानाम्, भजताम् प्रीति पूर्वकम्।
ददामि बुद्धि योगं तम्, येन मामुपयान्ति ते ॥

उपासक परमात्मा को प्राप्त करता है, किन्तु कौन सा उपासक परमात्मा को प्राप्त करता है ? जिसकी उपासना में सातत्य है।

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा कि कभी २ दुःख पड़ने पर मानव भगवान का स्मरण करे तो अच्छा है। लेकिन कभी कभी करने से जीवन की अन्तरवृत्ति में तैलधारावत सातत्य नहीं जग पायेगा। जीवन में निरंतर एक ब्रह्माकार वृत्ति, इष्टाकार वृत्ति, प्रभु के साथ मिलन की जीवन में जो सतत अनुभूति होती है, उस अनुभूति से हम और आप वंचित रह जायेंगे यदि हमारी उपासना में सातत्य न आये।

भगवान ने कहा कि दो लाभ होते हैं। उपासना में यदि निरंतरता आ जाये तो बड़ी कठिनाई है। क्योंकि परमात्मा ने एक अधिकार अपने पास ऐसा सुरक्षित रख रखा है, जिसे करुणा कर के किसी दूसरे को देने का अधिकार दिया ही नहीं। भगवान ने सब तिजोरी की चाबी दे डाली होगी लोगों को, लेकिन एक तिजोरी की चाबी अपने पास रखी है। और कहते हैं इसको मैं ही खोलूँगा। घर में भी ऐसा होता है कि जिसमें बहुत मूल्यवान वस्तु हो, तो उसे परिवार का बहुत वृद्ध व्यक्ति हो या वृद्ध माता हो तो कहती है, और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सब चाबी रखो लेकिन इस तिजोरी की चाबी तो तब तक मैं ही रखूंगी। जब तक यह मुझे पूरा विश्वास न हो जाये कि तुमसे कोई इन वस्तुओं को ले न जाये। सुरक्षा की तुम्हारे अन्दर शक्ति जग जाये। विवेक तुम्हारा जाग्रत रहे। अपव्यय करने की कभी इच्छा न हो'—तभी वह अधिकार लौकिक जगत में मिलता है। लेकिन परमात्मा ने अपना वह अधिकार आज तक किसी भक्त को प्रसन्न होकर दिया ही नहीं।

भगवान ने कहा—उपासक और सतत् स्मरण करने वाले व्यक्ति को मैं ही अपनी कृपा से बुद्धियोग देता हूँ। दुनिया के किसी भी सामर्थ्यवान सम्राट के पास भी यह शक्ति नहीं। वह आपको अर्थ दे सकता है, रत्न दे सकता है, भूमि दे सकता है, कोष दे सकता है। भूमि के भीतर भी बहुत सारे रत्न और राशि जहाँ से प्राप्त होते हैं, वे सारे के सारे भूमि खण्ड को दे सकता है। लेकिन बुद्धि देने का अधिकार परमात्मा ने रखा। हाँ; वह बुद्धि मिलती है। किसको मिलती है? जो वास्तव में समर्पित होने का यत्न करता है, वह उसे ही माँगता है। इस देश के पहिले ऋषि ने सबसे पहले बुद्धि ही माँगी भगवान से। जो गायत्री मन्त्र है उसमें बुद्धि की ही याचना की गई है। बुद्धि और पदार्थ इन दोनों में से भारतीय बुद्धि को ही स्वीकार करता रहा। संसार के और सभी धर्मावलम्बी उत्तम हैं। मुझे उनकी आलोचना करने का किंचित मात्र भी अधिकार नहीं लेकिन जब सभीक्षा की भूमि पर खड़े होकर देखते हैं, तब वैदिक जीवन पद्धति में एक विशेषता दिखाई पड़ती है, कि गुरुकुल में गया हुआ विद्यार्थी, परिवार का परित्याग करके जाने वाला छात्र, नित्य समिधा और नित्य तपश्चर्या-पूर्वक प्राप्त करने वाला वह विद्यार्थी, सायंकाल, प्रातः काल मध्याह्नकाल सरिता के पुलिन पर गुरु की आज्ञा से गायत्री का मन्त्रोच्चार करता है। उसमें 'धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्' ऐसा कहकर परमात्मा से बुद्धि माँगता है। उस साधारण से किशोर को इस बात की जानकारी दिलाई जाती है, कि संसार की वस्तुएँ तो तुम्हें भी दे सकेगा लेकिन बुद्धि तो उपासना के द्वारा परमेश्वर से ही प्राप्त की जा सकेगी। इसलिए उस समय की शिक्षण पद्धति में इस उपासना का बहुत बड़ा योगदान रहा है। उसके द्वारा बहुत मनीषी इस देश में आये, जिन्होंने ज्योतिष में, छन्द में, अलंकार में, कविता में, और जीवन की अन्य अनेक विधाओं में बहुत कुछ दिया। साहित्य के भण्डार को भरने वाले उस काल के विद्वानों ने इतना श्रम किया, लेकिन उस श्रम के साथ उपासना का बल होने के कारण विचारों की सरिताएँ फूट फूट कर मानव के मस्तिष्क से निकलीं और इस देश का साहित्य अलग अलग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विधाओं में परिपूर्ण होता चला गया। भगवान् ने भी कहा—अर्जुन यदि तुम सतत् उपासक बन सकोगे, स्मरण करने वाले बन सकोगे, और दुनिया में भी यदि कोई व्यक्ति बन सकेगा तो उसे दो बातों का लाभ मिलेगा। उसे बुद्धियोग मिलेगा। बुद्धियोग मिलने के साथ २, जब बुद्धियोग में मानव जीता है तो बुद्धियोग ही मानव को आत्मयोग की ओर ले जाता है। दो प्रकार के पदार्थों में हम और आप जी रहे हैं। एक आत्म तत्व और दूसरा अनात्म पदार्थ है। एक विनाशी सारे संसार का स्वरूप है और दूसरा अविनाशी की ओर मन में विचार जगाता है। बड़ी विचित्र बात है कि उस अविनाशी तत्व को पाने के लिए संसारके समस्त साधन जिनके बीच मानव रह रहा है वे विनाशी तत्व हैं। एक विचारक की बात मैंने कहीं पढ़ी थी। उसने कहा था कि यदि स्वर्ग में जाना हो तो व्यक्ति की एक कठिनाई है, कि स्वर्ग का द्वार नरक में से होकर जाता है। जब वह नरक में से होकर जाता है तो व्यक्ति को और सावधान होना पड़ता है। आपने स्वयं अनुभव किया होगा। आप बड़ी अच्छी बस्ती में रहते हो। यदि आपको ऐसी बस्ती से होकर गुजरना पड़े जहाँ से दुर्गन्ध आ रही हो, उस समय स्वयं आपने अनुभव किया होगा कि आप बड़ी जल्दी नाक बन्द करते हैं। अपने चालक से कहते हैं कि बहुत जल्दी चलो। जितनी तेज चला सकते हो गाड़ी चलाओ, यदि पैदल चल रहा हो तो तेज भागकर उस भूभाग को पार करता है आदमी। क्योंकि वह दुर्गन्ध उसको सहन नहीं होती। नरक की कठिनाई सचमुच बड़ी कठिनाई है। लेकिन उस कठिनाई में एक सरलता दूसरी दिखाई पड़ती है कि उससे छुटकारा पाने के लिए आदमी बहुत सजग दिखाई पड़ता है, और अपने पूरे पुरुषार्थ का प्रयोग करके उस क्षण को, उस भूमि को, उस अवस्था को पार करके उस भूमि में पहुँचना चाहता है जहाँ वह अपनी सहज अवस्था का अनुभव कर सके और उसमें जी सके। ठीक यही बात है कि जो कुछ हमको जगत में मिला है निश्चित रूप से विनाशी है, परिवर्तनशील है, क्षण क्षण बदल रहा है। और इसके बीच में व्यक्ति को उपासना के लिए अपने को तैयार करना पड़ता है।

क्षण भंगुर जीवन की कलिका
कल प्रात को मानो खिली न खिली
कलिकाल कुठार लिये फिरता
तन नम्र पे चोट झिली न झिली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कह ले हरि नाम अरी रसना फिर अन्त समय में हिली न हिली

किसी सन्त कवि ने कहा यह कलिकाल बड़ा उपद्रव कर रहा है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने तो विनय पत्रिका में कलिकाल के प्रहार का अपने ऊपर वर्णन किया है। वे प्रसिद्ध कवि इतने बड़े भक्त अपने भीतर एक भी गुण का दर्शन विनय पत्रिका में करते ही नहीं। हम सब लोगों को बड़ी कठिनाई एक आध गुण भगवान अपने भीतर प्रकट कर दें तो इसका विज्ञापन करने में हम और आप पीछे नहीं रहते। मित्र को बताते हैं परिवार को बताते हैं, समाज को बताते हैं, और अपने उस गुण को भुनाकर के जो कुछ प्राप्त किया जा सके उसे प्राप्त करने में हम और आप चूकते नहीं। लेकिन गोस्वामी तुलसीदास जैसा महान् व्यक्ति बार बार सबसे कहता है कि मेरे पास तो कुछ है ही नहीं। यदि कहीं कुछ अच्छा किसी को दिख रहा होगा तो वह मेरा नहीं होगा। मैं तो राम का गुलाम हूँ। और राम के गुलाम में गुलाम का अपना क्या है? वह तो गुलामी जिसकी कर रहा है उसका ही है। एक बार कहा था कि व्यक्ति को उपासना करते २ धीरे धीरे अपने को इतना रिक्त करने का प्रयत्न करना चाहिए कि उसके भीतर परमात्मा को अपनी लीलाओं को उपजाने की इच्छा हो जाये लेकिन जब तक राग रहेगा मेरा तब तक बड़ी कठिनाई है। क्योंकि यह राग रुलाता भी है और यह राग बाँधता भी है यह राग अनुराग में जब तक परिवर्तित न हो जाये, तब तक बड़ी कठिनाई मेरे और आपके साथ बँधी है। अपने प्रवास के काल में एक बार मुझे पूर्व अफ्रीका के छोटे से देश जंजीबार में जाने का मौका मिला। वहाँ लौंग बहुत होती है। मसाले बहुत होते हैं। छोटा सा देश है। दिन भर में घूम सकते हैं—इतना छोटा सा है। पहले तो स्वतंत्र था, बाद में तंजानिया के साथ जोड़ दिया गया। जब घूम रहे थे तो सायंकाल को मेरे एक मित्र ने कहा कि चलिये आपको एक जगह दिखाते हैं जो गुलामों का बाजार है। मैंने तो कभी सुना ही नहीं था—सोने-चाँदी का बाजार होता है; सब्जी मार्केट होता है; लेकिन कहीं गुलाम बिकते हैं, यह तो कभी सुना ही नहीं था। मैंने कहा अब भी बिकते हैं? तो बोले अब तो नहीं बिकते; लेकिन कभी बिकते थे। अभी तक उसका नाम बदला नहीं गया। मैंने कहा कैसे बिकते थे। कहने लगे गरीब आदमियों की आँख पर पट्टी बाँध देते थे और अरब देश के अमीर बड़े बड़े यान में जहाजों में आते थे। बोली बोली जाती थी और बहुत थोड़े

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

थोड़े पैसों में १०-२० आदमियों को वे अमीर अपने देश में ले जाते थे। अपने महलों में रखते थे। उन्हें अपने गाँव का ज्ञान नहीं रहता था। वहीं काम करते २ जीवन की इतिश्री हो जाती थी। फिर कोई दूसरा दल आता था और फिर नये गुलाम खरीद कर ले जाता था। लेकिन उनमें से कोई गुलाम कभी लौटकर नहीं आया। एक गुलाम लौटकर आया तो लोगों ने उसका बड़ा अभिनन्दन किया। कहा तुम कैसे लौट आये? आजतक जो भी पट्टी बाँधकर ले जाया गया उसको तो दिशा का ज्ञान ही नहीं होता था कि उसे किधर से ले जाया गया। और किधर से लाया गया। वह बहुत मुस्कुराया। कहने लगा—मैंने ठीक गुलामी की थी। ठीक गुलामी करने के बाद तो और भी बन्धन मिलते हैं। कहा—नहीं, ठीक गुलामी करने का फल मिला कि मुझे बन्धन से मुक्ति मिल गई'। 'कैसे'? 'मेरे अमीर ने बहुत प्रसन्न होने के बाद एक दिन सुबह मुझसे कहा 'गुलाम क्या खाओगे'? मैंने कहा—'जो तुम खिलाओगे'। २-३ दिन बाद उसने पूछा—'क्या पहनोगे'। मैंने कहा—'सेठ जो तुम पहनाओगे'। 'कहाँ जाओगे', 'क्या देखोगे'—मैंने कहा—जो तुम दिखाओगे'। जो कुछ वह मुझसे पूछता—मैं कहता कि मैं तुम्हारे ऊपर आधारित हूँ। और मजे की बात यह कि उसी दिन जब वह मुझ से प्रश्न कर रहा था तब वह नमाज पढ़कर लौटा था। भाव उसका बड़ा सात्विक था पहले तो उसने कभी मुझसे बात न की थी—कैसे हो? बस केवल यही पूछ लेता था। और उस दिन उस अमीर ने मुझसे कुछ ज्यादा बातें की और पूछा। पूछने के बाद मैंने उत्तर दिया। वह नमाज पढ़कर आया था। पता नहीं क्या हुआ—पूछने के बाद उसकी आँखों में आंसू आ गये। मैं गुलाम आदमी उससे क्या पूछ सकता था। मैंने पूछा—'सेठ, मालिक, आपको कोई शारीरिक कष्ट हो रहा हो तो मैं औषधि लाऊँ—गरम पानी लाऊँ—क्या लाऊँ? आपकी आँख में आँसू क्यों आ गये'? उसने कहा, 'गुलाम आज मुझे पता चला कि खुदा की इबादत कैसे करनी चाहिए। जब २ मैं इबादत करता था तो भगवान से कहता था ऐसी व्यवस्था कराओ। यह दे दो, यह प्राप्त कराओ। लेकिन आज मैंने तुमसे जाना कि जब परमात्मा का दासत्व स्वीकारना हो तो ऐसे स्वीकार करना चाहिए जैसे तुमने मेरा स्वीकारा है। अब मैं तुम्हें गुलाम बनाकर नहीं रखूँगा। अब मैं तुम्हें मुक्त करना चाहता हूँ। बोलो कहाँ जाना चाहते हो? उसने कहा—'जब मुक्त कर दिया तो कहता हूँ जंजीबार जाने की इच्छा है और जब तक तुमने मुझे अपना गुलाम बनाकर रखा था तब मैंने अपनी इच्छाओं का विसर्जन कर दिया था'।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेरे बन्धु, मेरा और आपका राग, बहुत बार अपने ही मनोराज्य में हमें ले जाता है। भगवान से भी वही कुछ कहलवाता है, जो हमारे अनेक जन्मों के संस्कारों से मिश्रित मन में है, और उन संस्कारों के कारण मैं जान ही नहीं पाता हूँ कि—

'जानि न परहिं झूठ का साँचा

क्या झूठा है और क्या सच है। जब तक यह जानकारी नहीं होती तब तक याचना कैसे की जाय ! बड़ी कठिनाई है कि—

काँच किरिच बदले ते लेहीं,
कर ते डारि परस मनि देहीं ॥

मेरे हाथ से पारसमणि छूट जाती है। और मैं भगवान तुम्हारे पास बैठकर चमकते हुए काँच को माँग ले जाता हूँ। इसमें तुम्हारा क्या दोष है ? तुम तो पारसमणि दे रहे थे। मैंने ही काँच के लिए हठ किया।

उपासना के क्षणों में विवेक को जगाया नहीं। बुद्धि तुमसे पूरी तरह से माँगी नहीं। मन के राज्य में रहते रहते, मन के आवरण को बहुत कीमती मानकर, क्या याचना करनी चाहिए इसका विस्मरण कर बैठा। भगवान ने कहा—सतत् उपासना करोगे अर्जुन तो मन और बुद्धि दोनों के ऊपर चढ़ा हुआ मैल छूट जायेगा। आपने तो देखा होगा। कोई सुगर फैक्टरी देखी होगी। कभी गाँव के लोगों को गुड़ बनाते देखा होगा। मेरा तो ३०० दिन कभी ट्रेन से, कभी गाड़ी से, कभी जहाज से, रोज प्रवास चलता है। भगवान की सेवा प्रभु अपने आप कराते हैं। वही मति देते हैं, वही गति देते हैं—वही सब करने वाले हैं। मार्ग से कभी कभी देखता हूँ और उसमें से कभी आध्यात्मिक पक्ष में कुछ मिल जाय मुझे सीखने के लिए तो बुद्धि कपाट को भी खुला रखता हूँ। मैंने देखा गन्ने का रस उबल रहा है। गाँव का एक अनपढ़ किसान, लोहे की चलनी लेकर, अपने हाथ को बढ़ा बढ़ा कर, उस रस के ऊपर जितना मैल आता जा रहा है उसे निकाल निकाल कर अलग डालता जा रहा है। मैंने कहा भाई ! कब तक इसे निकालोगे ? यह रस ही समाप्त हो जायेगा ? उन्होने कहा—भले ही समाप्त हो जाये मुझे बिलकुल चिन्ता नहीं। मैंने कहा—'तुम्हारा बड़ा नुकसान होगा।' उसने कहा—'कोई चिन्ता नहीं। देखना हो तो आप बैठिये। मैल को निकालते निकालते एक ऐसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

घटना घटेगी जिसको देखकर आप आश्चर्य में पड़ जायेंगे।' मेरी जिज्ञासा बढ़ गई। मैंने कहा इससे भी कुछ सीखा तो जा सकता है। वो मैल निकालता जा रहा है, निकालता जा रहा है और पता नहीं रस कब गाढ़ा हुआ कि देखने में उसका रूप बदला और रूप बदलते-बदलते जो हरा सा दीख रहा था वह पीला होने लगा। जो एकदम तरल था वह प्रगाढ़ हुआ। प्रगाढ़ होते होते थोड़ी देर के बाद मैल छँटते छँटते वह गुड़ बन गया। मैंने कहा—'तुमने ठीक किया भाई।' मैंने देखा मुझे प्रेरणा मिली कि उपासना की छलनी से बार बार अपने हृदय के पात्र के ऊपर, संस्कार—समय और परिस्थितियों के मैल को छाँटना पड़ेगा और वह छँटते छँटते मेरा मन कब प्रभु का आकार ग्रहण कर लेगा, कब एकाकार हो जायेगा, ये मुझे भी उसकी प्रतीति नहीं होगी। ऐसा ही काल हमारे जीवन में भी कभी आये ऐसी बार बार परमात्मा के निकट याचना व्यक्ति को करनी चाहिए। महर्षि वेदव्यासजी ने—**'ये मानवाः विगतराग परावरज्ञा नारायणं'** किसका स्मरण करने की बात कही? उपासना किसकी करने की बात कही? जो नार का अयन है। जो ज्ञान का भण्डार है। अज्ञानी की उपासना करने से अज्ञान मिलेगा। और ज्ञानमय परमात्मा की उपासना करने से ज्ञान मिलेगा। जब तक ज्ञान नहीं मिलेगा तब तक मुक्ति नहीं मिलेगी।

'ऋते ज्ञानं न मुक्तिः'

ज्ञान के बिना मानव की मुक्ति नहीं होती। उस मुक्ति को साधने के लिए जो स्वरूप है उसका ज्ञान कैसा। कोई भूत की उपासना करते हैं, कोई प्रेत की उपासना करते हैं। कोई गंधर्व की उपासना करते हैं। कोई वामाचार के द्वारा उपासना के मार्ग पर जा रहे हैं। कुछ क्षणिक लाभ मिलता होगा लेकिन वह क्षणिक लाभ तो मिट जाने वाला है। लाभ तो सच्चा वही लाभ है जो मिल जाने के बाद फिर कभी हाथ से छीना न जा सके। भारतीय चिन्तकों और वेदान्ताचार्यों ने कहा—लौकिक लाभ के लिए कभी कभी कोई अनुष्ठान करना हो तो जरूर कर लीजिएगा। कभी विपत्ति आती है तो उसको हटाने के अनुष्ठान भी शास्त्रों में वर्णित हैं। लेकिन वह स्थायी उपासना नहीं हो सकती। वह तो बीच में नैमित्तिक उपासना है। कभी कभी कोई रोग आ जाते हैं तो महामृत्युञ्जय का जप आदि करने से व्यक्ति को उससे लाभ होता है। कई लोगों का अनुभव है। तो यह नैमित्तिक उपासना व्यक्ति के लौकिक जीवन में कभी कभी की जाती है। लेकिन पूरे जीवन की उपासना का क्रम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्या होना चाहिए वह भगवान महर्षि वेदव्यास ने कहा—'नारायणं' जो ज्ञान का स्वरूप है उस परमात्मा की उपासना करना। क्योंकि एक बार ज्ञान मिलेगा तो संसार की सभी वस्तुएँ छूटने पर भी दु:ख नहीं होगा। यदि ज्ञान प्राप्त न होगा तो सब वस्तुएँ भी मानव जीवन के स्रोत को खोल न पायेंगी। इसलिए वस्तु की कठिनाई अनुभव करते हुए वस्तु के बीच में रहना कोई बुरा नहीं। कोई व्यक्ति बहुत सामर्थ्यवान है; ऐसी मैं झूठमूठ कल्पना कर लूँ और मैं उससे कुछ माँगूँ। बाद में वह अपनी असमर्थता व्यक्त कर दे तो मुझे बहुत निराशा होगी। यदि मैं पहले से जान लूँ कि जिसकी मैं साध कर रहा हूँ उसकी तो बड़ी सीमित सामर्थ्य है, तो मुझे कोई कष्ट नहीं होगा। जगत के पदार्थ बहुत सामर्थ्य रहने पर भी असीम सामर्थ्य नहीं रखते। लेकिन ज्ञान स्वरूप परमात्मा, जो अव्यक्त अगोचर है, अनुभूति में उतरता है, सगुण साकारवादी हो तो इष्ट रूप में अनन्यतम भावना के द्वारा जहाँ आप पूर्ण रूप से उसके साथ एकाकार हो जायें तो कभी कभी झाँकी दिखाता है अपनी। ऐसा वह इष्ट का साक्षात्कार भी व्यक्ति को हो सकता है लेकिन वे दोनों ही स्वरूप ज्ञान के समन्वित हैं। देवता की उपासना हमलोग करते हैं। लेकिन महर्षि वेदव्यासजी ने कहा कि—अरे! देवता भी किसी की उपासना करते हैं। यह भी तो पता लगे। तो देवता भी अपने देवत्व को जीवित रखने के लिए उस ज्ञानस्वरूप, परमब्रह्म, परम चैतन्य, उस परमात्मा का ही स्मरण करते हैं। और उसका स्मरण करने के बाद उपासक मन्त्र के द्वारा, देह शुद्धि के द्वारा, आसन शुद्धि के द्वारा, प्राण शुद्धि के द्वारा, स्पन्दन शुद्धि के द्वारा, उपासना को परिपक्व बनाकर, स्मरण में भक्ति के राज्य में जाकर सातत्य को स्वीकार कर लेता है। और जब सातत्य उपासना में आता है तब वही उपासना ध्यान में परिवर्तित हो जाती है। जब ध्यान में परिवर्तित होती है तो आदमी को बहुत ही अच्छा लगता है। एक कोई दूसरा ही राज्य है वह। जहाँ कोई वस्तु नहीं है, व्यक्ति नहीं है, पदार्थ नहीं है और फिर सुख की अनुभूति हो रही है। किसी के माध्यम से नहीं हो रही है। किसी उपकरण से नहीं हो रही है। महर्षि वेदव्यासजी ने कहा—उपासना अपनी वृद्धि को प्राप्त करते करते ध्यान में जब परिवर्तित होती है तो—

'ध्यानेन तेन हत् किल्विषचेतनास्ते'

अपने उन दूषित विचारों को मैं शमन करने का प्रयास करूँ तो सफलता कई बार मिलती है। लेकिन सतत् उपासना के द्वारा ध्यान की स्थिति में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पहुँचने के वाद—ध्यान आनन्द भी है और ध्यान एक शस्त्र भी है। ध्यान के द्वारा किसको मारा जाता है?

'ध्यानेन तेन हत् किल्विष'

मानव अपने दूषित विचारों को अपने पंकिल पापों को अपने ध्यान की अवस्था में उन्हें विलकुल नष्ट कर देता है। ध्यान के द्वारा ध्यान की यदि लौकिक सिद्धि हो जाये, जिसको त्राटक कहते हैं तो व्यक्ति सिंह को खड़ा कर सकता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित्र मैं एक वार पढ़ रहा था। 'वह किसी राजा के यहाँ ठहरे। वह चरित्रवान व्यक्ति नहीं था अपने यहाँ शास्त्रों में चरित्रवान व्यक्ति को एक पत्नीव्रत होने की बात कही गई है। महर्षि सरस्वती फक्कड़ स्वाभाव के महापुरुष थे और—

'सत्यं ब्रूयात्, प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात् सत्यं अप्रियम्'

यह तो बात कही गई लेकिन वह सत्य और प्रिय बात कही जाये इस बात का ध्यान नहीं रखते थे। वह तो कहते थे कि सत्य बात कह दो। भले किसी को चोट लगे तो लगे। किसी राजा के यहाँ ठहरे थे। राजा के उस दूषित चरित्र को देखा तो उनको बड़ी पीड़ा हुई। जब पीड़ा हुई तो प्रातःकाल जब वह साथ साथ उद्यान में घूम रहे थे तो उन्होंने कोई ऐसी बात कह दी जो राजा सहन नहीं कर पाये। वात तो विलकुल सत्य कही थी। लेकिन उन्होंने जिस भाषा में कही, वह भाषा भी बड़ी कठोर थी। राजा उन दिनों बड़े दयालु भी होते थे, और निरंकुश भी होते थे। इसलिए उन्होंने तत्काल अपनी तलवार निकाली और उद्वेग में यह विचार भी न कर पाये कि अतिथि संन्यासी के ऊपर मैं प्रहार करने जा रहा हूँ। बड़ा अपराध और पाप होगा। लेकिन जैसे ही अपनी तलवार उन्होंने ऊपर उठाई तो महर्षि दयानन्द सरस्वती ने त्राटक का प्रयोग किया और हाथ जहाँ था, वहीं खड़ा रह गया। थोड़ी देर वाद साम्य अवस्था आई। राजा ने अपनी तलवार रख दी और पूछा कि महाराज आज तक इतना क्रोध करने के वाद तो मेरे सामने कोई व्यक्ति बचा ही नहीं। और आपके ऊपर मेरी तलवार चली ही नहीं। मेरा हाथ ढीला होने लग गया—परिवर्तन होने लगा वृत्ति में। आपने क्या किया? उन्होंने कहा—मैं प्रयोग नहीं करता कभी भी। आज प्रयोग किया अपनी दृष्टि से तुम्हारी ओर जो देखा, तो त्राटक हो जाने के कारण तुम्हारा भावान्तर हुआ। और भावान्तर हो जाने के कारण तुम्हारी हिंसापरक वृत्ति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी धीरे धीरे वदली। यदि मानव ध्यान लौकिक दृष्टि से करे तो त्राटक की सिद्धि होती है। अनेक समस्याओं का समाधान भी उससे निकलता है। और यदि उसका आध्यात्मिक पक्ष हो तो उस आध्यात्मिक पक्ष के ध्यान की गहनता से मानव अपने अन्तर के दूषित विचारों का हनन करता है।

जब उसके पाप ही समाप्त हो गये, परम शुद्ध हो गया। वासना क्षय हो गई, तो भगवान वेदव्यासजी कहते हैं—

उपासक उपासना में सावधान, सातत्य को स्वीकार करता हुआ, ध्यान की गहनता में पहुँचकर कर पापों का मर्दन करते हुए, वासना क्षय की दिव्य स्थिति में पहुँच जाने के वाद।

'मातुः पयोधरः रसं न पुनः पिवन्ति'

फिर उसे संसार में आकर और माता के उदर में आने की आवश्यकता नहीं रह जाती। उसे जगत में फिर से जीव बनने की आवश्यकता नहीं रह जाती। उसे जगत में फिर से जीव बनने का अवसर नहीं मिलता। वह मुक्त हो जाता है। कैसी सुन्दर विधा और कैसा सुन्दर विधान हमारे ऋषियों ने मुझे और आपके जीवन को आनन्दमय वनाने के लिए दिया है। उपासक अपने व्यापार, व्यवहार, खेती खलिहान इन सबको चला सकता है। उपासना के द्वारा जब वृत्ति शान्त होती है तो शान्त व्यक्ति अपने सारे निर्णयों को बहुत बुद्धिपूर्वक कर सकता है। व्यापार में भी किसी के साथ अन्याय नहीं करेगा। यह भी लोग मानने लगते हैं और ऐसा होता भी है। भगवान करे वह उपासना मेरे और आपके जीवन में प्रस्फुटित हो जीवन का लक्ष्य क्या है, इसके सम्बन्ध में गहन विचार करने के वाद संसार की ओर चलते हुए भी। लेकिन संसार माध्यम है। संसार का निर्माता साध्य है। जगत साधन है और जगन्नाथ साध्य है इस प्रकार का चिन्तन करते हुए जगत को हरिरूप मानकर सेवन करने में कोई हानि न होगी।

वह व्यक्ति अपने को सुरक्षित कर लेता है जो परमात्मा रूपी केन्द्र विन्दु के आसपास अपने को सुरक्षित करने का उपासना के माध्यम से यत्न करता है। हम अपने जीवन में अनेक लोगों के निकट बैठे होंगे, और कई बार अपनी उस निकटता से मानव को अपने मनचाहा आनन्द का आभास मिला होगा। लेकिन कई वार जीवन में जिन लोगों से निकटता साधने का यत्न किया गया,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कभी कभी उन लोगों से विपरीत आचरण का बोध व्यक्ति को हुआ होगा। क्योंकि जीवन सचमुच केवल एक जैसा होता नहीं है। इसमें आदमी को कई कड़वे और मीठे घूंट पीने पड़ने पड़ते हैं। इसका मिश्रण ही यदि कहें तो जीवन दिखाई पड़ता है। पर जो व्यक्ति उपासना के क्षेत्र में अपने को अग्रसर करने का यत्न करते हैं, उनका धीरे धीरे बोध बदल जाता है। व्यक्ति की आकृति नहीं बदलती। व्यक्ति का जैसा प्रारब्ध है, वैसा ही लगभग रहता है, लेकिन व्यक्ति का बोध बदल जाता है। यदि दुःख का बोध समाप्त हो जाये और वह आनन्द बोध हो जाये ; यदि सुख का बोध समाप्त हो जाये और वह आनन्द बोध हो जाये तो उसको जीवन में एक ही वस्तु दिखाई पड़ती है, और वह है सच्चिदानन्द स्वरूप। लेकिन कठिनाई यह है कि कोई एक व्यक्ति चला जा रहा है। उसको बड़े प्रेम से कुछ दिनों के बाद एक उद्यान मिला। उस उद्यान के मध्य में बहुत ही प्रिय पादप का उसने रोपण किया। उद्यान के सभी वृक्ष उसको प्रिय लगते हैं, लेकिन ममतापूर्वक उसने किसी एक वृक्ष का रोपण किया है। वह अपने हाथ में जल पात्र लेकर उसके एक एक पल्लव को सींचने का यत्न कर रहा है। बाद में उसकी शाखाओं को धोने का यत्न कर रहा है। लेकिन धीरे-धीरे पादप तो इतना बढ़ता चला जा रहा है कि वह कितना भी श्रम करे किन्तु उसमें से कोई न कोई शाखा, कोई न कोई पल्लव अछूता रह जायेगा और उसके ऊपर वह जल नहीं डाल पायेगा। इतने में कोई विवेकी व्यक्ति जा रहा था। उसने पूछा, 'भाई आप क्या कर रहे हो' उसने कहा, 'यह वृक्ष मुझे बहुत प्रिय है। मैं इसे सींच रहा हूँ'। उन्होंने कहा, 'एक एक पल्लव को पानी दोगे तो कितना समय लगेगा। मैं तुम्हें एक सरल उपाय बताऊँ ?' उसने कहा, 'बताओ'। कहा—'बड़ा सरल उपाय है। इसके प्रत्येक पल्लव को, प्रत्येक शाखा को, प्रत्येक शिरा को, एक एक अंग को जल मिल जायेगा बस तुम इतना करो कि इसके मूल को सींचने का यत्न करो।

यथा तरोर्मूल निषेचनेन, तृप्यन्ति तत् स्कन्ध भुजोपशाखा।
प्राणोपहाराच्च यथेन्द्रियाणां, तथैव सर्वार्हमच्युतेन ॥

भगवान वेदव्यासजी ने कहा—'यथा तरोर्मूल निषेचनेन'—मूल के निषेचन से मूल के सिंचन से वृक्ष का प्रत्येक अवयव वृक्ष की प्रत्येक शाखा तृप्ति का अनुभव करती है उसे पोषण मिल जाता है। उसे सिंचित जल प्राप्त हो जाता है। उस जल के साथ कोई पोषक तत्व और डाला जाये—वह भी उस पूरे वृक्ष को प्राप्त हो जाता है। जब हम सब लोग भोजन करते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं, तब कोई व्यक्ति ऐसा नहीं करता है कि हाथ को अलग भोजन कराये, शरीर के भिन्न भिन्न अंगों को अलग अलग भोजन कराये। बल्कि भोजन मुख के द्वारा व्यक्ति प्राप्त करता है। प्राणों को तृप्ति होती है। उसमें रस का निर्माण होता है और शरीर के भीतर की बनावट जो परमात्मा ने निश्चित की है उसके अनुसार सप्त धातुओं का निर्माण होते हुए तत तत् अंगों को जो जो आवश्यकता है, उसे अपने आप भीतर ही भीतर प्रेषित किया जाता है, यदि मुख से प्राप्त करने के बाद अपने पास रख लेना चाहे, तो वह बड़ा एकाधिकारी होगा। और वह सब वस्तुओं को रख नहीं पायेगा। गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा कि जो उपासक है उसको संसार में कैसे रहना चाहिए। उपासना कोई ऐसा तत्व तो है नहीं जो एक व्यक्ति के साथ २-४-१० घंटों तक जुड़ा रहे और फिर पृथक हो जाये। उपासक का जीवन उपासना से परिपूर्ण हो जाने के बाद चारों ओर जैसा किया जाता है, वह तो एक प्रमाणरूप बन जाता है। इसमें से प्रेरणा की किरणें व्यक्ति के लिए, समाज के लिए अपने आप निकलने लगती हैं। जैसे वृक्ष सिंचन होने के बाद, हरा होने के बाद, अपने पुष्प खिलाता है तो सर्वत्र अपनी सुवास बाँटता है। जब उसमें रसमय फल आते हैं तब उसमें से अपने लिए एक का भी बिना उपयोग किये हुए सब फलों को संसार को ही दे देता है। वैसे ही मुख माध्यम है। वह खट्टे, मीठे चरपरे, सुस्वादु व्यंजनों को ग्रहण करने के बाद, यदि उसकी कहीं आसक्ति हो जाये और कहे कि इस पदार्थ को मै ही अपने पास रखूँगा तो वह एक पदार्थ को अपने पास रख सकेगा। लेकिन अनेक पदार्थों की प्राप्ति का मार्ग तो अवरुद्ध हो जायेगा। फिर वह एक ही पदार्थ को अपने पास रख बैठे, तो स्वाभाविक रूप से वह इतना भरा भरा होगा कि फिर दूसरे पदार्थ के प्रयोग का वहाँ स्थान ही नहीं रह जायेगा। इसलिए गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा, उपासना करते २ मानव को परमात्मा की कृपा से अनुभूति के राज्य में कुछ शक्ति का संचय हो, तो वह शक्ति उसके लिए नहीं है। वह शक्ति विराट पुरुष की सेवा करने के लिए है। उपासना से प्राप्त हुई शक्ति भी उपासना में ही वितरित होती है। पहले व्यक्ति उपासना से शक्ति संचय करता है, फिर सारे संसार की उपासना करने के लिए अपने ही आराध्य का सर्वत्र दर्शन करते हुए उपासना के प्रकार का परिवर्तन कर देता है। जो पहले उपासना एक आसन पर बैठकर की गई थी वही उपासना अब सर्वत्र बिखरी हुई, अपने द्वारा सारे संसार को अपने उपास्य का रूप मानकर की जाती है। तब मानव की निरंतर समर्पित करने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की इच्छा जग जाती है। समर्पण मानव को आत्म-संतोष प्रदान करता है। सम्पन्न व्यक्ति अपने धन का दान करते हैं—एक बड़ी सात्विक संतुष्टि में जीते हैं। एक प्रतिभावान व्यक्ति काव्य के रूप में अपनी सर्जना प्रदान करता है तो उसे बहुत आनन्द होता है। वैयाकरण, बड़े २ व्याकरण के आचार्य सूत्रों का निर्माण करते हैं और व्याकरण में कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक बात श्रेष्ठ मानी जाती है। वे सब लोग कहते हैं कि उसमें से एक दो वाक्य बचाकर के और अपनी बात कहने की शक्ति यदि उन्हें प्राप्त हो जाये तो उनको उतना आनन्द होता है जितना कि किसी को पुत्रोत्सव का आनन्द प्राप्त होता है। हरेक क्षेत्र में जहाँ जहाँ प्रदान की बात है। हर प्रदान, हर समर्पण, मानव को प्रसन्नता प्रदान करता है। पर वह विवेकपूर्ण होना चाहिए। उसके भीतर मानव की विवेक शक्ति जागती रहेगी तो उसके बाद उसे पश्चाताप नहीं होता है। जीवन में जिसके पश्चाताप के क्षण कम से कम होते हैं, उसे मानना चाहिए कि उसकी आध्यात्मिकता उसके ऊपर अपना अधिक प्रभाव दिखा रही है। सूर्य जब आते हैं तो अंधकार मिटता है—सभी जानते हैं। लेकिन मैं और आप आध्यात्मिक हैं इसकी पहचान क्या है? विज्ञान ने तो कोई ऐसा यन्त्र बनाया नहीं। बहुत अच्छा हुआ। एक दिन मैंने अपने किसी प्रवचन में विनोद में यह बात कही थी, कि यदि कोई वैज्ञानिक ऐसा यन्त्र बना दे जिससे यह पता चल जाये व्यक्ति को कि इसके भीतर सात्विकता कितनी है, राजसिकता कितनी है, तमोगुण कितना है। प्रवचन इतना अच्छा कर रहा है—पर प्रवचन को जीता कितना है? यदि यह यन्त्र बन जाये कभी हिन्दुस्तान में तो सबसे बड़ी कठिनाई यह होगी कि मेरे और आप जैसे लोग बहुत बच कर रहना शुरू कर देंगे। क्योंकि कब यंत्र कहाँ लगा दिया जाये, और उसमें से वास्तविकता दिग्दर्शित होने लग जाये, तो समाज के भीतर व्यक्ति का जीना ही कठिन हो जायेगा। परमात्मा की मैं यह करुणा मानता हूँ। वैज्ञानिक को यह क्षमता नहीं दी यह भी परमात्मा की करुणा का एक नया रूप है। अनेक रूपों का वर्णन तो शास्त्र में किया ही गया है। किन्तु वैज्ञानिक की क्षमता को इतना रोक कर रखा गया जिससे व्यक्ति, व्यक्ति से घृणा नहीं करे। अन्तर्यामी को तो पता है कि मैं जितना बोल रहा हूँ उतना जी रहा हूँ या नहीं। आप जितने धार्मिक दिखाई पड़ रहे हैं उतने आप धार्मिक हैं या नहीं। यह बात परमात्मा को तो ज्ञात है। और ज्ञात होने के बाद भी परमात्मा जीव को अनन्त अवसर प्रदान करता है। इतने अवसर संसारी किसी को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रदान नहीं करता है। परमात्मा इतने अवसर प्रदान करता है कि अब सुधरेगा, अब सुधरेगा। जब सीमा हो जाती है, तभी कभी दण्ड देता है और वह भी उतना ही दण्ड देता है, जितना सहन किया जा सके। लगता है जीव को कि बड़ा कठिन दण्ड मिला है। लेकिन परमात्मा कुम्हार है और हम सब उसके हाथ के कलश हैं। जैसे कुम्हार अपने कलश को तोड़ता नहीं है, क्योंकि उसकी ही हानि है उसमें, उसकी ही क्षति है। ठीक इसी प्रकार परमात्मा रूपी कुम्भकार भी अपने जीव रूपी कलश को शुद्ध, शुभ, पावन और श्रेष्ठ बनाने के लिए कई बार लौकिक दृष्टि से प्रतिकूलता रूपी दण्ड देता है। लेकिन उसके भीतर करुणा उसकी निरन्तर कहीं न कहीं बनी रहती है। वैज्ञानिक असमर्थ है उस यन्त्र को देने में जिसके द्वारा उसकी आन्तरिक पहचान हो सके। उपासना से व्यक्ति स्वयं अपने को पहचानने का यत्न करता है। कितनी सात्विकता बढ़ी है, कितना अध्यात्म भाव बढ़ा है, विराट में अपने आराध्य का दर्शन करने में मैं कितना समर्थ हो पा रहा हूँ।

'यथा तरोर्मूल निषेचनेन, तृप्यन्ति तत् स्कन्ध भुजोपशाखा'

जैसे तरु के मूल को सिंचन करने के बाद तृप्ति का अनुभव मूल करता है, शाखा करती है और उसके पल्लव करते हैं। सब तृप्त होते जाते हैं। गोस्वामीजी ने कहा—

मुखिया मुख को चाहिये, खान पान को एक।
पालय पोसय सकल अँग, तुलसी सहित विवेक॥

तुलसीदासजी ने कहा है—विवेकपूर्वक पालता पोसता है। ध्यान देने की बात है मेरे और आपके लिए कि, हमारी संस्कृति जब यहाँ रुकेगी तब विवेक की बात कहेगी। चाहे आप ज्ञान के पक्ष से चलिये, चाहे आप योग के पक्ष से चलिये, चाहे आप उपासना की ओर से चलिए, चाहे आप दास्य भक्ति की ओर से चलिए, और चाहे आप निष्काम कर्म की ओर से चलिए। ये सभी अलग अलग धाराएँ चल रही हैं। और जाने के बाद जहाँ वह समुद्र में गिरती हैं वह सब का सिन्धु एक ही है वह है विवेक। यदि विवेक प्राप्त न करा सके तो उपासना अधूरी है। यदि विवेक प्राप्त न करा सके तो निष्काम कर्म योग अधूरा है। और भक्ति, विवेक की उस सर्वोच्च आसन पर प्रतिष्ठा करने की शक्ति प्रदान न कर सके तो भक्ति भी अपूर्ण रह जायेगी। इसलिए इस पूरी संस्कृति का जो लक्ष्य है, वैदिक काल से अद्यतन काल तक, एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राचीन संस्कृत भाषा के विचारक से लेकर विवेकानन्द जैसे आँग्ल भाषा के विचारक तक, वह लक्ष्य सब का एक ही है। जो कुछ भी हो मुझसे भगवान की सेवा हो। मानव की सबसे बड़ी सम्पत्ति विवेक है। यदि विवेक न हो तो लौकिक सम्पत्ति का उपयोग ही मानव नहीं कर सकता, और करेगा तो कभी दुरुपयोग हो सकता है। व्यसन की ओर मानव जा सकता है। इसलिए विवेक लोक में और परलोक में, व्यवहार में और परमार्थ में अध्यात्म में और जगत में, इन दोनों में उतना ही आवश्यक और उपादेय हैं। उसके द्वारा जीवन का शृंगार होता है। वास्तविकता को जानने की शक्ति मानव को मिलती है। जैसे वृक्ष के मूल को सींचने से वृक्ष सिंच जाता है वैसे ही भक्त को विचारक ने कहा कि भाई सबको प्रसन्न करोगे तो वड़ी अच्छी बात है। लेकिन सब संसार में प्रसन्न हो सकें यह बड़ी कठिन बात है। इसलिए ऐसा कोई उपाय करो—सरल उपाय है कि उपासना से परमात्मा को प्रसन्न करो। परमात्मा के प्रसन्न होने से जगत अपने आप प्रसन्न हो जाता है। कई ऐसे महापुरुष हुए हैं, जिन्होंने जगत की पूर्ण विस्मृति कर दी अपने उपासना के काल में। लेकिन जब उपासना का फल बँटा तो उससे सारा संसार तृप्ति का अनुभव करता है। सभी लोगों को प्रसन्न करने जाये व्यक्ति तो बड़ी कठिनाई है—सबका स्वभाव नहीं जानता है। सबकी इच्छा नहीं जानता है। सबके देश का ज्ञान नहीं है। सबकी भाषा नहीं समझी जा सकती है। इसलिए सारे संसार को तृप्त करने का कार्य तो बड़ा कठिन है। आपलोगों में से कई सुधी श्रोतागण दृष्टान्त को जान-सुन चुके हैं लेकिन एक बार फिर स्मरण कराने का मन करता है जिसमें से एक के प्रसन्न हो जाने पर सब प्रसन्न हो जाते हैं यह बात बताई गई है। महाभारत काल की बात है। विस्तार से वर्णन नहीं करेंगे क्योंकि आप सब जानते हैं, लेकिन संदर्भ से जुड़ी हुई बात है इसलिए स्मरण कराऊँगा।

कभी २ विपत्तियाँ मानव के ऊपर एक के बाद एक आती हैं। कभी ऐसा भी होता है कि एक सुख के बाद दूसरा सुख निरंतर आता चला जाता है। यहाँ सब संसार के घटनाचक्र की, अपने २ प्रारब्ध की घटिका जैसे २ घूमती है वैसा २ सबके सामने समुपस्थित होता है। सदाचारी व्यक्ति के ऊपर दुःख नहीं आता यह कहना भी कठिन है। क्योंकि पाण्डव तो बहुत सदाचारी हैं, लेकिन लौकिक विपत्तियों ने तो उनका बहुत पीछा किया है। लाक्षागृह में जलाने की तैयारी की गई। द्यूत में वे हार चुके हैं। द्रौपदी के चीर हरण का सारा प्रयत्न हो चुका है। अन्ततोगत्वा अपनी ही किसी विवशता के कारण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन्होंने वनवास में रहना स्वीकार किया है। और वनवास में ही एक विपत्ति और आती है। दुर्वासा जैसे ऋषि, जब कौरवों के यहाँ पहुँचते हैं तब उन्होंने कहा महाराज एकादशी का आज व्रत हो चुका। अब द्वादशी का पारण करने के लिए यदि आप पाण्डवों के पास जायें तो बड़ा अच्छा है क्योंकि वे परम् भक्त हैं। ऐसे सद्‌गृहस्थ हैं कि उनके द्वार पर कोई अतिथि पहुँचे तो वे उनका सत्कार बड़ी श्रद्धा से और प्रेम से करते हैं। 'हैं कहाँ'? उन्होंने कहा 'वे एक वन में निवास कर रहे हैं'। इसके पीछे दुर्भाव है दुर्योधन का। यह जान नहीं पाये ऋषि। उन्होंने इसे सहज भाव से स्वीकार कर लिया और वे अपने गुरुकुल को लेकर १००० छात्रों के साथ प्रस्थान करते हैं। जब वहाँ पहुँचते हैं तो द्रौपदी अपने अक्षय पात्र को धोकर उस समय तक आये हुए सभी अतिथियों का सम्मान कर चुकती है और विश्राम की मुद्रा में अब सोच रहीं है कि बहुत अच्छा हुआ। अब बैठकर अपने आराध्य, नटवर नागर श्यामसुन्दर, व्रजेन्द्र नन्दन का स्मरण करूँगी। इतने में चारों ओर से उड़ती हुई धूल दिखाई पड़ती है और पदचापों की ध्वनि आ रही है। देखती क्या है कि आज इस एकान्त वन में भी बदला चुकाने के लिए, जो सब कुछ छोड़ चुके हैं उन निरीह लोगों के ऊपर यह सेना आक्रमण करने आ रही है। लेकिन देखा उसके पास अस्त्र शस्त्र नहीं है। वे तो पीत वसन धारी छात्रों का समुदाय है और कंधे पर सबके वेद की पोथी है और हाथ में पलाश के दण्ड हैं। ऐसा सुन्दर दृश्य तो द्रौपदी ने कभी पहले देखा न था। इतने सैकड़ों तपस्वियों का दर्शन करके उसने अपने को धन्य माना। मन ही मन प्रणिपात किया। आचार्य दुर्वासा को देखा तो नमस्कार किया। आचार्य दुर्वासा ने कहा—बेटी द्रौपदी, कल एकादशी का व्रत किया था—आज पारण करने हम लोग १००१ लोग आये हैं। द्रौपदी बहुत विस्मय में पड़ी और विषाद में भी। इतने लोगों का यदि मैं आतिथ्य न कर सकी, तो सामान्य व्यक्ति तो हैं नहीं। जिनमें दो गुणों की सीमा है। ऋषि भी हैं, और ऋषित्व के ऊपर कहीं कोपत्व आ जाये तो क्रोध की वह ज्वाला एकदम से जलने लगेगी और फिर परिणाम क्या होगा? सोच नहीं सकती हूँ। इस विचार से द्रौपदी प्रकम्पित होने लगी। और जब जब कभी कष्ट में होती है तब भगवान का स्मरण करने लगती है। उपासना को अपने लौकिक दुःख की निवृत्ति के लिए भी अपने आराध्य का ही आराधन करना चाहिए। क्योंकि उपासक चार प्रकार की उपासना कर सकता है ऐसा गीता में कहा है। जो ज्ञानी हैं वे तो अत्यन्त धन्य हैं। जिनकी कोई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

याचना, अभिलाषा, माँग नहीं रह गई हो वे तो भगवान के बहुत कृपा पात्र हैं। लेकिन जो संसार में रहते हैं, और अचानक कोई विपत्ति आ पड़ी है सहन करने की शक्ति नहीं। कैसे निवारण हो। उस दुख को सहन करने की शक्ति कैसे मिले तो—

चतुर्विधा भजन्ते माम् जनाः सुकृतिनोऽर्जुन,
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥

ये चारों प्रकार से भक्ति और उपासना करने की बात श्रीमद्भगवत् गीता में बताई है। द्रौपदी तो जानती है कि विपत्तियों में तो मेरा कोई आधार बना ही नहीं आज तक। सुख और सम्पत्ति में कोई बनेगा तब देखूँगी। वह तो बाद की बात है। लेकिन विपत्ति ही मैंने देखी है—और विपत्ति में किसी ने साथ दिया नहीं। वह तो केवल भगवान श्रीकृष्ण ही हैं जिनकी मुझे शरणापन्न होना चाहिए। अन्तर से खूब स्मरण किया। जब जगत का विस्मरण हो जाता है और तार एक हो जाता है तो तब भगवान का आना बड़ा सम्भव होता है। तत्काल आ जाते हैं। मेरा तो विनम्र मत यह है, क्षमा कीजिएगा आप भी उपासना करते हैं मैं भी बहुत क्षण बैठता हूँ। आपकी अनुभूति होगी कि परमात्मा का स्मरण करना कोई कठिन कार्य नहीं है। बड़ा सरल काम है। परमात्मा का स्मरण करने में रसानुभूति होने लगती है, लेकिन परमात्मा का स्मरण करना सरल है। जगत का विस्मरण करना बहुत कठिन। जब परमात्मा का स्मरण करने बैठो तो यह जगत दौड़कर आता है। और बड़ी कठिनाई यह है कि जो न सोचना चाहें वह भी कभी आ जाता है। मन में बड़ा विचित्र सा लगता है कि ऐसी तो कभी कल्पना नहीं की—विचार आते कैसे हैं। लेकिन जगत का विस्मरण करना कठिन है परमात्मा का स्मरण करना सरल है। परमात्मा का स्मरण करते २ जगत का विस्मरण हो जायेगा ऐसा विश्वास तो रखना ही चाहिए। उन्हीं की कृपा से विस्मरण होता है, क्योंकि परमात्मा का स्मरण तो मैं इस जन्म में कर रहा हूँ। और जगत का स्मरण करते हुए मैं तो ८४ लक्ष्य योनियों में आया हूँ। इसलिए जो पुंजीभूत स्मरण है उसका विस्मरण करना संसार को सचमुच बहुत कठिन दिखाई पड़ता है। पर द्रौपदी ने ऐसा अभ्यास किया कि जब स्मरण में बैठती है, और विपत्ति के काल का तो बड़ा सजग स्मरण में होता है। क्योंकि उस समय तो जगत का कोई आधार दिखता नहीं। जब जगतका आधार नहीं दिखता है तब लौकिक दृष्टि,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से तो जगदाधार परमात्मा निश्चित रूपसे दर्शन में आ ही जाते हैं। पान्चाली की पुकार व्यर्थ नहीं गई। श्रीकृष्ण का आगमन हुआ। आते ही श्रम से थके हुए भगवान श्रीकृष्ण ने कहा, 'पान्चाली द्रौपदी मुझे बहुत भूख लगी है'। आज द्रौपदी ने कहा, 'महाराज संसार में जितने भूखे लोग हैं, वे सब इधर ही चलते चले जा आ रहे हैं। मैंने तो आपका स्मरण इसलिए किया कि कुछ भूखे लोग इधर चले आये हैं, और उनका सत्कार करने के लिए मुझे कुछ चाहिए'। पर भगवान अपने भक्त के साथ बड़ा सहज विनोद करते हैं। द्रौपदी से कहा—'अच्छा तुम मेरी भूख के लिए कुछ प्रबन्ध नहीं कर सकती हो तो मैं श्रीनाथद्वारा जा रहा हूँ। वहाँ ५६ भोग लगाये हैं। मैं डाकोरजी जा रहा हूँ। जिन जिन भक्तों के यहाँ पुष्टि मार्ग की उपासना है उन सब ने बहुत मीठे मीठे व्यन्जन बनाकर रखे हैं। यदि तुम जल्दी मेरी भूख का प्रबन्ध नहीं करोगी तो मैं जा रहा हूँ'। द्रौपदी ने कहा—'मैं जाने तो आपको दूँगी नहीं क्योंकि बहुत आर्त स्वर से पुकारा है। इसलिए भागने का प्रयत्न तो आपका सफल होगा नहीं। पीताम्बर पकड़ूँगी, चरण पकड़ूंगी, आपको जाने नहीं दूँगी'। भगवान ने कहा—'जब किसी को भूख लगती है तब उसे दूसरी बात अच्छी नहीं लगती। लेकिन द्रौपदी एक बात बताओ—मेरे मन में एक जिज्ञासा भी थी। इसलिए मैं आया था—मैंने सुना था कि तुमने बड़ी साधना की और तुमसे सूर्य भगवान प्रसन्न हो गये'। उसने कहा—हाँ, इस जंगल में क्या करती हूँ? जो उपासना के क्षेत्र नये मिल जाते हैं, कोई अनुष्ठान मिल जाता है, कोई मार्ग मिल जाता है, तो खाली समय का और उपयोग क्या कर सकती हूँ?' आजकल बड़ी विचित्र बात है। यदि व्यक्ति के पास बहुत सारी सुविधाएँ हों तो व्यक्ति सोचता है खाली समय का उपयोग कैसे करना है? खाली समय के सात्विक उपयोग तो कम दिखाई पड़ते हैं, लेकिन खाली समय का राजसिक उपयोग करने में लोग अपने समय का विनियोग करते हैं। जिससे राजसिकता और बढ़ती है। जो संस्कार कम होने चाहिए वह तो कम हो नहीं पाते, और नये संस्कार का जन्म अपने अन्तर के क्षेत्र में हम और आप कई बार कर लेते हैं। द्रौपदी ने कहा, 'प्रभु जब खाली थी तब कोई महात्मा जा रहे थे। उन्होंने सूर्य उपासना बता दी। आपकी ही कृपा हुई कि मुझे बड़ी जल्दी सिद्धि मिल गई। नहीं तो पूरा जन्म लग जाता है तब जाकर कोई पुरश्चरण, कोई अनुष्ठान सिद्ध होते हैं। नहीं भी होते हैं। लेकिन यह आपकी ही कृपा मानती हूँ मुझे तो जहाँ जहाँ सिद्धि, असिद्धि मिले, आपकी कृपा के सिवा कुछ दिखाई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही नहीं पड़ता।' तब भगवान श्रीकृष्ण ने कहा—'यदि सूर्य भगवान ने कृपा की तो कुछ दिया तो होगा।' कहा—'हाँ मुझे अक्षय पात्र दिया'—'जब अक्षयपात्र दिया तब फिर मुझसे क्यों कह रही हो कि इतने लोगों के भूख का प्रबन्ध करो। देखूँ तो सही तेरा अक्षय पात्र कैसा है।' द्रौपदी गई और अक्षयपात्र ले आई और कहा, 'भगवान् इस अक्षयपात्र की एक ही कठिनाई है कि एक बार में इससे जितने लोगों को खिलाना चाहूँ खिला सकती हूँ। लेकिन २४ घण्टे में यदि एक बार इसे माँजकर, धोकर रख दूँ तो फिर इसका प्रयोग मैं नहीं कर सकती। दूसरे दिन जब बाल सूर्य की किरणों का दर्शन कराने के बाद, बाल रवि भास्कर की भास्वरता इसमें पुनः प्रकट होती है तब फिर मैं इसके प्रताप से लोगों को पुनः तृप्त कर सकती हूँ। आज यही कठिनाई हुई कि मैंने इसे माँजकर, स्वच्छ करके, धोकर रख दिया है नहीं तो मैं इसके प्रताप से दुर्वासा और उनके शिष्यों को पूरी तरह से तृप्तकर सकती थी।' भगवान ने कहा, 'देखूँ तो तेरा पात्र। और जैसे ही दौड़ी-दौड़ी प्रसन्नता से भरी भरी, द्रौपदी अपने पात्र को उठाकर अपने आराध्य को दिखाने के लिए लाई, आराध्य तो बड़े नटखट हैं ही। उन्होंने कहा कि मेरे भोजन का तो प्रबन्ध हो गया। अब दुर्वासा की और उनके शिष्यों की तुम जानो। 'कैसे हो गया'? कहा, 'तुमने अच्छी तरह माँजा धोया?' हाँ बिलकुल। लेकिन देखो तो सही द्रौपदी इसमें शाक का एक पत्ता लगा हुआ है।' द्रौपदी ने कहा, 'मेरा शाक का पत्ता इसमें रख दो और आपको जाना हो तो जाओ। मुझे तो यह मालूम था कि मेरे पात्र में कुछ है ही नहीं। इसलिए मैं कुछ माँग नहीं सकती थी। कुछ व्यवस्था नहीं कर सकती थी'। लेकिन अभी आपको कहा कि जैसे वृक्ष के मूल को सींचने से पूरा वृक्ष सिंच जाता है, वैसे ही भगवान श्रीकृष्ण ने तत्काल उस शाक के पत्ते को लिया। जो विश्वम्भर है, आज विश्वम्भर वास्तव में अपने नाम को सार्थक कर रहे हैं। जो सारे संसार का भरण-पोषण कर सके वही तो विश्वम्भर है। परमात्मा श्रीकृष्ण ने शाक के उस छोटे से पत्ते को उठाकर मुख में रखा और रखने के बाद मन में संकल्प किया। मानव का संकल्प क्यों नहीं पूरा होता? क्योंकि मानव अनेक संकल्प करता है। जो अनेक संकल्प करता है उसका एक भी संकल्प पूरा होने में काफी समय लग जाता है। पर जो कभी संकल्प न करता हो, और अचानक संकल्प करे, तो उस संकल्प के पीछे उसकी शक्ति लग जाती है और संकल्प पूर्ण हो जाता है। भगवान संकल्प और विकल्प से रहित हैं। संकल्प और विकल्प से रहित होकर भी, केवल वे लोक संग्रह के लिए कार्य करते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन्हें कुछ पाना है नहीं वे तो परम तृप्त हैं। इसलिए भगवान जो स्वयं संकल्प नहीं करते हैं, भक्तों के हित के लिए कभी कभी संकल्प करना पड़ता है ऐसे भगवान ने संकल्प लिया। हाथ में पत्ता लेकर मुख में रखा और रखने वाद कहा—'अनेन विश्वात्मा तृप्यताम्' इसके द्वारा संसार में जहाँ जहाँ, जिसको भूख लगी हो, इस काल में वह तृप्ति का अनुभव करे। ऐसा भगवान ने संकल्प किया। भक्त का रक्षण भगवान के सिवा और कौन कर सकता है? विपत्ति में कौन उवार सकता है? सब लोग जो कामना के राज्य में जीने वाले लोग हैं वे दूसरों की कामना क्या पूर्ण करेंगे? जो स्वयं इच्छाओं में रात-दिन डोल रहे हों, वे दूसरों की इच्छा क्या पूर्ण करेंगे? जो अभिलाषाओं की रस्सी में स्वयं बँधे हों, वे दूसरों की अभिलाषा की रस्सी को क्या तोड़ पायेंगे? लेकिन प्रभु आप्तकाम ने जैसे ही संकल्प किया—दुर्वासा तो वहाँ स्नान कर रहे थे। और उनके शिष्य भी स्नान करके तर्पण कर रहे थे। अचानक सबको ऐसा लगा कि तृप्ति हो गई। भूख की विस्मृति हो गई। एक दो को तो डकार भी आने लगी। दुर्वासा ने कहा कि चलें; द्रौपदी के यहाँ तो कहा था भोजन करेंगे। उसने बहुत सामान बनाया होगा, लेकिन अब खा लिया तो अस्वस्थ होने का डर है क्योंकि भूख ही नहीं लग रही है। चलो वहाँ से पोथी उठायें। पलाश के दण्ड साथ ही हैं, और आगे को प्रस्थान करें, जाने के वाद कहा—'द्रौपदी तुमको बहुत कष्ट दिया। तुमने जो व्यंजन वनाये हैं, जो आतिथ्य का प्रबंध किया हो वह वन में रहने वाले अन्य वनवासियों को दे देना। हमलोगों को खाने की इच्छा नहीं'। द्रौपदी कुछ वोली नहीं। लेकिन उसने कहा, 'महाराज हम वहुत संकट में आ गये थे जब आप आये थे। हम कुछ प्रबंध नहीं कर सके थे।' 'लेकिन हमारी तो भूख की इच्छा ही नहीं रही'। तुमने अपनी कुटीर में किसी को छिपा कर रखा है क्या?' कहा 'नहीं महाराज'। कहा—'नहीं किसी को अवश्य छिपा रखा है नहीं तो इतनी भूख जो थी वह शमित कैसे हो गई' द्रौपदी ने कहा—वही विपत्ति के समय मैं जिनका आश्रय लेती हूँ वही भगवान श्रीकृष्ण आये हुये हैं। उन्हीं की उपासना करने से मेरा सब काम चलता है। और दुर्वासा ने उन भगवान के दर्शन किये। तृप्ति का अनुभव किया।

'यथा तरोर्मूल निषचनेन,
तृप्यन्ति तत् स्कन्ध भुजोपशाखा।'

उसी प्रकार से अच्युत की उपासना कर लेने से सबकी उपासना हो जाती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। भगवान श्रीकृष्ण ने अपने इस पावन चरित्र, लीला, इस संस्मरण के द्वारा, द्रौपदी की इस कथा के द्वारा, मुझे और आपको एक संदेश दिया। जगत में सबके भीतर भगवान का दर्शन करते हुए जितनों को लौकिक वस्तुओं के द्वारा, दान पुण्य के द्वारा, सेवा सहायता के द्वारा, सहानुभूति और मैत्री के द्वारा, जिनको तृप्त कर सकें — करें। और यदि नहीं कर सकते हैं तो एक को तृप्त करने से सबकी तृप्ति अपने आप हो जायेगी। लेकिन उस तृप्त करने में, परमात्मा को तृप्त करने की साधना को पूर्ण करने में व्यक्ति को प्रामाणिक होना पड़ता है। उसे यह देखना पड़ता है कि जितने भी मार्ग हैं वे सभी ठीक हैं। उपासक लड़ता नहीं। उपासक द्वेष नहीं करता हैं। उपासक किसी से ईर्ष्या नहीं करता है। आज बड़ी कठिनाई है। अतीतकाल की भी कठिनाई इतिहास में दिखाई पड़ती है। उपासना के क्षेत्र में कई बार ऐसा दिखाई पड़ता है कि एक मतावलम्वी दूसरे मतावलम्वी का खण्डन कर रहा है। मध्य युग में तो बड़ी कठिनाई आई है। शिव की उपासना करने वाले, और विष्णु की उपासना करने वाले, कई बार तीर्थों में शारीरिक दृष्टि से युद्ध करते हुए दिखाई पड़े। मध्य काल के इतिहास के वे अध्याय, उपासक को बहुत प्रेरणा नहीं दे पाते हैं। यदि उपासना मानव की विचार शक्ति को एक वृहत रूप न दे पाये, तो उपासना संकीर्णता की ओर रह जायेगी और फिर आज के वैज्ञानिक युग में उपासना का बहुत प्रचार नहीं हो पायेगा। धन्यवाद देना चाहिए मध्यकाल के उस महाकवि तुलसीदास को, जिसने अपने उपासना के स्वरूप को सचमुच सारे संसार में व्याप्त किया है। भूलं हुई है उसका परिमार्जन किया है। उपासक से भूल नहीं होगी ऐसा नहीं कहा जा सकता है। मानव है तो उसमें दोष तो कोई न कोई रहेगा लेकिन उस दोष को स्वीकार करके आभूषण बना लें, यह उचित नहीं। उसका परिमार्जन करना पड़ता है। गोस्वामी तुलसीदासजी से एक भूल अपनी उपासना के काल में हुई है। उसे खुले मन से वे स्वीकार करते हैं। जब वे बाँकेबिहारी के मंदिर में दर्शन करने जाते हैं। देखते हैं सब लोग प्रणाम कर रहे हैं। वृन्दावन का पावन धाम है। मयूर नृत्य कर रहे हैं। मेघ छाये हुए हैं। लोग कृष्ण नाम संकीर्तन से सारे वातावरण को गुंजायमान कर रहे हैं। रामानन्द पंथ के उपासक, वैष्णव तुलसीदास वहाँ बाँके बिहारी के मंदिर में जाकर दर्शन करने के लिए भीड़ में खड़े हैं। सब लोग प्रणाम कर रहे हैं पर तुलसी का प्रणाम नहीं हो रहा है। तुलसी का मस्तक झुकने के लिए तैयार नहीं। वे अपने हाथ को नहीं जोड़ रहे हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साथ के साधु संतों ने कहा,—अरे सब प्रणाम कर रहे है। तू लाठी की तरह तना खड़ा है। प्रणाम करो। दण्डवत करो। उन्होंने कहा—'नहीं प्रणाम नहीं करूँगा'। 'प्रणाम नहीं करना था तो वृन्दावन आने की जरूरत क्या थी। प्रणाम नहीं करना था तो मंदिर में आये ही क्यों'? उसने कहा,—'तुम करो प्रणाम मैं नहीं करूँगा। तुम्हें भगवान के दर्शन हो रहे हैं। दर्शन करके प्रत्येक व्यक्ति झुक रहा है। मेरी कठिनाई है मैं प्रणाम नहीं कर पा रहा हूँ।

कहा कहौं छवि आपकी, भले बने हो नाथ।
तुलसी मस्तक तब नवे, धनुषबाण लो हाथ॥

बड़ा हठ है भक्त का। लोग कहते हैं कि सबको तो श्रीकृष्ण, कृष्ण दिखाई पड़े; पर तुलसी तब झुके अचानक। लोगों ने कहा इतनी देर से खड़े थे झुक कैसे गये? कहा,—'जैसा देखना चाहता था रूप इन्होंने बदला है'। लेकिन बहुत काल बीत गया। अब रामचरितमानस की रचना प्रारम्भ हुई। अपनी अज्ञता पर हँस रहे हैं। कैसा पागल था मैं। लोगों के कहने पर भी मैंने हाथ नहीं जोड़ा। लोगों के कहने पर भी मैं झुका नहीं। अब मुझे कुछ करना चाहिए। अपनी इस अज्ञानता का परिमार्जन कर लेना चाहिए। तब तुलसी ने परिमार्जन किया। तब बाँके विहारी के लिए न झुक रहे थे। अब मानों मानव के लिए झुक रहे हैं।

'सीय राममय सब जग जानी
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।'

सारे संसार में जितनी नारी शक्ति है, सबमें जगदम्बा, जगदजननी सीता के दर्शन हैं। जितने मानव हैं, सबमें अपने आराध्य राम नृत्य कर रहे हैं। विराजमान हैं। इसलिए सारे संसार के सचराचर प्राणियों को सियाराम मानकर आज वह उपासक, जो कल हठी उपासक था, आज उदार उपासक बन गया है। मानव के उपासना के क्षेत्र में भी, अपनी अज्ञता के कारण कोई भूल हो सकती है। लेकिन जैसा मैंने निवेदन किया कि जब वह ज्ञात हो जाये, तब उसका खुले मन से परिमार्जन, प्रायश्चित पूर्वक करना चाहिए। उपासक की दृष्टि सीमित नहीं होती है। जहाँ २ व्यक्ति परिच्छिन्नता में है वहीं २ अज्ञान है। जहाँ जहाँ मानव दीवार बना रहा है, वहीं २ घिरा है। जहाँ २ सीमा में बैठा है वहीं संकोच है। वह सीमा—वह परिच्छिन्नता,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह दीवार, उपासना का फल है कि अपने आप धीरे २ कब गिर गई पता नहीं चलता। कब मिट गई उसका उसे ध्यान नहीं होता। मैंने अपने पूर्व प्रवचन में कहा होगा कभी, स्मरण नहीं आता कि फिर वह उपासक चाहे हिन्दू हो, चाहे मुसलमान ये बातें भी फिर धीरे २ मिट जाती हैं। वह तो संसार में जितनी भी औपाधिक सत्ता हैं, उसका निषेध करता है। और उपाधियों से रहित व्यक्ति ही विवेक के साम्राज्य का अधिकारी बनता है। जब वह उपासक सूफी, किसी मस्जिद में उपासना करके लौटा तब लौटने के बाद उसे मंदिर भी दिखाई पड़ गया। उसका मित्र था—वह उसे मंदिर में ले गया। वह मंदिर भी चला गया और जब वहाँ से लौट कर आया तो एक कट्टर व्यक्ति मिल गया। उसने कहा तुम इबादत करने के बाद फिर कहाँ चले गये। मंदिरों में गये। काफिरों के पूजा स्थल पर गये। उसने कहा—भाई यह तुम्हारी दृष्टि है ; लेकिन मैं तो ऐसा मानता हूँ कि उपासना करते २ केवल प्रेम ही मानव का सबसे बड़ा धर्म बन जाता है।

इश्क़ मज़हब हो तो ज़ाहिर कुफ्र क्या इस्लाम क्या
हों कहीं काबा या बुतख़ाना किसी से काम क्या
दिल में है काबा मेरे और इश्क़ है मेरी नमाज़
चाहे जब कर ले अदा इसमें सुबह क्या शाम क्या ?

वह सूफी कहता है कि, दीवारें तो उसके लिए हैं जो बहुत ही औपचारिकता में जी रहा हो। जो वैधी भक्ति केवल विधान के द्वारा ही करता हो। प्रारंभिक उपासक को विधान की बड़ी आवश्यकता है। लेकिन विधान में ही हम केवल उलझकर रह जायें तो उससे आगे का जो सुन्दर साम्राज्य है वह उसे कैसे मिल पायेगा ? उपासना अनुभूति तक पहुँचनी चाहिए। यदि अनुभूति तक पहुँची, तो उसके बाद जो कुछ कहा गया है, जो कुछ सुना गया है उसको समर्थन मिल जायेगा। एक गरीब व्यक्ति ने—हिमालय की सुन्दरता बहुत पढ़ी। कालिदास के ग्रंथों को उसने पढ़ा, और उसने देखा कि इस देश के उत्तर में हिमालय है। प्रकृति का पावन साम्राज्य है। सरिताओं का कलकल नाद है, प्रपातों का कलरव गान है। पक्षियों की उड़ान है—यह सारा कुछ उसने सुना।

'अस्योत्तरस्यां दिशिदेवतात्मा हिमालयोनाम नगाधिराजः'

वह तो नगाधिराज है ? मन में इच्छा जागी कि कभी अपने पास थोड़ा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थ होगा तो हिमालय जाऊँगा। कभी मित्र मिल गये, साधन वन गया—योग वन गया, समाजमें वहुत रहा था। मरुस्थल वहुत देखे थे। मैदानोंकी वहुत यात्रा की थी, लेकिन आज हिमालय के उत्तुंग शिखर पर पहुँच गया। वहाँ पहुँच कर ताली वजा वजा कर नाच रहा है। हिमालय की महिमा वहुत सुनी थी। वास्तव में हिमालय तो जितना सुना था उससे भी वहुत अच्छा है। उसने कहा कि मैं अपने जगत के सारे कार्य पूर्ण करके आया हूँ मित्र। तुम लौट जाओ। मैं तो नहीं लौटूँगा, क्योंकि इस सुषमा ने मुझे इतना वाँध लिया है। यहाँ की एकान्तता ने मुझे वह शान्ति प्रदान की है। इसलिए मैं अव लौटूँगा नहीं। मैं तो इसी शिखर के ऊपर, जिसे पाने की इतने वर्षों से इतनी इच्छा थी, अव वह मुझे मिल गया। अव मैं उसे छोड़कर जाऊँगा नहीं। मेरा पूरा विश्वास है कि यह प्रकृति ही मेरा पूरा योगक्षेम कर देगी। इसलिए तुम मेरी चिन्ता मत करो। तुम लौट जाओ। मित्र लौट गया। जिसने हिमालय का यश सुना था, प्रत्यक्ष दर्शन करने के वाद अनुभूति हुई। अनुभूति के राज्य में खो जाने के वाद सवका विस्मरण हुआ। और उसके ही निकट वैठकर वहीं उसकी उपासना प्रारम्भ हो गई। उसकी उपासना हिमालय की उपासना थी, इसलिए उसे हिमालय मिल गया। अभी तो मैंने गुरु के मुख से सुना है कि परमात्मा की कृपा और परमात्मा के साम्राज्य का अनिर्वचनीय आनन्द है। अभी तो मैंने शास्त्र से पढ़ा है। अभी तो महात्माओं के प्रवचन और सत्संग से इसकी अनुभूति हुई है। लेकिन उपासना के गहरे क्षणों में, कभी परमात्मा की ऐसी कृपा हो जाय, जैसे उस साधारण व्यक्ति को हिमालय मिला—वह खो गया। और ताली वजा वजाकर नाचा कि जैसा सुना था उससे भी अच्छा है। वैसे ही उपासना की गहन अनुभूतियाँ, उपासना के गहन क्षण, मुझे उस वहुत वड़े अनुभूति के शिखर पर ले गए। यदि कोई आपको ले जाये। वहाँ पहुँचने के वाद आपका मन कहे कि मेरे जगत के मित्रों अव तुम जगत का व्यवहार करो मैं तुम्हें मना नहीं करता लेकिन मैंने तो उस उत्तुंग शिखर के सौन्दर्य का दर्शन कर लिया है इसलिए अव तो मैं यहीं रहूँगा। यदि वह स्थिति मानव की कभी आ जाये तो जगत में रहते हुए भी, वह किसी ऐसी स्थिति पर विराजमान हो जाता है कि वाहर का व्यक्ति फिर उसे पहचान नहीं सकता है। वाहर का व्यक्ति न पहिचाने इसमें आध्यात्मिकता का वास्तविक सुख मिलता है। जहाँ गोपन होता है, कोई तत्व वहाँ वह वड़ा दीर्घ और स्थायी होता है। जहाँ प्रकाशन की इच्छा होती है, वहाँ वह घटता चला जाता है। इसलिए कई ऐसे साधु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महात्मा, जिन्हें बाहर से हम पहचान नहीं पाते, अपनी आध्यात्मिक स्थिति में, और अपने आध्यात्मिक साम्राज्य के पावन सुख में ऐसे जीते हैं कि उन्हें सारे संसार का सब कुछ तुच्छ दिखाई पड़ता है। वीतराग महापुरुष ऐसे धन्य होते हैं कि जिन्होंने उपासना को अपने भीतर चरितार्थ किया है। महर्षि वेदव्यासजी ने कहा ऐसे दिव्य उपासक का सुख तो इन्द्र के सुख से बहुत बड़ा सुख है।

यत् सुखम् वीतरागस्य मुनेः एकान्तवासिनः

जो एकान्तवासी मुनि का सुख है वह तो इन्द्र का भी सुख नहीं हो सकता है। हिन्दी के कवि ने तो कहा कि, अरे, आत्मसंतुष्टि में जीने वाले व्यक्ति की तो बात ही क्या ? उपासना मानव को पदार्थ से ऊपर उठाकर प्रभु के निकट ले जाती है। पदार्थ यदि बने भी रहें तो न तो उनका निषेध करता है और न उन्हें प्राप्त करने की इच्छा करता है।

तीन टूक कौपीन की, औ भौरी बिन लौन।
रघुवर जा के उर बसें, इन्द्र बापुरो कौन ॥

इन्द्र के लिए बापुरो शब्द का प्रयोग किया है। अरे बेचारा इन्द्र उसके सामने क्या हो सकता है ? जिसके हृदय में परमात्मा निवास करता हो। यह तो परम विवेकी की बात है। जिसे विवेक प्राप्त हो, विवेक का धन हो, और उसके पास पदार्थ आ जायें तो बड़ी अच्छी बात है। पदार्थ एक बार कम हो तो कोई चिन्ता की बात नहीं हैं। वस्तुएँ प्रारब्ध के अनुसार मिल गई तो ठीक। लेकिन उसका लक्ष्य क्या है ?

'रघुवर जाके उर बसें'

उसके हृदयमें कौन बसना चाहिए ? कौन बैठना चाहिए ? यह बात उन्होंने बड़ी अच्छी तरह से कही है। वही बात मैं निवेदन कर रहा था। जगत के प्रत्येक कार्य, चिन्तन-प्रणाली और व्यवस्था की दिशा, यदि मानव की अपने उपास्य की ओर हो जाये तो, केवल उपासना माला से नहीं होती है। क्षमा कीजिएगा बात जरा कड़वी है। विचार कीजिये कि जब विदेश जाते हैं हम और आप तो अपने भवन, अपने उद्यान, अपने आश्रम, अपने मंदिर, अपने मरुस्थल और अपने परिवारीय जनों का स्मरण करने के लिए क्या सुबह पहले कुशासन पर बैठ कर माला लेकर चिन्तन करना पड़ता है। कभी ऐसा किसी व्यक्ति ने नहीं कहा कि सुबह उठकर आसन पर मैं बैठा और फिर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विचार किया कि अब जगत के सभी सम्बन्धियों का थोड़ा स्मरण कर लूँ। ये जगत के जितने सम्बन्ध हैं वे मानव के मन में बिना माला लिये और बिना आसन लगाये आ जाते हैं। जो कि बहुत दूर के हैं। लेकिन परमात्मा बहुत निकट है मेरे और आपके। क्योंकि वह अन्तर्यामी है। जो अन्तर्यामी है, परमात्मा है, उस परमात्मा के लिए मुझे आसन लगाना पड़ता है। भूमि शुद्ध करनी पड़ती है। वस्त्र शुद्धि के लिए जल अभिसिंचित करना पड़ता है। प्रोक्षण करना पड़ता है। इतना करने के बाद यह विचित्र मन पूरी व्यवस्था पूर्वक उपासना पर बैठने के बाद भी, हमें और आपको परमात्मा का पूरी तरह उपासक नहीं बनने देता। कठिनाई जो है वह मेरे आपके मन की है। इस सारी कठिनाई को दूर करने में उपासना ही सहायक है। यदि किसी के पाँव में कांटा लग जाये और उसके पास सोने के बहुत अच्छे २ आभूषण हों तो वह लाख प्रयत्न करे पर, उन आभूषणों के मूल्यवान होने से, उनके प्रयोग करने से, उसके पाँव का काँटा नहीं निकलता है। इसलिए कहा गया है कि यदि काँटे को निकालना हो तो 'कंटकेनैव कंटकम्' काँटा से ही काँटा निकलता है। यदि पाँव में काँटा लग जाये तो सूई लाकर उसे निकालते हैं। मन रूपी काँटे को, हृदय के आसन पर से जो बहुत गहराई तक चला गया है, उसे निकाल कर बाहर फेंकने का यत्न करना हो तो उपासना ही उस मन रूपी काँटे को या तो स्वच्छ कर देगा, या हटा देगा या रूपान्तरित कर देगा या फिर मन उपद्रव करना बन्द कर देगा। यह चार स्थितियाँ आती हैं। गाँवों के लोग खेतों में काम करते हैं। काम करते हुए कभी कभी काँटे बड़े गहरे चले जाते हैं। सूई के प्रयोग से निकलते नहीं। तब एक गाँव के बिना पढ़े लिखे आदमी ने कहा था अपने मित्र को; 'काँटा नहीं निकलता है तो कोई चिन्ता न करो। मैं तुम्हें थूहर नाम का एक पेड़ होता है, उसका दूध ला देता हूँ। उसमें गुड़ मिलाकर रात में बाँध लो। सवेरे काँटा तो नहीं निकलेगा लेकिन काँटा बहुत गहरे चला जायेगा। गहरे चले जाने के बाद वहीं पर विनष्ट हो जायेगा और उसका कोई दुष्प्रभाव शरीर पर भी नहीं होगा'। यदि निकल ही नहीं सका तो उसको वहीं विनष्ट कर दिया, उसी स्थान पर। बड़ी अच्छी बात हो, कि चिन्तन और स्वाध्याय की चिमटी से अपने हृदय प्रदेश में लगे हुए, इस मन रूपी काँटे को अलग किया जाये। पर यदि संभव न हो तो, उपासना करते २ वह मन वहीं विलीन हो जाये। और यदि परमात्मा के चरणों में विलीन हो जाये। तो मन फिर क्या कठिनाई दे सकता है? उपासक जब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूरी उपासना में तल्लीन हो जाता है तब, उसको देने को कुछ रहता ही नहीं है। क्योंकि जागतिक वस्तुओं का तो प्रथम दृष्टि में ही उसे यह चिन्तन मिल जाता है कि परमात्मा की दी हुई वस्तुएँ हैं। इन्हें परमात्मा को दें। यह औपचारिकता है, शिष्टाचार है। समर्पण से हृदय शुद्ध होता है। बोझ कम होता है। नम्रता और शील आते हैं। लेकिन परमात्मा को हम वास्तव में दे ही क्या सकते हैं। इस बात को तो अब्दुल रहीम खानखाना जैसा उपासक ही जान पाया है। खान तो मुसलमान हैं। लेकिन वृन्दावन की पावन रज का प्रभाव पड़ गया था। श्रीकृष्ण माधुरी में डूब जाने के कारण संसार का सौंदर्य उनके सामने बिलकुल महत्त्वहीन हो गया था। काम कर रहा था। भाड़ झोंक रहा था। क्योंकि रोटी तो प्राप्त करनी है। भूख तो लगेगी। लेकिन श्रम करके थोड़ा सा प्राप्त किया जाये तो मन को संतोष रहेगा। इसलिए अकबर के मंत्रिमण्डल का इतना सम्मानित व्यक्ति वृन्दावन में एक भड़भूंजे के यहाँ काम कर रहा है। हिन्दी के कवि थे रहीम। अकबर को पता चल गया। वेश बदलकर आये और आने के बाद कविता में ही प्रश्न किया कि आपका तो अभी मंत्रित्व चल रहा है। मैंने तो आपको निकाला नहीं है मन्त्रिमण्डल से। अभी तो भार आपके ऊपर है। रहीम पहिचान गये कि आज तो वेश बदल कर अकबर मुझे देखने के लिए आये हैं। उन्होंने प्रश्न किया कि—

'जाके सिर अस भार है, सो कत झोंकत भार'

जिसके सिर पर मंत्री पद का इतना बड़ा भार है वह भाड़ क्यों झोंक रहा है? रहीम ने कहा—

'भार झोंक सब भार में, रहिमन उतरो पार'

उसने कहा मैंने अपना सारा भार झोंक दिया और अब तो मैं पार उतर गया। बड़ा प्रसन्न है। बड़े प्रसन्न मन से आज अपने आराध्य श्रीकृष्ण भगवान का दर्शन करते २ उपासक के मन में विचार आया कि मैंने तो सब छोड़ दिया। मेरे पास तो कुछ चढ़ाने के लिए है नहीं। लोग बड़े अच्छे २ आ रहे हैं मंदिर में। कोई सुन्दर माला लेकर आ रहा है, कोई आभूषण या पीताम्बर चढ़ा रहा है, और कोई तो स्वर्ण की मोहरें भरकर लाया है, और प्रभु के सामने अर्पण कर रहा है। लेकिन रहीम तू तो बड़ा कंगाल है। तेरे पास तो कुछ है नहीं। तू क्या चढ़ायेगा। भगवान से कहते हैं महाराज आज मैं एक ऐसी चीज चढ़ाना चाहता हूँ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'रत्नाकरस्तव गृहम् गृहिणी च पद्मा,
किं देहमस्ति भवते जगदीश्वराय'

अगर मैं आपको लक्ष्मी प्रदान करूँ तो लक्ष्मी आपकी गृहिणी हैं। और यदि रत्न चढ़ाऊँ आपको तो आप तो रत्नाकर में निवास करते हैं। एक दो दे भी दूं तो क्या फर्क पड़ेगा। हे जगदीश्वर आपको देने योग्य कुछ है ही नहीं मेरे पास। मैं बड़ा कंगाल हूँ, संसार में सबसे बड़ा दरिद्र आज मैं अपने को अनुभव कर रहा हूँ कि लोग सब चढ़ा रहे हैं और मैं रिक्त हस्त बैठा हूँ। कुछ चढ़ा ही नहीं पा रहा हूँ। थोड़ी देर के बाद रहीम एकदम मुस्कराया— हँसा-प्रसन्न हो गया। एकदम से विचार आया कि चढ़ाने के लिए एक वस्तु है मेरे पास। जो श्रीकृष्ण के पास नहीं है। भगवान के पास कोई वस्तु न हो ऐसी हम और आप कल्पना भी नहीं कर सकते हैं लेकिन रहीम के मन में यह विचार आ गया। जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि। उस कवि ने तुरन्त विचार किया कि—

रत्नाकरस्तव गृहम् गृहिणी च पद्मा
किं देहमस्ति भवते जगदीश्वराय।
आभीरवामनयनाहत मानसाय—
दत्तम् मया मम मनो कृपाय गृहाण॥

हे भगवान बहुत विचार करके देखा तो आपके पास वस्त्र, आभूषण, लक्ष्मी, रत्न, सम्पत्ति, वैभव ये सब हैं। लेकिन मेरे पास जो है वह मैं अर्पण करता हूँ वह आपके पास नहीं है। जो व्रजांगनाएँ हैं—गोपग्वाल हैं, वे सब आपकी इतनी निकट से सेवा करते रहे हैं कि जब आप अकेले में बैठते हैं तब आपका मन वहाँ चला जाता है। आपके पास का मन वहाँ चला जाता है तो आपके पास मन नहीं होता। और मेरी कठिनाई यह है कि मेरी उपासना में यह मन ही बाधक है इसलिए महाराज—

'दत्तम मया मम मनो कृपया गृहाण'

इसलिए यह मन में आपको समर्पित कर रहा हूँ। आप इसको कृपा करके ग्रहण कर लीजिए। ~~हम और आप उपासना के क्षणों में यह जानें; कि जीवन परमात्मा का वरदान है~~। इस जीवन को इतस्ततः भटकाने के लिए मन के विचारों की आँधी हमें यहाँ से वहाँ ले जाती है। ~~इस प्रमाद को सम्मानपूर्वक रखने के लिए मन के द्रष्टा बनने का प्रयत्न करें~~। वह परमात्मा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की उपासना से ही, उपासना करते करते ही मन का कंटक या तो बहुत दूर चला जायेगा, या रूपान्तरित हो जायेगा, या निकल जायेगा। भगवान से प्रार्थना करें कि यह जीवन जो आपकी कृपा से आपने दिया है, जिसकी चराचर याचना कर रहे हैं जो साधनधाम है, जो स्वर्ग, नरक, अपवर्ग, नसैनी ऐसा तन मिला है इसे कृपा करके सार्थक कर सकें ऐसी शक्ति हमें दे दीजिए।

उपासना का फल है एकाग्रता। वह एकाग्रता जिस भी माध्यम से प्राप्त की जाय वह माध्यम भी बाद में उपासना बन जाता है क्योंकि कोई व्यक्ति खेत खलिहान में काम करते हुए भी उपासना कर सकता है और कोई व्यक्ति माला जपते हुए भी उपासना के दिव्य आनन्द से कुछ क्षणों के लिए यदि चंचल मन हो जाये तो वंचित हो सकता है इसलिए कौन सा एक ही उपाय उपासना के लिए बिलकुल ठीक होगा, यह कहना कठिन है। प्रत्येक मानव की भावधारा, संस्कार, परिवेश, परिस्थितियाँ, चिन्तन और संस्कार, कुल और परिवार, गुरु और मंत्र, जप और निष्ठा ये भिन्न भिन्न बातें हैं जिनके ऊपर उपासक की एकाग्रता की अवस्था निर्भर करती है।

कल मैंने निवेदन किया था कि मानव की सबसे बड़ी कठिनाई वैदिक काल से लेकर अन्तरिक्ष काल तक ज्यों की त्यों बनी हुई है और वह है वास्तव में मन की कठिनाई। इसने बड़ा उपकार भी किया है। यदि यह चंचल न होता तो वैदिक ऋषियों के मन में अंधकार को तोड़ने का विचार न जागता। प्रथम दिवस ही यदि हमने और आपने प्रकाश का दर्शन कर लिया होता तो वैदिक ऋषि की छटपटाहट का दर्शन 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' उस पंक्ति में न होता। मन ने उस समय भी उपद्रव किया था, और मन आज भी उपद्रवी दिखाई पड़ता है। तब मानव के मन में कभी कभी कठिनाइयाँ उत्पन्न होती थीं। आज मानव के मन की कठिनाइयों का घेरा बढ़ता चला गया है, इसलिए शान्ति का दर्शन व्यक्ति के लिए कठिन होता चला जा रहा है। मन ने यह उपकार किया कि ऋषियों की वाणी को ऋतम्भरा प्रज्ञा तक ले जाने की शक्ति प्रदान की, क्योंकि उस छटपटाहट में, व्यग्रता में, वेदना में, और पीड़ा में मार्ग ढूँढ़ने की इच्छा हुई। जब भी कभी कोई व्यक्ति व्याधिग्रस्त होता है तब औषधि की खोज करता है। जब भी कोई व्यक्ति पीड़ाग्रस्त होता है, तब वह शान्ति प्राप्त करने का कोई मार्ग ढूँढ़ता है। इसलिए मन का यह उपकार हुआ कि, उसने ऋषि के मन को व्यथित किया, विचारक के मन को व्यथित किया, कवि के मन को व्यथित किया, साधक के मन को व्यथित किया और उन व्यथा के क्षणों में सभी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने मार्ग खोजने की मन में चिन्ता जगाई। मार्ग खोजते खोजते सब लोगों को अलग अलग मार्ग मिले। किसी को भक्ति का मार्ग मिल गया। किसी को हठयोग का मिल गया और किसी को राजयोग का मिल गया। किसी को प्रेमयोग का मिल गया। किसी को व्यथा वियोग का मिल गया, कोई नाद योग में खो गया और किसी ने शब्द के ऊपर साधना की। इन सारे मार्गों पर चलते चलते हर व्यक्ति की अपनी सिद्धि हुई। उन सब लोगों ने अपनी सिद्धि के मार्ग हम सब लोगों को मन की कठिनाई के कारण दिये। भारतीय वाङ्मय का वह अतुल भण्डार मन की इस तमिस्रा के कारण भरा गया। यदि वह पहिले ही दिन प्रत्येक व्यक्ति को प्रकाश का दर्शन करा देता तो साहित्य का यह विपुल भण्डार, वेदान्त की ये सर्जनायें, और कवियों की मुखरित होने वाली वाणी की धाराओं में हम स्नान न कर पाते। लेकिन उपकार उसका बड़ा यह रहा कि इतने सब मार्ग बताये जाने पर भी उन मार्गों का अवलम्बन करने वाले कुछ लोग सिद्धि का दर्शन कर पाये। बाकी लोगों के साथ मन की वह कठिनाई आज भी ज्यों की त्यों बनी दिखाई दे रही है। अर्जुन के काल तक तो बड़ी स्पष्ट दिखाई पड़ रही थी। ५००० वर्ष पूर्व का एक साधक, जो भगवान का सान्निध्य प्राप्त करता है वह उसी प्रकार की मन की पीड़ा से ग्रसित है, जैसा मैं और आप दिखाई पड़ते हैं। उसकी एक बड़ी अच्छाई है वह अपने मन को पढ़ता है, और पढ़ने के बाद जैसा दिखाई दे रहा है वह अपने मार्ग दर्शक को ज्यों का त्यों बता देता है। हम सब लोग समाज के वातावरण में रहते हैं इसलिए बड़ी कठिनाई है। आज का संसार एक ही प्रकार के जीवन से मानों जिया नहीं जा सकता है। ऐसी धारणा बद्धमूल होती चली जा रही है। इसलिए मानवको दो प्रकार का जीवन जीने के लिए मानो बाध्य होना पड़ रहा है और दो प्रकार के व्यक्तियों को लेकर आज का प्राणी जगत में जी रहा है। अर्जुन की यह सरलता है कि वह युग ऐसा नहीं है जिसमें दो प्रकार का जीवन जीने की कोई बाध्यता न हो। वहाँ तो वह सब के सामने है। उसे मालूम है कि मेरी यह गीता की बात भगवान सबको कहने वाले हैं। लोग यह भी कह सकते हैं कि भगवान के सान्निध्य में रहने वाला कैसा विचित्र प्राणी था जो अपनी मन की चंचलता की बात कहता है। यदि हो भी तो उसे छिपाना चाहिए था लेकिन उसने तो खुले मन से परमात्मा से कहा है—

चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्
तस्याहं निग्रहम् मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि हम भी अपने मार्गदर्शक परमात्मा के समीप बैठकर, सचमुच खुले मन से प्रतिदिन, प्रतिपल, प्रतिक्षण, उसे उजागर करने का प्रयत्न करते रहें तो भी मन को शुद्ध करने का मार्ग अपने आप मिल जायेगा। आपने देखा होगा, कुछ ऐसी नालियाँ हैं जिन्हें दिन में एक बार, दो बार धोया जाता है। कुछ ऐसे लोग है जो जल का निरन्तर प्रवाह हो, ऐसे स्थानों पर रहते हैं, जहाँ से मैल और पंक बहने के स्थान दिखते हैं। वे स्थान निरन्तर पंक ले जाने के कारण, अपनी स्वाभाविक दुर्गन्ध तो बिखेर सकते हैं, लेकिन उसमें भी तीक्ष्ण प्रवाह जल का होने के कारण उसको भी वह धो डालता है। मेरा और आपका मन क्षण क्षण बनने वाले संस्कारों के कारण उसके भीतर कुछ पंकिल प्रवाह आ सकता है, लेकिन उसे परमात्मा के सामने प्रकट करने की सतत् अभिलाषा, और उसके साथ जुड़ी हुई प्रार्थना की धारा यदि निरन्तर प्रवाहित रहे तो मानव का मन निश्चित रूप से स्वच्छ रह सकता है। इसके लिए सतत् जागरणकी आवश्यकता है। व्यक्ति को और बड़ी कठिनाई है कि—

मोहनिशा जग सोवनहारा,
देखहि विविध प्रपंच प्रकारा॥

गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा कि हम सब तो बार बार मोह की निशा में सो जाते हैं। मोह की निशा की सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि इसमें नाना प्रकार के प्रपंच के स्वप्न मानव देखता है। हम अपनी निद्रा में स्वप्न में चले जाते हैं, यह अलग बात है। लेकिन मोह की निद्रा से जग पाना कठिन है। स्वाभाविक निद्रा में आये हुए स्वप्न से व्यक्ति अपने को संभाल लेता है। एकदम चमक पड़ता है। यदि कोई अमंगलकारी स्वप्न उसकी निद्रा के बीच में आ जाये। यदि वह प्रसुप्ति के काल में है तब तो कहना ही क्या है। वह आनन्द से है। प्रगाढ़ निद्रा में सो रहा है। लेकिन स्वप्न में सिर काट लिया है किसी ने और अपने शरीर में, धड़ से अलग देख रहा है सिर। बड़ी पीड़ा हुई। स्वाभाविक है। लेकिन गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा—

जौं सपने सिर काटै कोई।
बिनु जागे न दूरि दुःख होई॥

स्वप्न में सिर कटा है लेकिन जैसे ही जागा दुःख दूर हो गया। लेकिन मेरे और आपके मन की कठिनाई यह है कि वह जाग्रत में स्वप्न की रचना करता है। जाग्रत में स्वप्न की रचना करता है तो उसमें प्रपंच और उपाधि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की रचना होती है। कर्त्तव्य बुद्धि से कार्य करने का निषेध किसी भी शास्त्र ने नहीं किया है। लेकिन उस कार्य से वनने वाली आसक्ति, और आसक्ति से प्राप्त होने वाले विषाद और हर्ष मानव के जीवन को वार वार झूले में झुलाते हैं। कोई काल ऐसा होता है कि जब झूलने में वहुत सुख मिलता है। पाँच वर्ष तक के शिशु को आप झूले में झुलायें तो उसे बहुत अच्छा लगता है। लेकिन किसी व्यक्ति की आयु निरन्तर बढ़ती ही चली जाये, और उसे ऐसा ही लगे कि मुझे तो झूले में झूलना है तब कोई भी बुद्धिमान आदमी उसके इस कार्य की प्रशंसा नहीं करेगा। तब तो मानव के भीतर स्थैर्य आना चाहिए। स्थिरता आनी चाहिए। चिन्तन में, विचार में, जीवन में, व्यवहार में, कथनी में यह सारी एकाग्रताएँ एवं स्थिरताएँ मानव को उपासना के द्वारा मिलती हैं। और परमात्माके विधान पर यदि व्यक्तिका विश्वास जग जाये, तो उपासना स्वयंही दृढ़ होती है। लेकिन जीव होने के कारण विश्वास कभी जमता है और कभी हट जाता है। कभी तो पूरी तरह ऐसा लगता है कि सचमुच हमारी सामर्थ्य तो कुछ है नहीं। हम छोटी छोटी परिस्थितियों को भी परिवर्तित कर सकते नहीं हैं। इसलिए सारी परिस्थितियों का संचालक और नियामक परमात्मा ही हो सकता है। जब यह बुद्धि मेरी और आपकी रहती है, तब संसार की कोई भी घटना मुझे और आपको विचलित नहीं करती है। और जिस समय बुद्धि, शक्ति, वैभव और अपने भीतर के अन्य कई प्रकार के विश्वासों को मुखरित होने का अवसर मिलता है। उस समय वह सोया हुआ अभिमान व्यक्ति के भीतर फिर सिर उठाने का यत्न करता है। और जब सिर उठाने का यत्न करता है, तब मेरे और आपके भीतर कर्तृत्व और भोक्तृत्व का अभिमान जागता है। जब कर्तृत्व और भोक्तृत्व में हम और आप बँधने का प्रयत्न करते हैं, तब अपने मूल रूप से दूर चले जाते हैं। एक दिन प्रवचन में निवेदन कर चुका हूँ कि जो मूल से लिपट कर निरन्तर रहता है, वह सारी परिस्थितियों के पाटे में पिसने से वच जाता है। उपासक को क्या करना चाहिए अब एक दूसरा प्रश्न उपस्थित हुआ। इसका उत्तर तो शास्त्रों में वहुत दिया हुआ है। मैं तो ऐसा मानता हूँ, कि मैं आपके पास कोई नई वात प्रस्तुत कर पाऊँगा। यह भी कठिन वात है। इस देश का कोई विचारक अभिमानपूर्वक यह बात नहीं कह सकता कि मैं बहुत ही मौलिक चिन्तन आपको देने जा रहा हूँ। बहुत ही कठिन वात है, क्योंकि इस देश के ऋषियों ने पूरा जीवन चिन्तन को समर्पित किया। उनमें महर्षि वेदव्यास सर्वश्रेष्ठ हैं। इसलिए उन्होंने जो कुछ दिया—नीति में, महाभारत में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दिया। ज्ञान में, ब्रह्मसूत्र में दे दिया। भक्ति में श्रीमद्भागवत् में दे दिया। अब आने वाले ये लोग अब क्या दे सकेंगे? इसलिए एक आदमी ने खुले मन से कह दिया कि जो कुछ भी दिया जायेगा वह 'व्यासोच्छिष्टम् जगत सर्व' वह तो व्यास का उच्छिष्ट होगा। इसलिए व्यास के उच्छिष्ट के वितरण में भी मानव को बड़ा सुख मिलता है। मानव को क्या करना है? उपासक को क्या करना चाहिए? उपासना के कौन से उपकरण साधन हैं, पहले तो उन्हें देखने का यत्न करना चाहिए। मानव तन सबसे पहला मूल कारण है। क्योंकि यदि शरीर न हो तो उपासना किसके द्वारा की जाये। मूल होने के कारण हमें इसको स्वस्थ रखना, व्याधिरहित रखना होगा। प्रारब्ध के भोग के अनुसार तो जो होगा, होगा ही। लेकिन उसमें स्वास्थ्य के नियमों का पालन करते हुए, क्योंकि यह परमेश्वर को प्राप्त करने का साधन है, इस विचार से यदि देह को नीरोग तथा स्वस्थ बनाये रखने का यत्न हो तो देहासक्ति नहीं आयेगी। यदि इस चिन्तन से रहित होकर देह के प्रति अनुराग जागेगा तो देहासक्ति तो आयेगी ही। और देह की आसक्ति तो अन्त तक टूट नहीं पाती। इस आसक्ति का टूटना तो बहुत कठिन कार्य है। इसलिए मानव को उपासना के क्षेत्र में करना क्या चाहिए जिससे मन की कठिनाई कुछ शमित हो जाये, तो एक विचारक ने बहुत अच्छी बात कही कि—

त्यज दुर्जन संसर्गम्, कुरु साधु समागमं।
कुरु पुण्यमहोरात्रम्, स्मर नित्यमनित्यताम्॥

छोटे छोटे सूत्र हैं लेकिन मानो उपासना का सारा मार्ग दर्शन इसमें दिया हुआ है कि व्यक्ति को क्या करना चाहिए।

'त्यज दुर्जन संसर्गम्' दुर्जन का साथ परित्याग कर देने का विचार बार बार मन में आना चाहिए। यही बात गोस्वामीजी ने भी कही है कि मानव को उसका बहुत सावधानी से विचार करना चाहिए और उसका परित्याग करने को उन्होंने कहा कि जिनके द्वारा अपने मन में द्विधा उत्पन्न होती हो, अपनी निष्ठाओं में कहीं स्पन्दन उत्पन्न हो जाता हो, कहीं बुद्धि भेद होने की शंका दिखाई देती हो, ऐसा कितना भी विद्वान व्यक्ति क्यों न हो, सारे संसार के लिए हो सकता है। उसकी विद्वत्ता धन्यवाद का पात्र हो सकती है। लेकिन उस व्यक्ति के लिए जो उपासक है। अपने जीवन की एक दिशा को लेकर चल रहा है। बहुत वर्ष उसने अपनी उस निष्ठा में व्यतीत किये हैं। यदि ऐसा लगे कि उसके वचन चिन्तन और विचार से मेरी निष्ठा पर आघात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लग रहा है, तो उस व्यक्ति से धीरे से अपने को अलग कर लेना चाहिए। भगवान श्रीकृष्ण ने विद्वानजनों से यह नहीं कहा कि तुम सामान्य जनों के भीतर में अपनी विद्वत्ता की प्रतिष्ठा करने के लिए उनकी निष्ठा को तोड़ डालो। भगवान श्रीकृष्ण ने कहा—

न बुद्धिभेदं जनयेत् अज्ञानाम् कर्मसङ्गिनाम्।
जोषयेत् सर्वकर्माणि विद्वान् युक्तः समाचरन्॥

भगवान श्रीकृष्ण ने प्रवक्ताओं को भी संदेश दिया कि किसी की श्रद्धा, किसी आस्था, किसी की प्रीति, और किसी के आदर्शों में बुद्धि भेद उत्पन्न करने का किसी भी प्रज्ञावान व्यक्ति को अधिकार नहीं है। यदि वह ऐसा करता है तो वह समाज की सेवा नहीं कही जा सकती। जहाँ मानव वैसा ही बैठा २ दबा २ दिखाई पड़ता है जैसा कि वह अपने अन्तर में भी किसी से जुड़ा हो, और उसमें भी कोई विभाजक गुण जाकर अपना प्रवेश करके उसके चिन्तन को, उसकी निष्ठा को तोड़ डाले तो यह एक बहुत बड़ा अपराध होगा। इसलिए भगवान ने कहा कि मानव को अपनी निष्ठा पर निरन्तर चले जाना चाहिए परमात्मा के साम्राज्य में। क्योंकि वह अन्तर्यामी है, इसलिए प्रत्येक वस्तु उसे दिखाई पड़ रही है। भगवान कितनी दूर रह गये। यह किसी को दिखाई भी नहीं पड़ता। उपासक यदि किसी से पूछे कि मेरी उपासना अब कब सिद्ध होगी तो इसका उत्तर दे पाना संभव नहीं है। एक सूफी किसी नगर में घूम रहा था। लौकिक दृष्टि से उसे किसी से अनुराग हो गया। लेकिन वह फिर भगवत् परायण हो गया। लौकिक दृष्टि से जगत की प्रीति में रहने के कारण, उसने मन के भीतर उठने वाले भाव और संसारी भावों का दर्शन किया था। उधर से कोई दूसरा व्यक्ति गया। वह भी कुछ इसी तरह की स्थिति का अनुभव कर रहा था। उसने उस सूफी से पूछा कि मैं इस नगर में आया हूँ लेकिन मैं मिलना चाहता हूँ उसकी दूरी कितनी है। उसने कहा—यह उत्तर बड़ा कठिन है। उपास्य कितनी दूर है उपासक से इसका उत्तर कोई बाहर से नहीं दे सकता। इसका उत्तर तो आप मिलेगा। जैसा मुश्ताक हो, जैसी आपकी निष्ठा हो, उस निष्ठा से परमात्मा निकट भी है और वह दूर भी हो सकता है। इसलिए व्यक्ति को इसका उत्तर अपने भीतर से प्राप्त करना है। उपाय बताया गया कि कैसे हम अपनी उस उपासना को दृढ़ कर सकते हैं। उसके अन्तराय कौन से हैं। अवरोध कौन से हैं। तो उन्होंने कहा कि 'त्यज दुर्जन संसर्गम्'। सूरदासजी ने कहा—'तजो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रे मन हरि विमुखन को संग, जाके संग कुबुद्धि उपजत है, परत भजन में भंग'—तजो रे मन हरि विमुखन को संग।

संत चाहे हिन्दी में बोलें या उर्दू में बोलें साधक जब किसी पावन स्थिति में पहुँचता है तो वह ऊंचाई सबकी एक होती है। भाषाएँ एक हो सकती हैं, व्यंजनाएँ अलग हो सकती हैं। लेकिन जिस भाव भूमि में पहुँचने के बाद एक विद्वान महापुरुष संस्कृत में कुछ कहता है, तो कबीर जैसा जुलाहा अपनी उलटबाँसियों में भी वही बात कह सकता है। वहाँ पहुँचने के बाद अनुभूतियाँ जो मानव की भीतर से निकलती हैं, वह लगभग एक जैसी निकलने लगती हैं गो० तुलसीदासजी ने भी कहा कि श्वान की तरह से उसका परित्याग कर देना चाहिए। क्योंकि जिसके कारण से अपनी निष्ठा में विघ्न होता हो, वह तो बहुत बड़ी क्षति है। बुद्धिमान की बुद्धिमानी इसमें है कि मानव को अमृतत्त्व की ओर ले जाये। जो अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाये।

एषा बुद्धिमतां बुद्धिः मनीषा च मनीषिणां,
यत्सत्यं अनृतेन मृत्योमाप्नोतिचामृतं॥

बुद्धिमानों की बुद्धि इस बात में है, और मनीषियों की मनीषा इस बात में सिद्ध है कि जो मानव को मृत्यु से अमृतत्त्व की ओर ले जाये। मानव का शरीर हरदम रहेगा यह तो संभव नहीं है। भगवान श्रीकृष्ण की उस मुद्रा का मुझे दर्शन करने का सौभाग्य मिला, जब मैं सोमनाथ प्रवचन करने गया। मार्ग में ढल तीर्थ आता है। वहाँ भगवान श्रीकृष्ण अपने चरण के ऊपर चरण रखे विराजमान हैं और सामने ही एक बहेलिया शर संधान करते हुए बताया गया है। जो सारे संसार को जीवन दे सकते थे, उन्हें भी पंचभूत के संसार में आने के बाद कोई निमित्त बन गया। चरण में बनी हुई वह मणि चमक रही है और चमक के कारण बहेलिया को भ्रांति होती है कि कोई हरिण है। नेत्र उसके चमक रहे हैं। ऐसा मानकर उसने शर संधान किया और परमात्मा ने अपनी लीला का संवरण कर लिया। मानव देह में श्रीकृष्ण, श्रीराम, जो भी यहाँ पधारे उन्हें अपनी लीला का संवरण करना पड़ता है। यहाँ से प्रस्थान करना पड़ता है। मानव तो बहुत छोटा है। यहाँ से प्रस्थान करना पड़ता है मानव की शक्तियाँ तो बड़ी सीमित हैं। लेकिन वह मानव मृत्यु से नहीं डरता जो उपासक होता है। उपासना का बहुत बड़ा फल संतुलित जीवन और स्थायी निर्भयता है। जहाँ मृत्यु से भी भय नहीं लगता है। वह भी ऐसा मानने लगता है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दृढ़तापूर्वक, कि जैसे शैशव से, युवावस्था में युवावस्था से प्रौढ़ावस्था में प्रौढ़ावस्था से वृद्धावस्था में, मैं निरंतर पहुँचता गया हूँ ऐसे ही एक अवस्था देहान्तर की अवस्था है। वह कभी आये तो उसे भी वैसे ही स्वीकार करूँगा जैसे अन्य अवस्थाओं को स्वीकार किया। भारतीय संस्कृति ने मृत्यु को देहान्तर और वस्त्रान्तर ही माना है। इसलिए उपासक के सामने जो संसार का सबसे बड़ा भय है वह उसमें भी विचलित नहीं होता। ऐसे अनेक उदाहरण दिखाई पड़ते हैं जहाँ छोटे २ बालकों ने भी मृत्यु के साथ संघर्ष किया है। बड़े प्रेम से उसे स्वीकार किया है। उपासना कितनी पावन है, उस प्रह्लाद भक्त की कि जिसको अग्नि में बैठा दिया जाता है। अग्नि के स्पर्श से कितनी वेदना शरीर को होती है, यह तो कभी भूल से अगरबत्ती का स्पर्श हो जाये तो भी हम कर सकते हैं। लेकिन वह अग्नि की इतनी बड़ी ज्वालाओं में बैठा है लेकिन उपासना सिद्ध हुई है। उपासना सिद्ध होने के कारण परमात्मा का दर्शन मानो होने लगा। बहुत कठिन बात है। और आज के युग में तो संभव ही नहीं लगता है। लेकिन आदर्श बड़े महान होते हैं और उनसे किंचित प्रेरणा भी मिले, तो उनका स्मरण रखने मात्र से ही मानव के मन में पुलक और शक्ति जागती है। जब उसे बिठा दिया गया, उस दुर्धर्ष पिता ने सोचा कि राज्य में विद्रोह करने वाले अपने ही इस कुलांगार पुत्र को मैं समाप्त कर दूंगा। कितना भक्त है, लेकिन उसे वह कुलांगार की संज्ञा देता है। जब वह बैठ जाता है, और अग्नि शमित होती है। अग्नि शमित होने के बाद, अहंकारी व्यक्ति अपने गर्व को सांत्वना देने के लिए उस राख को हटाता है। तब देखता है कि विशेष तेज से दीप्त होकर उसका बालक पद्मासन पर बैठा अपने आराध्य देव का स्मरण कर रहा है। कहा,—'तुम बच कैसे गये'। कहा,—'उपासना कर रहा था। बहुत निकट था। अग्नि की निकटता तुमने मुझे दी, लेकिन वह अग्नि की निकटता तो मैं नहीं जान सका। लेकिन उस समय मैं उपासना ऐसी करने लगा कि, परमात्मा मेरे निकट आ गये। परमात्मा ने ही तो अग्नि बनाई है, जल बनाया है। पंचतत्व बनाये हैं। जिसकी जो वस्तु होती है, वह उस वस्तु को चाहे जब समेट के रख सकता है। आपकी जो वस्तु है उसे आप चाहें आलमारी में रखें, चाहे पार्क में रखें, चाहे कमरे में रखें, आपको कौन मना करेगा? लेकिन पिताजी, आपने तो मुझे अग्नि में बैठाया। लेकिन जब मैं उपासना करने लगा, तब प्रभु आ गये। प्रभु ने कहा तुम भजन करो। अग्नि तो मेरी है ना! इस अग्नि को मैं बदल देता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हूँ। बाहर से तो यह जलती दिखाई पड़ेगी, पर भीतर से जो इसका तत्व है, जो इसमें ऊष्णता, है दाहकता है, उस दाहकता को मैं परिवर्तित कर देता हूँ। उस छोटे से बालक ने कहा—'पिताजी आपने जब मुझे बैठाया तब बिठाते समय आप मुझसे पूछना भूल गये कि अग्नि में बैठते समय तुम कोई औषधि लेकर तो नहीं बैठ रहे हो ? जब आपने मुझे अग्नि में बैठाया तब मैंने एक औषधि ले ली। उस औषधि का ऐसा प्रभाव है कि यदि वह हो, तो अग्नि उसे स्पर्श नहीं करती। वह औषधि कहाँ है। उसने कहा—मेरे मुख में। क्रोध में तो था। उसने उसका कपोल दबा कर मुख खोला लेकिन कोई गोली दिखाई नहीं दी। कहा—'वह कैसी औषधि है जो दिखाई नहीं पड़ती।' कहा—'वह दिखाई नहीं पड़ती है लेकिन मैं निरंतर उसको अपने पास रखता हूँ।'

रामनाम जपताहं कुतो भयं, सर्वतापशमनैक भेषजः।
पश्य तात मम् गात्र सन्निधौ, पावकोऽपि सलिलाय तेऽधुना॥

उस बालक ने कहा कि वह महौषधि थी। राम नाम को लेकर बैठा था। आपको पता नहीं है कि राम नाम की दृढ़तापूर्वक उपासना करने वाला, अग्नि के द्वारा नहीं जलाया जा सकता। यदि निष्ठा परिपक्व है तो राम नाम जपते जपते, मृत्यु का भय नहीं रह जाता। अग्नि का भी भय नहीं रह जाता है। उपासना अपने शीर्ष पर पहुँचते पहुँचते व्यक्ति को संतुलन प्रदान करती है और उपासना मृत्यु के भय से भी व्यक्ति को निश्चिन्त कर देती है। हे पिता! देखो मैं प्रमाण हूँ आपके सामने। मेरे शरीर का सम्पर्क प्राप्त करने के बाद देखो तो सही। आज यह पावक, यह अग्नि जल के समान शीतल बन गई। अग्नि को भी शीतलता प्रदान करने की शक्ति उपासना में है। इसलिए वह दुःसंग के संग रहने वाला बालक अपने मन में बिलकुल सजग है कि प्रारब्ध के कारण मेरा कहाँ जन्म हुआ है, इसका तो मैं निषेध कर नहीं सकता था। ऐसी ही बात भगवान श्रीकृष्ण से कर्ण ने भी कही थी कि मेरा जन्म जहाँ हुआ है, मैं उसको रोक नहीं सकता था। लेकिन जब मानव तन आपने प्रदान किया है तब कर्म का शोधन करने का अधिकार मेरा निश्चित रूप से है। जन्म का शोधन मैं नहीं कर सकता क्योंकि वह तो ईश्वर की इच्छा से संस्कार वशीभूत, जहाँ जिस माता पिता के यहाँ आना हुआ आया ; लेकिन मानव तन प्राप्त करने के बाद, जो सत्संग करने से मति मिली है, विचार मिला है, उसे साकार रूप दे कर कर्म में परिवर्तन करने का अधिकार मुझे प्राप्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुआ है। उस अधिकार को प्राप्त करने के वाद उसे चरितार्थ करने के लिए सजग होना, प्रत्येक मानव, प्रत्येक जीव का कर्तव्य होना चाहिए। साधना के, उपासना के अन्तराय बताते हुए कहा—

त्यज दुर्जन संसर्गम्.........

जब एक वस्तु को हटायेंगे तो दूसरी वस्तु तो चाहिए व्यक्ति को। विकल्प मानो ढूँढ़ कर रखता है कि यदि ऐसा न हुआ तो ऐसा करेंगे। वैज्ञानिक लोग इसमें वड़े सावधान दिखाई पड़ते हैं। उन्होंने अभी से तैयारी करनी शुरू कर दी है, कि धरती के अन्दर के कुएँ जब पेट्रोल देना वन्द कर देंगे तो सौर ऊर्जा से काम चलायेंगे। जब सौर ऊर्जा भी कम होने लगेगी तब समुद्र के ज्वार को पकड़ेंगे, और लहरों में से ऊर्जा निकालेंगे। वैज्ञानिकों के ऊर्जा प्राप्त करने के अनेक विकल्प हैं। उपासक भी अपने अन्तर की ऊर्जा को रखने के लिए, एक को हटाकर दूसरे को स्थापित करने में सजग दिखाई दे रहा है। यदि उसने दुःसंग का परित्याग किया, तो कुछ करना तो पड़ेगा ही। बहुत अच्छी बात कही गयी है 'कुरु साधु समागमम्' साधु केवल वे ही नहीं होते हैं जो केवल भगवा वस्त्र पहनते हों, जटा-जूटधारी हों, वैरागी हों, मुण्डी हों। साधु का सम्बन्ध तो मानव की आन्तरिक प्रवृत्ति और सदाचार से है। कोई व्यक्ति गृहस्थ जीवन जीते हुए भी साधु जीवन जी सकता है। कोई व्यक्ति साधु जीवन वाहर से दिखने पर भी साधु जीवन न अपना सके, ऐसी भी कोई कठिनाई उनके सामने आ सकती है। इसलिए वस्त्रों के द्वारा और वेश के द्वारा कोई साधु नहीं बन पाता है। साधु का साथ करने से उनकी ऊर्जा, उनका प्रकाश, व्यक्ति को स्वयं प्राप्त होता है। यदि आप हिमालय में खड़े हों तो आपको शीतलता का अनुभव होता है। यदि आप किसी औद्योगिक संस्थान में जाकर भट्ठी के पास खड़े हों, तो आपको गर्मी लगेगी। यदि आप उद्यान में चले जाँय तो आपकी नासिका में सुगन्ध विना बुलाये प्रविष्ट होगी। यदि आप गन्दे नाले के पास चले जायें तो दुर्गन्ध आपको चारों ओर से आवेष्टित करने का यत्न करेगी। यदि आपने दुर्जन के पास बैठने का विचार किया तो आप कितने ही सजग क्यों न हों, उसकी ऊर्जा, उसके अणु कभी-कभी आपको प्रभावित कर सकते हैं। ऐसा शास्त्रों में कई जगह उदाहरण मिलते हैं। नदी में स्नान कर रहे हैं एक ऋषि। उन्होंने अपनी साधना में आँख बन्द करते करते अचानक दृष्टि खोली और उनको जागतिक दृष्टि से जीवन जीने वाले, जल के दो प्राणी मत्स्य और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मत्स्या दिखाई पड़े। वहाँ से जब लौटकर आये, तो उनके मन में विचार बदल गया। एक विरक्त जीवन गृहस्थ में परिवर्तित हो गया। सौभर ऋषि ने बाद में वर्णन किया—

'अहो इमम् पश्यतु में विनाश'

उन्होंने कहा—संसार के लोगों मेरे विनाश को देखो। मेरी महानता को मत देखो। दुनिया में अपनी महानता दिखाने वाले तो धरती पर बहुत मिलेंगे। लेकिन अपने विनाश का दर्शन करा कर दूसरे लोग विनाश के पथ पर न जाँय, ऐसे ऋषि इस पावन धरती पर कभी कभी आते हैं। वे अपनी चिन्ता न करके समष्टि की चिन्ता करते हैं। समष्टि के भीतर नारायण का दर्शन कर, उसी नारायण की प्रसन्नता में अपनी प्रसन्नता का बोध प्राप्त करने वाले ऐसे ऋषि कभी कभी भारत की धरती पर आये हैं और उन्होंने बहुत कुछ दिया है। अतः कोई व्यक्ति कहे कि मैं तो बहुत सजग हूँ। २ मिनट के लिए चला भी जाऊँ तो क्या होगा? पर हिन्दी के कवि ने कहा कि आप इतने सयाने नहीं हो सकते हैं—

> 'काजल की कोठरी में कैसोहू सयानो जाय
> एक लीक काजर की लागिहै, पै लागिहै

काजल की कोठरी में कितना भी बुद्धिमान व्यक्ति जाये तो भी एक रेखा काजल की लग ही जायेगी। इसलिए उपासना के क्षेत्र में यदि आप आगे बढ़ना चाहते हैं तो, 'त्यज दुर्जन संसर्गम् कुरु साधु समागमम्' और फिर उससे मूल का ज्ञान हो जायेगा। वह मूल है परमात्मा। जैसे वृक्ष के मूल को सिंचित करने से सब कुछ तृप्त हो जाता है, वैसे ही जगन्नाथ को, विश्वम्भर को समर्पित होने से निश्चित रूप से यदि आप सबके भीतर दर्शन कर सकें तो बड़ी अच्छी बात है। यदि ऐकान्तिक साधना का सुख मिलने लगे तो उससे भी व्यक्ति का बहुत कल्याण होता है। मुझे तो महर्षि अरविन्द का दर्शन करने का सौभाग्य नहीं मिला—लेकिन एक विचारक उनके पास गये थे और कहा कि आपके पास तो क्रान्ति की शक्ति है, लेखन की शक्ति है, और आपके पास योग की शक्ति है। आप समाज में आकर घूम घूमकर लोक जागरण करने का प्रयत्न क्यों नहीं करते हैं? उन्होंने बहुत अच्छा उत्तर दिया था कि जो लोग घूम घूम कर समाज की सेवा कर रहे हैं, ठीक है। वे समष्टि की सेवा कर रहे हैं। लेकिन आप यह कैसे मानते हैं कि एकान्त में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहने वाला व्यक्ति समष्टि की सेवा नहीं करता। केवल बाहर जाकर कोई व्यक्ति अपने विचारों का प्रसारण करे, वह तो दिखता है समाचार-पत्रों से, पुस्तकों से, लेखनी से, वाणी से, भाषणों से। लेकिन जो एकान्त में बैठा हुआ व्यक्ति है वह लोक-कल्याण नहीं कर रहा है ऐसा नहीं कहा जा सकता। और उन्होंने कहा कि—जो लोग विचरण करके समाज का कल्याण करते हैं अच्छे होने पर भी, बिखरी हुई ऊर्जा के थोड़े-थोड़े पुंज हैं। उनमें से उतना प्रकाश और उतनी शक्ति समाज को नहीं मिल सकती। लेकिन कई वर्षों तक एकान्त साधना करने वाला व्यक्ति, अपनी उस समस्त साधना को एकत्रित करके समष्टि के लिये प्रेषित करने का यत्न करे तो वह लोक का और भी अधिक कल्याण कर सकता है। जब कभी दंगे हो जाते हैं तो लोग लाठी चलाते हैं शमन करने के लिए दंगाइयों को। कभी अश्रु गैस छोड़ते हैं, कभी गोली चल जाती है, २-४-१० लोग मर जाते हैं। लेकिन आपने कभी विचार किया कि वैज्ञानिक ने जब अपने विचारों को निर्माणात्मक न रख कर, विध्वंस की ओर ले जाने का प्रयत्न किया, तो वैचारिक एकाग्रता के क्षणों में उसके भीतर से एक अन्तर में विस्फोट हुआ। विचार आया कि वह अणुबम बनाये और उसने अणुबम बनाया। लाठी, गोली अश्रुगैस, इन्होंने नुकसान पहुँचाया २-४-१० लोगों को। उसके बाद वहाँ कुछ शांति हुई, लेकिन यदि मानव कभी अपनी ऊर्जा को निर्माण की दिशा से हटाकर विध्वंस की ओर लगा ले तो वह अणुबम बनाता है। नागासाकी और हिरोशिमा के वे दृश्य आज भी लोगों को याद हैं और प्रतिवर्ष वे लोग वहाँ पर इकट्ठे होकर सर्वधर्मावलम्बी परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि विश्व के सामने ऐसा करुण दिन फिर कभी न आये जिससे परमात्मा की आनन्द बगिया कहीं श्मशान का रूप ग्रहण कर ले। एकान्त में बैठा हुआ वैज्ञानिक बुद्धि का नियंत्रण न कर पाने के कारण विध्वंसात्मक तत्व के एकत्रीकरण से उस उर्जा को विस्फोट से विध्वंस की ओर ले जाता है। एकान्त में बैठा हुआ उपासक, अपनी समस्त ऊर्जा का संग्रह करके यदि विस्फोट करे तो विश्व का बहुत बड़ा कल्याण हो सकता है। यह महर्षि अरविन्द ने बात कही थी और सचमुच बहुत अच्छी लगती है। समझ में आती है। क्योंकि बाहर विचरण करने वाले व्यक्ति, इच्छा न होने पर भी भिन्न २ संकल्पों में जीते हैं। यदि कोई व्यक्ति यह चाहे कि मेरा संकल्प पूर्ण हो तो उस संकल्प के पुनरावर्तन में पूरी शक्ति लगाये १-२ वर्ष की। फिर दूसरा संकल्प न आने दे, तो चाहे कितना बड़ा भी संकल्प क्यों न हो वह पूरा हो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जायेगा। और कोई व्यक्ति यह सोचे कि मेरे सब संकल्प पूर्ण हो जायें, और एक-एक मिनट में अलग-अलग संकल्प करता रहे तो भगवान की कृपा से उसका एक भी संकल्प पूरा न होगा। यदि एक ही संकल्प का पुनरावर्तन करें तो निश्चित रूप से उसमें ऊर्जा निर्मित होगी। उसमें शक्ति बैठ जायेगी। हमारी कठिनाई यह है, जागतिक जीवन में अच्छे-अच्छे व्यक्तियों के संकल्प बदलते रहते हैं। मैं तो साधक मानता हूँ अपने आपको। लोग मुझे क्या मानते हैं, मुझे मालूम नहीं। लेकिन मैं अपने मन को पढ़ने की बहुत चेष्टा करता हूँ। जब रविशंकरजी के प्रोग्राम को सुनने के लिए मैं लन्दन में वाई० एम० सी० ए० के हॉल में गया। आमंत्रण आया था। तो बहुत बार भगवान की कृपा से सन्तुष्ट रहने का अधिकांश मन तो रहता है लेकिन जब उनको सितार बजाते देखा, उँगलियों का नर्तन देखा, तल्लीनता देखी, तो मन में एकदम विचार आया कि अपने पास तो साधक जीवन में समय था। यह संस्कृत के श्लोक और शास्त्र पढ़ते-पढ़ते यदि सितार बजाने का भी अभ्यास किया होता तो कितनी बढ़िया बात थी। भगवान के निरन्तर भजनभाव करते हुए भी एक व्यक्ति को देखकर एक अभाव का अनुभव होने लगा। ४-५ दिन के बाद यह बड़ी अच्छी बात हुई कि ब्रेंट टाउन हाल, वेम्बली में मेरा प्रवचन था। मेरे आयोजकों ने उनको भी आमन्त्रित किया और जब हम उनसे मिले तो कहा पण्डितजी! आपका वह सुन्दर कार्यक्रम देखकर मैं तो एक अभाव में डूब गया कि मैं भी सितार सीखता तो अच्छी बात थी। उन्होंने कहा कि बड़ी अच्छी बात है। एक दिन तो मैंने आपका प्रवचन सुना था। मैं तो काशी का निवासी हूँ। मुझे बहुत पंडितों का साथ मिला। मैंने उस दिन विचार किया कि मेरे पास समय होता तो मैं भी प्रवचन करता और प्रवचन और संगीत दोनों होते तो कितनी अच्छी बात होती। मैंने कहा यह बहुत अच्छी बात है। मानव जगत के घेरे में आता है तब संकल्प बार बार नये उठते हैं। संगीतकार के मन में प्रवचन का भाव उठता है और प्रवचन वाले के मन में संगीत का। यही जगत है। इसमें थोड़ा ऊपर उठने के लिए उपासना करनी है। जहाँ मानव अपने संकल्प में दृढ़ रह सके। अन्तराय है जीवन में दुःसंग। इसलिए उसके परित्याग करने की बात कही गयी। दूसरी बात कही गई—कुरु साधु समागमं। और फिर एक बात कही गई क्योंकि मानव कुछ किये बिना रह नहीं सकता इसलिए—

'कुरु पुण्यमहोरात्रम्'

दिन और रात में जब भी मानव जग रहा है, पुण्य करने का विचार करे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कितने पुण्य उससे हो सकेंगे इस विचार को छोड़ देना चाहिए। लेकिन वृत्ति में यदि पुण्य रहे तो हाथों में पुण्य अपने आप आ जाता है। वृत्ति में पुण्य रहे तो दृष्टि में पुण्य अपने आप आ जाता है। इसलिए वृत्ति को पुण्यमयी बनाने का बराबर प्रयास करना चाहिए। और चौथी बात कही—

'स्मर नित्यमनित्यताम्'

अनित्य का नित्य स्मरण। बहुत गहरी बात विचारक ने कही है, क्योंकि जिसको हम जानते हैं कि संसार परिवर्तनशील है। लेकिन यह बात दृढ़ नहीं रह पाती। यदि दृढ़ रह पाये तो निश्चित बात है कि कोई कठिनाई जीव की रहती ही नहीं। जगत की नश्वरता का बोध कई बार टूट जाता है। जगत की नश्वरता का बोध टूट जाने पर फिर अचानक कहीं दूर खड़ी हुई आसक्ति आक्रमण करने का यत्न करती है, और हम उसके पंजे में आ जाते हैं। सबके साथ यह कठिनाई लगी है। एक दिन का यह विषय नहीं। इसलिए तो गोस्वामी तुलसीदासजी ने यह कहा है—

शनैः शनैः रूपरमेत् बुद्धया धृति गृहीतया।

अपने मन की इन सारी कठिनाइयों को विजित करने के लिए व्यक्ति को, उपासक को, साधक को, भक्त को, धीरे चलना चाहिए। गोस्वामी ने भी कहा है कि सरोवर तो बहुत भरा हुआ है लेकिन—

रस रस सूख सरोवर पानी,
ममता त्यागि करहिं जिमि ज्ञानी॥

जैसे ममता का ज्ञानी धीरे धीरे त्याग करता है वैसे ही उपासक को अपने इन अन्तरायों के ऊपर धीरे धीरे अवरोधों के ऊपर, धीरे धीरे विजय प्राप्त करने का यत्न करना चाहिए। फिर मानव को समझने की शक्ति मिल जाती है। हम कहाँ खड़े हैं उस भूमि का वास्तव में ज्ञान हो जाता है। और व्यक्ति को स्वयं यह मालूम हो कि मैं अध्यात्म की किस भूमि पर खड़ा हूँ तो उसे प्रगति करने में बहुत सहायता मिलती है। यदि कोई दूसरा मूल्यांकन करके मुझे कहता है तो मैं कई बार उस मूल्यांकन में अपने को देखने का प्रयत्न करने लगता हूँ और अपना मूल्यांकन बहुत पीछे रह जाता है। जब व्यक्ति ऐसा करता है। तो अन्तर में शक्ति जागती है एक दृष्टान्त मुझे याद आया। एक बहुत अच्छा चित्रकार था उसका बड़ा यश था इसलिए राजा के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वारा उसे पुरस्कृत करने के लिए सोचा। मैं केवल कहूँगा तो राजा कहेगा कि मैं इसे पुरस्कृत करना चाहता हूँ। इसलिए इसे कैसे बुलाऊँ कि राजा स्वयं इसकी कला का ज्ञान देखे और प्रभावित हो और इसे पुरस्कार मिले। ऐसी उस मन्त्री के मन में इच्छा जागी। उसने राजा से कहा कि एक बड़ा अच्छा कुशल चित्रकार है जिस दिन आपके पास समय हो उस दिन मैं उसको बुलाऊँ। वह पूरे देश में बड़ा यशस्वी चित्रकार था। तुरन्त किसी वस्तु को देखकर उसके चित्र का निर्माण कर लेता था। बुलाया गया। उन दिनों में 'असूर्यम्पश्या' महिलाएँ हुआ करती थीं। सूर्य की किरण भी न पहुँचे इतने पर्दे में रखा जाता था। ऐसा कोई मध्ययुग में होगा। इसलिए सम्पूर्ण वस्त्रों में आवेष्टित राजरानी भी वहाँ आई और इच्छा व्यक्त की कि उस चित्रकार को मैं भी देखूँ जिसका इतना यश है। चित्रकार वहाँ बैठा था। मंत्री ने कहा—किसी का चित्र बनाओ। उसने कहा चित्र बन जायेगा तब पहिचान लेना। मैं चित्र बनाता हूँ। राजरानी तो वस्त्रों में आवेष्टित थी लेकिन उसे कहीं भूल से उसके चरणों की एक उँगली दिखाई पड़ रही थी। केवल उस एक उंगली के दर्शन करने मात्र से उस चित्रकार ने उसका सम्पूर्ण सुन्दर चित्र बना दिया। सबने देखा, सब बड़े प्रसन्न हुए—विस्मित हुए। लेकिन राजा क्रोध की मुद्रा में आ गया। उसने कहा यह मेरे प्रासाद की सीमा में कभी आया नहीं और इसने राजरानी का ज्यों का त्यों चित्र बना दिया। उसे संदेह हुआ इसके चरित्र के ऊपर। मंत्री ने कहा यह आया ही कभी नहीं। इसको अपने मन की वृत्तियों को एकाग्र करने की कला ज्ञात है। शरीर के एक अवयव मात्र को देख लेने मात्र से ही शरीर का सम्पूर्ण चित्र बना देने की क्षमता इसके भीतर जग जाती है। राजा को विश्वास नहीं हुआ। उसने कहा मैं इस पर भरोसा नहीं कर सकता हूँ और उसे फाँसी की सजा दी गई। पुरस्कार देने के लिए मंत्री आया था लेकिन हो गया उलटा 'लिखत सुधाकर गा लिखि राहु, विधिगति वाम सदा सब काहू' की बड़ी विचित्र बात है। सब लोग चीत्कार करने लगे। हाय २ करने लगे। मंत्री ने कहा महाराज मैं आपके साथ रह रहा हूँ इतने वर्ष से। भीख माँगता हूँ—इसके प्राणों की। आपका संदेह निराधार है। यदि आपको विश्वास नहीं तो इनमें से किसी भी अनजाने व्यक्ति को पूरी तरह से कपड़े से आवेष्टित करके दूर से बुलाइये। केवल उसके हाथ की उँगली बाहर रहने देना। फाँसी के क्षण कुछ टल रहे हैं। जल्लाद बुला लिये गये थे। आरा चलने वाला था, जब उसने फिर से अपने मन को एकाग्र कर फिर से चित्र बनाने का यत्न

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किया। वह व्यक्ति हूबहू बन गया। राजा ने एकान्त में जाकर उस व्यक्ति को बुलाया और चित्र को मिलाया। वह बड़ा प्रसन्न हो गया। उसका क्रोध दूर हो गया। उसने बहुत बड़ी भूमि और उपाधि उसे प्रदान की। यह बड़ी पुरानी कहानी है लेकिन इसके भीतर एक बहुत बड़ा दृष्टान्त है 'जो पिण्ड में है वही ब्रह्माण्ड में है।'

'यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे'

यदि हमारे और आपके मन में परमात्मा के सारे संसार को जानने की एक बार इच्छा हो भी जाये, लेकिन उपासक के मन में फिर भी जगत को जानने की इच्छा रहती ही नहीं। यदि फिर भी आपके सात्विक मन में जगत जानने की इच्छा हो जाये तो परमात्मा उसके ऐकान्तिक मन के भीतर, वृत्ति के भीतर, स्पन्दन के भीतर, बुद्धि के भीतर, ऐसी शक्ति दे देता है कि वह एक क्षण के भीतर वह सकल ब्रह्माण्ड की जो वास्तविकता है, उसे जान लेता है। कभी उपासक के ऊपर करुणा कर दे, तो वह बात तो आपने कई बार जानी पढ़ी सुनी है, कि जब यशोदा मैया के मन में विचार जागता है। विचार नहीं जागा है, पर भगवान कृपा करके उन्हें दिखा देना चाहते हैं कि कोई रस शेष न रह जाये।

'रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते'

जब तक परम का दर्शन न हो तब तक जगत के पदार्थों में थोड़ा बहुत रस शेष रह जाता है। इसलिए उस रस की वर्जना के लिए भगवान ने कहा कि मेरी मैया है। मेरा कितना लाड़ लड़ाया है। वे जानबूझकर माटी खा लेते हैं। जब माटी खा लेते हैं तो यशोदा मैया मुँह खोल उँगली डालती हैं। जब मुँह खोलती है तो आज उपासक के जीवन का धन्यतम दिन है। देखती तो है कि माटी निकालूँ। माटी को शोधन करने के लिए वह माटी देखने जाती है तो, यह सारा विश्व माटी का ही तो वृहद् रूप है। तब वह माटी नहीं दिखाई पड़ती है। विश्वरूप दिखाई पड़ता है। विश्वरूप देखने के बाद मैया आँख बन्द कर लेती है। यशोदा को श्रीकृष्ण ने कृतार्थ किया है।

> इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा,
> मति भ्रम मोर कि आन बिसेषा ॥

यह दो है कि एक है। एक भोजनालय में दिखाई पड़ रहा है और एक शयनागार में दिखाई पड़ रहा है फिर विराट का दर्शन कराके श्रीराम अपनी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

माँ कौशल्या को कृतार्थ करते हैं। उपासक के मन में विश्व देखने की आकांक्षा यदि कहीं सूक्ष्म रह भी जाये तो उसे विश्व में नहीं जाना पड़ेगा। वही उपास्य, जिसकी आराधना कर रहे हैं वही परम करुणावरुणालय, कृपासिन्धु, परमात्मा, कृपा करके हमें और आपको जो पिण्ड में है उसी में ब्रह्मान्ड का दर्शन करा देंगे।

मानव को नित्य इस बात का स्मरण करना चाहिए कि जिस जगत में हूँ, वह वास्तव में क्षणभंगुर है। परमात्मा का ऐसे बार बार ध्यान रखना चाहिए जैसे राजस्थान में बहिनें बड़ी दूर से पानी भरने जाती हैं। वहाँ की ग्राम बालाएँ जब आती हैं तब उनके सिर के ऊपर घड़े होते हैं। उनके बगल में घड़ा होता है। उसकी कोई सहेली मिल जाती है तो उनसे बात भी करती है। बात करते समय भी इतना बोझा है सिर पर। लेकित रसखान ने कहा— जगत के लोगों तुम्हारे ऊपर संसार के व्यापार परिवार, और व्यवहार का जितना भी भार हो, लेकिन भार में भी भगवान का स्मरण किया जाता है और उसने उदाहरण दिया कि—

सबसे मिलिये दुर्भाव नहीं, यह है सत्संग उजागर में।
रसखानि गोविन्द को यों भजिये, ज्यों नागरि को चित् गागरि में॥

जैसे नागरी का ध्यान गागरी में होता है और वह बात कर लेती है। वैसे ही हम और आप संसार में आये हैं। संस्थाएँ, व्यवहार, उद्योग, कृषि, अधिकारी, सब होंगे। मित्र, स्वजन, मंगल, परिणय, उत्सव, योग, वियोग सब होगा लेकिन जैसे गाँव की नागरी निरंतर अपने घड़े का ध्यान कर सकती है, वैसे ही रसखान जैसा मुसलमान कवि हमें और आपको उपासना के क्षेत्र में संदेश दे रहा है। यदि जगत की अनित्यता का ध्यान होता रहा तो अपने आप ही दूसरा ध्यान परमात्मा की नित्यता का स्वयं होने लगेगा। और फिर मानव हर २-४ क्षणों के बाद अपनी उस भावधारा को परमेश्वर की पावन स्मृति धारा से जोड़कर अपने जीवन को धन्य बनाने का कार्य करता ही चला जायेगा। उसे ऐसा लगेगा कि वास्तव में इस भगवान के रस से संसार के सब रस छोटे हैं। जब तक यह ज्ञात नहीं होता कि इससे बड़ा कोई और रस है तब तक अन्य रसों की ओर मेरी और आपकी अभिरुचि रहती है। लेकिन यह जान लेने के बाद कि उपासना का रस बहुत बड़ा रस है, तो जगत के कार्य तो होते हैं लेकिन रसानुभूति बन्द हो जाती है। जब रसानुभूति बन्द हो जाती है तो बन्धन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बन्द हो जाते हैं। उसके द्वारा नये संस्कारों की रचना बन्द हो जाती है। कोई व्यक्ति यों ही अनाज का दाना डाल दे तो उसमें अंकुर निकलेगा। कोई व्यक्ति उसी अनाज के दाने को भून कर खेत में डाल दे, तो दाना तो पड़ा लेकिन उसमें से अंकुर न निकलेंगे। फिर तो आपकी उपासना आपके जीवन की शीतलता भी बनेगी और उपासना में एक अग्नि भी होती है जो मानव के पापों को दग्ध करती है। फिर मानव अपनी उस उपासना की उस अग्नि से अपने कर्म के बीज को दग्ध कर देता है। जब कर्म का बीज दग्ध हो गया तब नये संस्कार की खेती होती नहीं। जब संस्कार ही शेष न रहे, तो वासना क्षय हो जाती है। जब वासना ही नहीं रही तो फिर जन्म किसका होगा। आप सब पुर्नजन्म के अधिकार से वंचित और आनन्द के अधिकार को प्राप्त कर परमानन्द स्वरूप बन जाते है। लेकिन यह तभी होता है जब मानव के पास अपना कुछ न रहे। समर्पण की सीमा पर पहुँच जाये।

कल कहा था कि उपासक अपनी बुद्धि और मनीषा का प्रयोग कहाँ करता है। क्योंकि परमात्मा के दोनों वरदान हैं। यदि इनका दुरुपयोग हो जाये तो व्यक्ति पश्चाताप करेगा ही, लेकिन प्रदाता भी विचार करेगा कि मैंने योग्य व्यक्ति को यह वस्तुएँ प्रदान नहीं की थी। बहुत अच्छे अच्छे दानदाता दान तो देते हैं पात्रों को संस्थाओं को। पर कभी उनको यह ज्ञात हो कि जिस संस्था या व्यक्ति को मैंने दान दिया था वह उसका ठीक उपयोग नहीं करता है तो उसको बड़ी पीड़ा होती है। उसको ऐसा लगता है कि वास्तव में सब कुछ देख लेने के बाद ही अपने इस धन का सदुपयोग करना चाहिये। आप विचार करें कि यदि आपने १०,०००/- रुपये दिये हों, तो आपका मन दुखी होता है कि हमने उचित पात्र को यह नहीं दिया। कहीं इसका दुरुपयोग न हो जाये। परमात्मा ने कितनी कृपा की कि मुझे और आपको बुद्धि और मनीषा प्रदान की। यदि हम उसका ठीक उपयोग न करें तो परमात्मा के मन में भी विचार तो आता होगा कि मैंने इसे सर्वोत्तम पदार्थ दान में दिया और इसने इसका सदुपयोग करने का प्रयत्न ही नहीं किया।

काँच किरिच बदले ते लेहीं,
कर ते डारि परस मनि देहीं ॥

यह बात पहले भी निवेदन कर चुका हूँ। यदि मानव यह विचार करे कि जीवन है और हम जी रहे हैं, तो जीने मात्र से तो जीवन की पूर्णता होती नहीं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महर्षि वेदव्यासजी ने कहा कि यदि आप देखने का यत्न करें तो आपको दिखाई पड़ेगा कि संसार में वृक्ष बहुत दिन तक जीते हैं। इससे बड़ा प्रमाण क्या होगा कि आपके इस महानगर में जो सबसे बड़ा वटवृक्ष है उसे देखने के लिए लोग कहाँ २ से आते हैं।

'किं जीवन्ति, न खादन्ति, किं ग्राम पशवोऽपरे ।।'

भगवान वेदव्यासजी ने कहा—कि श्वास लेने की प्रक्रिया तो लोहार की धोंकनी भी परिपूर्ण करती है। संसार के पदार्थों का सेवन तो गाँव का जो पशु है, वह भी किसी प्रकार से जीवन की सामान्य आवश्यकताओं को प्राप्त कर लेता है। मानव तो फिर भी लज्जा और नागरिक शास्त्र के नियमों का पालन करता है। लेकिन पशु तो उन सब बातों का विस्मरण करके जीवन की सामान्य वस्तुओं को पा लेता है। यदि उन्हीं सब बातों में मेरा और आपका जीवन लगा रहे तो भगवान, मनीषा और बुद्धि के प्रदाता परमात्मा प्रसन्न न हों पावेंगे, यह विचार उपासक के मन में निश्चित रूप से रहना चाहिए। कोई एक विचार मानव को बहुत बड़े स्थान में पहुँचा देता है। विचारों का समुदाय, ग्रन्थों की ज्ञान राशि, और विद्वत्ता का अपार स्रोत यदि किसी व्यक्ति के पास हो तब तो कहना ही क्या, लेकिन विचार का कोई एक सूत्र भी मानव को परम कल्याण की ओर ले जा सकता है। एक प्रमाण है जहाँ मानव अपने पूर्व प्रारब्ध में जी रहा है। जीते २ प्रारब्ध के उदय का काल मानो आया, तो उसी समय किसी महर्षि, किसी महात्मा, किसी महन्त, किसी साधु, किसी सात्विक व्यक्ति के साथ मिलन हुआ और उसके विचार की छाप मानव के जीवन को परिवर्तित कर देती है। कल तक दस्यु जीवन में जीने वाला व्यक्ति मार्ग में प्रत्येक व्यक्ति की वस्तु का अपहरण करने वाला व्यक्ति, देवर्षि नारद के एक क्षण के मिलने से जीवन के परिवर्तन को सारे संसार के सम्मुख प्रदर्शित करता है। कल्पना जिसकी नहीं है कि मेरे भीतर में ऐसा सम्भावित स्रोत है जो मचल रहा है, कुलबुला रहा है, बाहर की ओर आने के लिए, एक दिन पहले तक उसको ज्ञात नहीं था। लेकिन जिस दिन देवर्षि नारद से मिलन होता है, नाम की धारा प्रवाहित होती है, उस दिन अभ्यास होता है कि पक्षियों के उस विचित्र से दृश्य को देखकर जिसमें से व्याध बाण चला रहा है उसमें से आदि कवि की कविता फूट पड़ती है। कोई व्यक्ति यह कह सकता है कि मानव के 'जीवन में प्रारब्ध के उदय का, आत्मोदय का, अध्यात्मउदय का कौन सा काल निश्चित है? यह कोई व्यक्ति पहले से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं वता सकता है। इसलिए परमेश्वरकी दी हुई उस प्रज्ञा, बुद्धि और मनीषा का आपको ऐसा उपयोग करना चाहिए कि जो अन्ततः सत्य की ओर ले जाये और जो मृत्यु से अमृतत्व की ओर ले जाये। अमृतत्व भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी बात है। यह बड़ी अच्छी वात है कि वह अमृतत्व मानव को संग्रह से नहीं मिलता। यदि मिलता होता तो लोगों ने परित्याग करने के मार्ग को स्वीकार ही क्यों किया होता? परित्याग के द्वारा मानव को एक सुखद अनुभूति होती है, यह आपमें से कई विचारवान व्यक्तियों ने कई बार अनुभव किया होगा। जव २ कभी आप सात्विक कर्म के द्वारा अपने धन, सम्पत्ति, प्रतिभा और ज्ञान को दान के मार्ग पर ले जाते हैं तव देना पड़ता है। देना ही परित्याग है। और जव २ त्याग मिलता है मानव को जीवन में, तो उससे भी कोई बड़ी चीज उसे मिलती है। भगवान श्रीकृष्ण से अर्जुन ने पूछा था—महाराज भारतीय संस्कृति का त्यागमार्ग बड़ा श्रेष्ठ है। इसकी सबने वन्दना की है और वर्णन किया है। लेकिन त्याग से मिलता क्या है? बड़ा छोटा सा वाक्य है गीता का—आप सबको कण्ठस्थ होगा। लेकिन प्रतिदिन यदि व्यक्ति एक क्षण के लिए उस वाक्य को पढ़ ले तो उसके मन में अमृतत्व की उपासना निरंतर जागती रहेगी। भगवान श्रीकृष्ण ने कहा—कि अर्जुन मैं तुम्हें जो त्याग का उपदेश दे रहा हूँ, तुम युद्ध में विजयी हो जाओगे, हस्तिनापुर का तुमको राज्य मिल जायेगा, इतिहास बदल जायेगा, तुम संसार से चले जाओगे पर गीता रह जायेगी। उसका विचार रहेगा। तव लोग विचार करेंगे कि युद्ध के लिए श्रीकृष्ण ने गीता का उपदेश दिया था। अमृत बहाया था? युद्ध के लिए नहीं। भगवान ने कहा—यह सव त्याग की ओर ले जाने की बात है। युद्ध उस समय जो भगवान ने कराया—उसके पीछे त्याग की ही प्रेरणा थी। बहुत विचार करने के वाद यह बात निश्चित रूप से सिद्ध हो जायेगी इसलिए भगवान ने कहा—

त्यागात् शान्तिः अनन्तरा।

त्याग के वाद मानव को क्या मिलती है? शान्ति मिलती है। आप और हम किस लिए संसार में कर्म कर रहे हैं। एक श्रमिक मजदूर किसी कारखाने में काम क्यों करता है? क्योंकि उसे शान्ति मिले। एक बहुत बड़ा उद्योग-पति अपने औद्योगिक साम्राज्य की रचना क्यों कर रहा है? क्योंकि उसे शान्ति मिले। संन्यासी प्रवचन क्यों करता है? शान्ति मिले। हिमालय की एकान्त गुहामें बैठकर साधक ध्यान क्यों कर रहा है? ताकि उसे शान्ति मिले।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रचनाकार लेखक अपनी लेखनी से अपने विचारों को बाँट रहा है क्यों ? क्योंकि उसे शान्ति मिले। जिस शान्ति में बाधा पड़े तो आदमी उन सारे कर्मों को छोड़ देता है। जब वे बाधक बन जाते हैं, जिनसे कल तक प्रीति रहती है जिन कर्मों से, जिन व्यक्तियों से, जिन पदार्थों से, उनका परित्याग करने में भी मानव विलम्ब तक नहीं करता जब वे बोझ बन जाते हैं। उसमें से आशा बनी रहे कि शान्ति मिलेगी तो भी करेगा। शान्ति का अनुभव क्षणिक भी हो तो भी करेगा। लेकिन वे जब पूर्णरूप से कंटक बन जायेंगे, बोझ बन जायेंगे, तो उनका परित्याग कर देगा। उपासक के जीवन में त्याग की वह मात्रा अन्तर से आनी चाहिए। बाह्य त्याग बहुत बार नहीं भी हो सकता है यदि अन्तर से बहुत गहरा राग बना रहे और बाहर से त्याग कर भी दिया जाये तो उसका बहुत लाभ मिलता भी नहीं। क्योंकि वह आसक्ति तो यहाँ आस्वादन लेती रहती है। यदि आसक्तिपूर्वक मानव आस्वाद ग्रहण करता है, और बाहरी दृष्टि से उसका त्याग करता है तो हो सकता है कि कुछ लोग उसकी प्रशंसा कर दें, उसका मान हो जाये। लेकिन स्वयं वह व्यक्ति उसका बहुत लाभ प्राप्त नहीं कर सकेगा। गोस्वामी तुलसीदासजी जैसे सन्त ने बड़ी कठिन बात अपनी दोहावली में कही—

> अन्तर ते अति वासना, बाहर प्रकटत त्याग।
> तुलसी ऐसे त्याग पे, परै भार की मार।

उन्होंने बहुत सौम्य भाषा का प्रयोग किया है। पर कहीं कहीं तुलसीदास जी ने आडम्बर न बढ़ जाये, धर्म के नाम पर लोग दिखावे में न पड़ जायें, इसलिए कवि ने सावधान किया कि **त्याग एक अन्तर की प्रवृत्ति है।** जिसके द्वारा मानव को सहज रूप से जिन जिन वस्तुओं के प्रति राग की कमी होती चली जाती है, फिर वह अपने लिये उनको निरर्थक मानता है। वह उन वस्तुओं को छू नहीं सके, पा नहीं सके, देख नहीं सके, उनका उन्होंने कभी अनुभव नहीं किया तो ऐसे व्यक्ति अपने त्याग का लाभ उन सामान्य लोगों में वितरित कर देते हैं, जिन्होंने देखा सुना समझा पाया नहीं। प्रकारान्तर से देखें तो अपने इस आध्यात्मिक जीवन का त्याग मार्ग, मानव की सेवा का अनुपम संदेश दे रहा है। एक वस्तु आपके पास है। साम्राज्य का सुख आपने पाया पर आपने विवेकपूर्वक भोगने के कारण एक दिन वह स्थिति प्राप्त कर ली कि आपको उस साम्राज्य में कोई रस नहीं दिखाई पड़ता। उस साम्राज्य की अनेक वस्तुएँ जिन्हें लोगों ने बहुत दूर से,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लालायित नेत्रों से देखा है ऐसे अनेक व्यक्तियों के सामने में सहज रूप से उठा कर आप फेंक देंगे। उसे दे डालेंगे। उसके लिए वह बहुत मूल्यवान है और आपके लिए वह कोई मूल्य नहीं रखता। तो जो दरिद्रता में जी रहे हैं, जो अभाव में जी रहे हैं उन लोगों की भी प्रकारान्तर से सेवा हो जाय, रक्षा हो जाय। उनका भी ध्यान समाज में रखा जाय, तो त्यागपर प्रिय चिन्तन उपासना के द्वारा उपजा हुआ यह चिन्तन, मानव सेवा की ओर व्यक्ति की संचित सम्पत्ति का प्रवाह अपने आप ही कर देता है। यदि कोई वस्तु किसी से जबरदस्ती छीन ली जाय तो, निश्चित बात है कि वह तो रक्त क्रान्ति की बात है और दूसरी विद्वेष की बात है। उसमें कोई समता का दर्शन नहीं होता है। जहाँ समता का दर्शन नहीं हो वहाँ विषमता लाख मिटाने की कोशिश की जाये विषमता बनी ही रहेगी। यदि गरीब और अमीर के भेद को जबरदस्ती मिटा दिया जाये, तो मन की विषमता जो उत्पन्न होगी तो उसमें जो बलवान होगा तब प्रतिक्रिया होगी। यदि विषमता के उद्घोष करने वाले, गरीब समाज के नेतृत्व करने वाले लोग ज्यादा बलवान हो जायेंगे तो वे सम्पन्न के प्रति विद्रोह करेंगे। और सम्पन्न व्यक्ति के पास यदि सत्ता और शक्ति अधिक आयेगी और विषमता की बात कह कह कर लोगों में 'खाई है' ऐसा उद्घोष करने वाले जब कमजोर दिखाई पड़ेंगे और पूरी सत्ता सम्पन्न व्यक्ति के पास आयेगी, तब वे और दबाने की चेष्टा करेंगे। क्योंकि मन के भीतर विषमता बनी है, तो बाह्य विषमता चाहे जितनी मिटाने की कोशिश की जाये, वह बहुत कारगर नहीं होगी। इस दृष्टि से संसार के समाज शास्त्री विचार नहीं कर पाये। यदि विचार करें तो मानव के भीतर से वैचारिक विषमता को दूर करने का पहला प्रयास किया जायेगा। और वैचारिक विषमता, अध्यात्म और उपासना के बिना मिट नहीं सकती। जब वैचारिक विषमता इस प्रकार से मिटती है तब वह विचार करता है वेदान्ती कि—

'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'

यह सारा संसार ब्रह्म है। जब ब्रह्म की उपासना कर रहा है विराट के भीतर तो अपनी वस्तु को ब्रह्म को समर्पित करने का विचार तो अपने आप ही जग जायेगा। यदि उपासक है तो उसके मन में यह विचार जागता है कि—

'मैं सेवक सचराचर रूप राशि भगवन्त'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदान्ती है तो सब में ब्रह्म का दर्शन कर रहा है, और उपासक और भक्त हैं तो सबके भीतर अपने इष्टदेव का दर्शन कर रहा है। और जब ऐसी स्थिति में उपासक पहुँच जाता है तब तो वह भगवान से बड़े आनन्द के साथ प्रार्थना करता है कि—

न नाकपृष्ठं न च सार्वभौमं, न पारमेष्ठं न रसाधिपत्यं।
न योग सिद्धिरपुनर्भवं वा, वाञ्छन्ति यत् पादरजः प्रपन्ना ॥

भगवान वेदव्यासजी ने ऐसे उपासक की मनःस्थिति का वर्णन किया है, जो प्रभु के रस में डूबते २ विवेक के ऐसे पावन स्थान पर पहुँच गया, जहाँ वस्तु बड़ी छोटी दिखाई पड़ती है। पदार्थों में रहते हुए भी, प्रारब्ध के अनुसार पदार्थ हैं, लेकिन उसकी महिमा उसके मस्तिष्क में नहीं है। आपमें तो सम्पन्न लोग अनेक बार विदेश यात्रा करके आये हैं। जब मैं पहली बार अमेरिका गया तो मेरे कुछ मित्र मुझको इम्पायर स्टेट बिल्डिग' दिखाने ले गये। जब मैं वहाँ १०० से १०४ तल्ले पर खड़े होकर नीचे धरती पर देखने लगा तब मुझे बचपन में कभी छोटे २ खिलौने जैसे बच्चे खेला करते हैं, वैसे ही बड़ी बड़ी गाड़ियाँ दिखाई पड़ रहीं थीं। प्लास्टिक के खिलौनों की भाँति। आदमी तो बिलकुल रेंगता हुआ दिखाई पड़ रहा था। निरन्तर आध्यात्मिक चिन्तन में रहने का विचार रहता है। कितना रह पाता हूँ यह तो भगवान की कृपा पर आधारित है। मैंने कहा, यह बात आज समझ में आई। बार २ महात्मा लोग, गुरुजन कहा करते थे कि जब आध्यात्मिक उच्चता स्वीकार कर लोगे मन, बुद्धि और चेतना से, जब उसका पूर्ण सम्बन्ध हो जायेगा तब पदार्थ तुमको मिलेंगे। तो अवश्य प्रारब्ध के अनुसार; लेकिन पदार्थ बहुत छोटे दिखाई पड़ेंगे। और प्रभु बहुत विराट दिखाई पड़ेगा। मैंने कहा जब इतनी बड़ी ऊँचाई पर आदमी लौकिक जगत में आ गया और १०३ तल्ले की बिल्डिग पर खड़े होकर नीचे देखता है, तब ये बड़ी बड़ी कारें प्लास्टिक के खिलौनों की तरह दिखाई पड़ रही हैं। तो जब कोई उपासना करते २ शिखर पर पहुँच जाये, तो पदार्थ तो सचमुच उसके लिए अपनी महत्ता खो बैठते हैं। महिमा रहेगी परमात्मा की, और पदार्थ रहेंगे जगत व्यवहार चलाने के लिए। जगत व्यवहार चलाने के लिए पदार्थ की उपस्थिति बुरी नहीं है, लेकिन जब मानव के मन में वे पूर्णरूप से सत्य कभी २ लगने लगते हैं, तब कठिनाई होती है। उपासक ने भगवान से प्रार्थना की कि महाराज मुझे तो आपके चरणरज की आकांक्षा है—'वांच्छति यत् पादरजः 'प्रपन्ना' जो प्रपन्न हैं, और परमात्मा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की पावन चरणरज को स्वीकार करने का जिनमें दृढ़ विचार जग गया है वे तो भगवान से कहते हैं—

"न नाकपृष्ठं न च सार्वभौमं, न पारमेष्ठं न रसाधिपत्यं'

यह सबसे बड़े २ ऊँचे पद हैं जिनका कोई प्रदान आज के युग में तो कर ही नहीं सकता। जब यह लिखे गये होंगे, उस समय ये सारी स्थितियाँ भक्तों को कभी २ मिला करती होंगी इसलिये उस भक्त ने कहा कि मुझे तो स्वर्ग नहीं चाहिए। ये सर्वभौम साम्राज्य नहीं चाहिए। तब धरती पर भगवान का अकेला साम्राज्य रहा होगा। मैं तो कई बार विचार करता हूँ कि जिन लोगोंने इतिहास का निर्माण किया वे बड़े महापुरुष लोग थे। क्योंकि इतिहास के निर्माण से दो शक्तियाँ और दो विचार और दो प्रेरणाएँ मानव में जागती हैं। यदि पूर्व पुरुषों ने कोई उत्तम कर्म किया हो, तो उसे अपने जीवन में ग्रहण करने की इच्छा जागती है। यदि अपने पूर्व पुरुषों के द्वारा कोई सामाजिक और नैतिक भूल हो गई हो, और उसका भी वर्णन इतिहास में मिल जाये तो व्यक्ति के मन में विचार जागता है कि ऐसी परिस्थिति यदि अपने सामने आ जाये तो उस प्रकार की भूल का पुनरावर्तन हम नहीं करेंगे। इसलिए इतिहास भूल सुधार, आलसी समाज, पिछड़े हुए समाज और अकर्मण्य समाज को शौर्य, साहस और सेवा की प्रेरणा देता है जो उन ऐतिहासिक पुरुषों के द्वारा मिला करती है। वह व्यक्ति भी अच्छा ही रहा होगा जिसने भूगोल बनाया। लेकिन उसने पहला अपराध किया कि संसार को बाँट दिया। परमात्मा इतने बड़े दयालु, करुणामय हैं। हम लोग तो अपनी २ भूमि के चारों तरफ कम्पाउण्ड वाल बनाते हैं। अपनी भूमि की, अपनी सम्पत्ति की रजिस्ट्री कराते हैं। कोई आदमी यदि यह कहे कि हमारी है तो हम उसके सामने सिद्ध कर देंगे कि देखो हमारे पास नक्शा है। हमने उस दिन खरीदा था। लेकिन परमात्मा को तो मालूम नहीं था उस समय कि जिस मानव का मैं निर्माण कर रहा हूँ वह मेरी ही धरती पर रेखा खींचकर इतना बड़ा अपना अधिकार बना लेगा कि लड़ाइयाँ होने लगेंगी। युद्ध होगा—रक्त बहेगा। जिसने पहले पहल एटलस का निर्माण किया होगा आदमी तो बड़ा बुद्धिमान रहा होगा, लेकिन उसने संसार को रेखाओं द्वारा अलग २ करने का जो विचित्र प्रयास किया उससे मानव का अभिनिवेश बदल गया। उसके चिन्तन में छोटे २ दायरों को अपना मानने का विचार पैदा हो गया। जो गोपाल की भूमि थी, वह मानव की अपनी भूमि बन गई और धीरे २ समाज की बनी, राष्ट्रों की बनी। फिर छोटे २ लोग आततायी होने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लगे। उन्होंने युद्ध के द्वारा अपने विस्तार के संकल्प को पूरा किया। और सारे संसार में हिंसा का राज्य हो गया। लेकिन यदि मानव इतिहास से प्रेरणा लेता होता और सृष्टि को परमात्मा का ही मानता होता तब शायद दूसरा ही स्वरूप होता। वहाँ फिर प्रान्त, भाषा, वर्ण, बोली, रंग-रूप इन सब के आधार पर यह संसार बँटा हुआ दिखाई नहीं देता। प्रतिदिन एक नई सीमा बनाने के लिए निरीह और निरपराध लोगों की हत्या न करते, और उनके प्राण न छीनते। यह कुछ अपने देश में हो रहा है। आप समाचार पत्रों में रोज पढ़ते हैं। यह मानव की वही तो एक क्षुद्र अभिलाषा है जो परमात्मा के विराट स्वरूप का दर्शन नहीं होने देती। परमात्मा की धरती तो परमात्मा की है ऐसा विचार उत्पन्न नहीं होने देती। यदि यह विचार आ जाये तो क्या मानव निरीह और निरपराध पुरुषों की, बालकों की, स्त्रियों की, और साधुओं की हत्या कर सकता है ? लेकिन ऐसा हो रहा है। लोग अध्यात्म को ऐसा मानने लगे हैं कि आध्यात्मिक चिन्तन थोड़े से लोगों के लिए है। लेकिन मेरी व्यक्तिगत मान्यता के बीच, मेरे विनम्र मत में, अध्यात्म तो सारे संसार की वह सम्पत्ति है जिससे जगत को भी ठीक से जिया जा सकता है और उपासना के मार्ग पर चलते हुए जगदीश्वर को भी प्रसन्न किया जा सकता है। जहाँ जगदीश्वर और जगत एकाकार हो जायें, मानव के लिए, वह कैसी पावन स्थिति हो सकती है—विचार कर सकते हैं। परमात्मा को अलग और जगत को अलग किया जायेगा तब तो निश्चित रूप से यह रेखाएँ और बढ़ती जायेंगी। दीवारें और बढ़ती जायेंगी। इसलिए विचारक ने कहा—भाई, चिन्तन को बदलने की आवश्यकता है। उपासना इसमें मदद करेगी।

हरिरेव जगत जगतेवहरिः
हरितो जगतो न हि भिन्न तनुः
इति यस्य मतिः परमार्थ गतिः
स नरो भवसागर मुक्त रतिः

वह मानव भवसागर से पार चला जाता है जो इस जगत को परमात्मा का रूप मानता है। वही परमात्मा इस जगत के भीतर अनुस्यूत है। इन पुष्पों के भीतर आप देख रहे हैं—लेकिन दिखाई नहीं पड़ रहा है, अनुस्यूत है—एक धागा एक डोरा। यदि धागा अलग हो जाये तो वह पुष्प कहीं खड़े नहीं रह सकते। यह सारा श्री और सौन्दर्य बिखर जायेगा। यह सारा श्री

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और सौन्दर्य टिका हुआ है धागे के ऊपर। यह विश्व टिका हुआ है 'सूत्रे मणिगणाइव' जैसे मणियों के बीच में सूत्र है, वैसे सारे संसार के बीच में यह परमात्मा-सूत्र व्याप्त है। यह उसकी अपनी विशेषता है कि वह अपने को प्रकट नहीं कर रहा है। जो प्रकट है वह अंधकार के कारण अपनी महिमा जताने के लिए बार बार संसार के सामने आ रहा है। और जो सबके भीतर अनुस्यूत है, वह मूक भाव से, शान्त विराजमान रहकर भी पूर्ण सन्तोष के स्वरूप में यहाँ अवस्थित दिखाई पड़ता है। लेकिन हम सब लोगों को जगत के बीच में हरि और हरि के बीच में जगत, यदि यह देखने की दृष्टि मिल जाय तो पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय और विश्वजनीन अनेक समस्याओं का समाधान ढूँढ़ने में वह आध्यात्मिक चिन्तन बहुत सहायक हो सकता है। उपासना करता हुआ व्यक्ति पदार्थों के बीच में जीता हुआ, देखा, खाया, पिया, अनुभव किया, अब भगवान से कहता है कि महाराज अब इससे कुछ ऊपर तो ले चलो। भगवान प्रसन्न होकर कहते हैं कि लो मैं तुम्हें स्वर्ग दूँगा। तुझे बहुत बड़ा पारमेष्ठ पद प्रदान करूँगा। लेकिन वह कहता है—

'न नाकपृष्ठं न च सार्वभौमं'

मुझे पृथ्वी का सारा आधिपत्य मिल जाये। मुझे स्वर्ग का सुख नहीं चाहिए। मुझे सार्वभौम राज्य नहीं चाहिए। अपनी ही छोटी छोटी व्यवस्थाओं में मानव को समय नहीं मिल पाता है। यदि भगवान कृपा करके मुझे और आपको सार्वभौम राज्य दे दें, तब तो यह प्रपंच कितना और अपने में लपेटकर रखेगा यह कहना बहुत कठिन है। इसलिए परमात्मा जितना-जितना देता जाये, उतना-उतना प्रभु का मानकर सेवन करें तो बन्धन तो नहीं है। लेकिन जहाँ जहाँ उसमें अपना-अपना मानने का विचार बढ़ता जायेगा, वह अहंकार और ममता मुझे और आपको निश्चित रूप से उतने-उतने अंशों में बाँधेंगे, जितनी जितनी मेरी और आपकी यह कर्तृत्व और भोक्तृत्व की भावना बलवती होती जायेगी। कौन व्यक्ति अन्तर से कितना बँधा है, और कितना मुक्त है, इसे विज्ञान का कोई साधन नहीं बता सकता। यह तो हम लोगों को अपनी-अपनी उपासना के क्षणों में अलग-अलग देखने का अवसर मिलता है और हमें देखने का यत्न करना चाहिए। लेकिन मन तो बड़ा विचित्र है। वह दूसरों को देखने की बात तो बार-बार कहता है, लेकिन अपने को देखने का यत्न नहीं करता है। विचार करके देखें कि जब हम दूसरे को देखने की बात कहते हैं तब अपने को देखने की बात इंगित करके परमात्मा निश्चित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रूप से कह रहे हैं। एक दिन प्रवचन में कहा था कि जब दूसरे को देखने की इच्छा होती है, तब प्रपंच की बोधिका यह तर्जनी उठती है। और इस तर्जनी से हम उसको देखते हैं। किसी को कहते हैं कि वह व्यक्ति कैसा है? उसी समय कभी आपने विचार किया होगा कि इस व्यक्ति के लिए तो कह रहे हो, लेकिन ये तीन उँगलियाँ कह रही हैं कि अपनी ओर भी तो देखो। तर्जनी से व्यक्ति दूसरे को देखता है, लेकिन मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठा उसे बार-बार कह रही हैं कि ओ व्यक्ति। दूसरे को देखने की अपेक्षा यदि तू अपने को देखे तो तुझे तीन गुणा अपने को देखना पड़ेगा। दूसरे को देखने के लिए एक गुणे से काम चलेगा, किन्तु अपने को देखना हो तो तीन बार मानव को देखना होगा। और प्रकारान्तर से अपनी ही उंगली मुझे कह रही है कि देख तो सही तेरे भीतर रजोगुण कितना है? सतोगुण कितना है? क्योंकि ये तीन उँगलियाँ अपनी ओर उठी हुई हैं और मानव त्रिगुणात्मिकता सृष्टि में जीवित है। कभी मैं सत्व में रहता हूँ, कभी रजोगुण में। कभी तमस मानव के भीतर जग जाता है, और इन्हीं त्रिगुण के राज्य में हम और आप निवास कर रहे हैं। इसलिए ये तीन उंगलियाँ, जब हम दूसरे के सम्बन्ध में विचार करते हैं, तब अव्यक्त रूप से, अप्रत्यक्ष रूप से हमें और आपको बोध देती हैं—कहती हैं अपनी ओर आदमी को देखने का यत्न करना चाहिए। और मेरा और आपका मन तो निरन्तर भाग रहा है। उपासक की कठिनाई यही है। इसलिए इस मन को विकल्प देना होगा। एक सन्त कवि ने अपने मन को कहा कि मन मैं तुमको विकल्प दे रहा हूँ—

रे रे मानस भृंग मा कुरु रुधा

झंकार कोलाहलम्, निःशब्दं हरिपाद फुल्ल कमले,
माध्वीकमास्वादय।

मन को उसने कहा कि मन रूपी भौंरे तू अब अधिक भनभना मत। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध पर तू इतना उड़उड़ कर थका नहीं है? उसने कहा—मैं क्या करूँ। तुम कोई नई वस्तु दो तब तो बैठूँ। उसने कहा—'मैं तुम्हें दे रहा हूँ'। तू कोलाहल मत कर। बार बार तू गुनगुना मत। मैं तुम्हें एक बाग दे रहा हूँ। परमात्मा के चरण कमल के ऊपर तू बैठ जा। ओ मेरे मन रूपी भौंरे, संसार में कितनी बार तूने जन्म लिया है कितनी बार मरा है। 'पुनरपि जन्मं पुनरपि मरणं' अब तो थोड़ा विश्राम ले ले। और तू शब्द, स्पर्श रूप, रस गंध में न जाने कितनी बार अपमानित भी हुआ है, पर फिर भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन्हीं को पाने का तेरे मन में विचार क्यों उठता है रे। मन को कहता है सन्त कि मैं तुझे विकल्प दे रहा हूँ। और वह विकल्प क्या है। 'निःशब्दम्' अपनी गुनगुनाहट को बन्द कर मन से कह रहा है कि अपनी गुनगुनाहट को बन्द कर और परमात्मा के चरणारविन्द में इस खुले हुए, बिलकुल चारों ओर से जो प्रेम, करुणा, दया और सद्गुण बिखेर रहा है, ऐसा वह कमल है। संसार के भौतिक कमल में तो केवल एक ही प्रकार का पराग मिलता है। लेकिन परमात्मा के अद्भुत चरण कमल में तो संसार के सारे पराग, सारे किंजल्कों का एक निरन्तर प्रवाहित होने वाला अविश्रृंखलित जो प्रवाह है उसे अरे मन तू स्वीकार कर ले। एक बार वहाँ बैठ तो सही। उसमें से जो मधु निकल रहा है, उसमें से जो प्रेम मिल रहा है, उसका आस्वादन ले। फिर मैं तुमको आश्वासन दिलाता हूँ, सन्त कह रहा है, उपासक कह रहा है अपने मन से कि भिन्न २ वस्तुओं को तुमने पाया होगा, वह क्षणिक सुख प्रदान करने के बाद उस दिन तो तृप्ति दे देते हैं। लेकिन कुछ काल बाद उसी प्रकार का आस्वाद ग्रहण करने का तेरा मन फिर से हो जाता है। लेकिन यहाँ मैं तुमको आश्वासन दे रहा हूँ कि यदि तूने एक बार भी परमात्मा के चरणारविन्द के पावन पराग का पान करने का प्रयत्न किया, तो तेरे मन की चंचलता कहाँ चली गई तुझे पता नहीं चलेगा। आज तू चंचलता के कारण दुःखी हो रहा है, लेकिन आने वाला कल बड़ा ही पावन है। एक बार कहा—दस बार नहीं। संसार में तो सौ सौ बार व्यक्ति पदार्थ का सेवन करता है। लेकिन यहाँ भक्त कहता है 'केवल एक बार'। और परमात्मा कहते हैं कि तुम केवल एक बार मेरी ओर आ जाओ। सौ बार तो हम गये हैं लेकिन उस एक बार में पूरी रिक्तता हो। जो पूरी तरह से रिक्त होता है वही भरा जाता है। जब सुराही के सामने प्याला चला जाता है तब वह बड़ा प्रसन्न है। मृतिका बड़ी साधारण है। ५ पैसे १० पैसे में मिलता है। सुराही बड़ी कीमती है। चाँदी की है उसे रखने वाला व्यक्ति बड़ा सम्पन्न है, इसलिए उसमें लाल पीले हरे नीले पत्थर जड़ रखे हैं। लेकिन वह चषक जो सामने बैठा है, वह छोटा सा प्याला बड़ा प्रसन्न है। वह जानता है कि मैं रिक्त हुआ हूँ अब इससे ज्यादा मेरा कुछ नहीं हो सकता है। जहाँ तक मैं पहुँच सकता था मैं पहुँच गया हूँ। माटी का मैंने अपना तन बनाया है, और माटी से छोटा संसार में कुछ नहीं हो सकता। यह संसार परिवर्तन होते २ एक दिन माटी ही बन जायेगा। इसलिए मैंने अपने वास्तविक सुख के, अपनी-संतुष्टि के सारे बिम्ब ढूँढ़ लिये हैं और मैं वहाँ विराजमान हूँ। जब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह माटी का पात्र एकदम रिक्त हो गया तब मन में अभिलाषा है कि मैं भरा जाऊँ। कहता है कि मै अपने आप अब कुछ नहीं करूँगा। जो करना है वह करे। उसकी इच्छा है मैं अब कुछ नहीं करूँगा। कर्तृत्व और भोक्तृत्व, इन सब अभिमानों से मुक्त होकर वह छोटा सा प्याला अपने आसन पर विराजमान हो अपनी मस्ती में मस्त है। चिन्ता से दूर है। इतने में किसी को लगी प्यास, और जिसको प्यास लगी उसने सुराही को झुकाया। सुराही तो भरी हुई थी उसको कभी झुकना नहीं चाहिए था क्योंकि वह तो भरी थी मूल्यवान थी लेकिन जो माटी का था, रिक्त था, उसने अपने अस्तित्व का विस्मरण कर दिया था।

तिहीदस्तों का दर्जा, अहले दौलत से ज़ियादा है।
सुराही सर झुका देती है, जब भी जाम आता है॥

सुराही को झुकना पड़ा। परमात्मा विराट, विश्वम्भर, सकल ब्रह्माण्ड नायक, वह परमात्मा अपने उपासक का रिक्त पात्र देखकर अपनी महिमा भूल जाता है, और फिर करुणा की सुराही निरन्तर उसी के हृदय पात्र में उड़ेलता चला जाता है। उसे मिलता है वह जो उसे पाना चाहिए। भक्त ने कहा महाराज मैंने संसार बहुत देखा है अब कुछ कृपा करो मुझपर। उसने कहा मुझे लौकिक कुछ भी नहीं चाहिए। तब भगवान ने कहा कि आध्यात्मिक राज्य में भी तो बहुत कुछ मिलता है। वह तुम्हें दे देंगे? लोग साधना करने के बाद अणिमा गरिमा, लघिमा, वशित्व आदि ये सब प्राप्त करना चाहते हैं। क्योंकि स्वाभाविक है कि इनमें से एक भी किसी के पास आ जाये तो समाचार पत्र में मुखपृष्ठ पर उसका चित्र छप सकता है। जिस आदमी में इनमें से कोई भी एक सिद्धि आ जाये—दिखाई पड़ रहा है वह फिर अपने को छिपा ले तो लोग कहें कहाँ चला गया। कोई ऐसी शक्ति आ जाये कि दिखाई पड़ रहा है और फिर दूसरे नगर में वही प्रकट हो जाये तो बड़ा नाम होगा। लोग बहुत उसके पास आयेंगे। उसके मानने वाले प्रचारक बहुत हो जायेंगे। फिर तो वित्तैषणा की अपेक्षा, लोकैषणा मानव को ज्यादा मान्यता देती है। हम साधु संन्यासी में भी दुर्बलता दिखाई पड़ती है। पुत्रैषणा पर तो विजय प्राप्त करते हैं क्योंकि साधु होते हैं। वित्तैषणा पर वे विजय प्राप्त करते हैं, क्योंकि उनका कोई अपना उद्योग व्यापार नहीं होता। लेकिन हमारे जैसे साधु संत भी यदि कहीं एक मधु चाशनी का रस लेने लगते हैं तो लोकैषणा होती है। और यह संसार की सिद्धियाँ मानव को लोकैषणा के राज्य में ले जाती हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चमत्कार मानव को लोक पूजित बनाता है। जब लोक पूजित बनाता है तब बड़ी कठिनाई होती है। कई बार व्यक्ति के मन में ऐसा कुछ होता है कि जो कुछ है वह सब तत्काल मुझे मिल जाय। जब यह विचार जागता है तो कई बार प्रज्ञा के ऊपर आवरण पड़ जाता है। लोगों ने सोचा सम्पत्ति और स्वर्ण ये संसार में सब से अच्छी वस्तुएँ हैं। उपासना करने चला था भगवान की, और उपासना करने लगा स्वर्ण की। और रसायन सिद्ध करने में लग गया। जब रसायन सिद्ध करने लगा, तो उस समय सचमुच कोई देवता, कोई गन्धर्व, कोई यक्ष प्रकट हुआ और उससे कहा, इतने दिनों से तू साधना कर रहा है। क्या चाहता है? उसने कहा 'स्वर्ण। यदि सिद्ध हो जाये तो उसके द्वारा बहुत सम्पत्ति प्राप्त करके जितने संकल्प हैं उन्हें पूरा किया जा सकता है'। विवेक के ऊपर पर्दा पड़ गया है। मानव जान न पाया कि क्या माँगना चाहिए? माँगने के लिए कितने दिन प्रतीक्षा करनी पड़ी। जब माँगने का दिन आया और देने वाला सामने खड़ा है तब माँगता है कि स्वर्ण मिल जाये। तो कहा कितना मिल जाये तो बोला इसका कोई मापदण्ड नहीं। बस मैं जिसका स्पर्श करूँ वह सोना बन जाये। फिर मेरे पास तो कोई कमी रहेगी नहीं। उसने कहा—तथास्तु। जब वह घर पहुँचा तो मालूम नहीं था कि उसने क्या मांगा है। घर पहुँचते ही उसको छोटे बालक ने जैसे ही स्पर्श किया वह स्वर्ण की पुतली बन गया। जब खाने के लिए भोजन मँगाया तो सारी रोटियाँ सोने की हो गईं। जब सब्जी मँगाई तो वे सोने के खण्ड और जब पानी मँगाया तो तरल पानी स्वर्ण बन गया। जब परिवार के किसी स्वजन को भद्रतापूर्वक अपनी सिद्धि की बात बताकर उसे स्पर्श किया तो वह भी स्वर्ण हो गया। जब उसने माता को प्रणाम किया तो स्वर्ण, पिता को स्पर्श किया तो स्वर्ण, दीवारों को छुआ तो स्वर्ण। अब दीवारें हैं लेकिन वह छोटा तुतलाता हुआ बालक नहीं है। स्नेह से श्रम को दूर करने वाली उसकी अपनी पत्नी नहीं है। वात्सल्य प्रदान करने वाली माता नहीं है। कुशल पूछने वाला पिता नहीं है। दुःख में सहायता करने वाला बन्धु नहीं है। सब सोने के पुतले बने खड़े हैं। मन की बात कहे तो किसे कहे। कोई बात करने वाला नहीं है, कोई सहानुभूति देने वाला नहीं है (नाकपृष्ठ, सार्वभौम, पारमेष्ठ, और सकल सम्पदा के अभिलाषी उपासक के मन में विवेक के ऊपर आवरण पड़ने के कारण, संसार के समस्त सुखों के बीच जीने वालों के प्रति अन्तर में एक आकर्षण उठने के कारण, मैं भी ऐसा जीऊँ। मुझे भी यह प्राप्त हो जाये ऐसी मिथ्या धारण के कारण बहुत कुछ मिल सकता था पर सब कुछ खड़ा है) फिर से प्रार्थना करने लगा। देव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फिर प्रकट हुआ। पूछा भाई कल ही तो वरदान दिया था अब क्या हुआ? उसने कहा कल वरदान माँगने आया था आज **वरदान लौटाने आया हूँ।** क्योंकि वरदान जब ले गया था तब भ्रम था कि पदार्थ मानव को सम्पूर्ण आन्तरिक संतुष्टि दे देंगे। पर आज तो अनुभव करके लौटा हूँ। इसलिए मेरा निवेदन यह था कि उपासक पदार्थों के मध्य में रहता है, लेकिन प्रभु को ढूंढ़ता है। यदि प्रभु को ढूँढ़ता है तो पदार्थ भी रूपान्तरित हो जाते हैं। और प्रभु से भी यदि पदार्थ पाने की इच्छा रहती है तो स्वजन भी छूट जाते हैं, और मानव एकाकीपन के बोझ से लदा २ जीवन व्यतीत करता है। परमात्मा के चरणारविन्दों का कमल खिला हुआ था। भक्त बार २ अपने मन से कह रहा था कि एक वार परमात्मा के चरण कमल के मधु का तू पान कर ले जिससे परम तृप्ति का बोध होता है। मैं तुझे विश्वास दिलाता हूं कि तेरे मन की झंकार और तेरी अहंकृति कहाँ चली गई, तुझे पता नहीं चलेगा। जब उपासक की उपासना प्रयासपूर्वक होती है तब वह श्रम होता है। जब सहज होती है तब वह जीवन का रस बन जाती है। लेकिन हर उपासक को अपनी प्राथमिक उपासना नियमों में बाँध देने के कारण परिश्रम ही बनाना पड़ेगा। जब परिश्रम कोई व्यक्ति करता है तो उसमें से रसानुभूति बाद में होती है। इसलिए पहले दिन ही कोई व्यक्ति ऐसा सोचे कि उपासना का वह शिखर मिल जावे जिसका ऋषियों ने अनुभव के द्वारा वर्णन किया है, यह सम्भव न होगा। अनुभव के उस साम्राज्य में जाने के लिए व्यक्ति को एक एक सोपान पर चलना पड़ेगा। पर हर सोपान केवल साध्य तक ले जाने के मार्ग में सहायक है यह विचार भी हमारा और आपका रहना चाहिए। क्योंकि उपासना का हर सोपान, मानव को जब वह उसमें दृढ़ता पूर्वक चलने लगता है तब उसमें भी कोई आकर्षण होता है। उस आकर्षण के कारण भी कई वार साधना और उपासना के मार्ग पर चलने वाले लोग ठिठक कर वहीं बैठकर रह जाते हैं। ऊपर जाने के लिए एक व्यक्ति ने कहा कि तुम्हें सीढ़ी दे रहा हूँ और इस सीढ़ी के हर सोपान में किसी में सोना किसी में चाँदी और किसी में हीरे जड़े हैं। वे इतने सुन्दर हैं कि उन्हें देखकर भी मन आकर्षित होता है। उस समय उपासक को सोचना पड़ेगा कि सोपान चाहे कितने भी आकर्षक क्यों न हों लेकिन यह बात गलत है। साध्य तो बहुत ऊपर है। जब सोपान इतने अच्छे हैं तो फिर साध्य कितना परमानन्दमय, परम तुष्टिकारक परम तुष्टि का प्रदाता होगा। इस सात्विक विचार को जीवित रखते हुए सोपानों के प्रति भी आँखें मूँद कर चलने का यत्न करना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पड़ेगा। साधक ने कहा, 'मेरे परमात्मा, मेरे उपास्य, तुम्हारे चरणों में बहुत बार बैठा हूँ, माँगा है। कभी आर्त बनकर आया हूं, कभी अर्थार्थी बनकर आया हूँ। कभी जिज्ञासु बन कर आया हूँ। आज तो तुम्हारे वास्तविक स्वरूप के दर्शन करने की आकांक्षा जागी है।' भारतीय तत्व ज्ञान मानव के भीतर तत्व निष्ठा ही जगाता है। यदि व्यक्ति को उपासना करते २ व्यक्ति निष्ठा में जीने का अभ्यास हो गया तो कहीं कठिनाई है। व्यक्ति के चले जाने से निष्ठा टूट जायेगी इसलिए व्यक्ति के माध्यम से तत्व में निष्ठा जागनी चाहिए। यदि तत्व में जाग गई मेरी और आपकी तो व्यक्ति मार्ग दर्शक के रूप में अवश्य प्रेरणा देगा। लेकिन जिस व्यक्ति से हमने प्रेरणा ली थी वह भी तो तत्व की प्रेरणा की निष्ठा में ही जीता था। जिसने अपने जीवन के द्वारा तत्व की निष्ठा का संदेश दिया हो ऐसे महान व्यक्ति के प्रति श्रद्धा रखते हुए व्यक्ति की निष्ठा नहीं, तत्व की निष्ठा हमारे अन्दर जागृत होनी चाहिए। यदि वह तत्व की निष्ठा आपके भीतर जागृत हुई तो मार्ग में जितने अवरोध हैं वे हट जायेंगे। तब साधक ने कहा—'न योग सिद्धि अपुनर्भवमवा'

अब तो साम्राज्य मिल गया। कहाँ तो विभिन्न सिद्धियाँ मिल रही थीं उसका तो निषेध करता गया। तब तो यह कहा कि मुझे तो आपके चरणरज की आकांक्षा है। ये सगुण साकारवादी मनुष्य के द्वारा निःसृत श्लोक है, इसलिए इसमें रजप्रपन्न होने की बात कही गई। वेदान्त की निष्ठा वाला व्यक्ति सारे संसार में निजस्वरूप दर्शन में ही आनन्दित होता है। क्योंकि जितनी वस्तुएँ मिलती हैं वे सब छोटी हो जाती हैं।

लब्धा विद्या राजमान्या ततः किम्,
प्राप्तासम्पत् वैभवाद्या ततः किम्।
भुक्तानारिसुन्दरांगी ततः किम्,
येन आत्मानैव साक्षात् कृतो भूत्॥

जिस उपासक ने अपनी आत्मा का साक्षात्कार नहीं किया, उसने बहुत वस्तुएँ प्राप्त कीं लेकिन चलना अभी शेष है। इतनी बड़ी विद्वत्ता मिल गई कि सम्राटों के मुकुट उसके चरणों में झुक गये तो क्या हुआ ? क्योंकि प्रवचन कर लेने से आत्मा का दर्शन हो जाता है, यह तो कोई प्रमाण है नहीं।

उपनिषद् ने कहा यह आत्मा प्रवचन करने से दर्शन नहीं देता है। और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खूब रात दिन केवल श्रवण ही किया तो भी आत्मा का दर्शन हो ही जायेगा, ऐसा भी पूर्ण आश्वासन नहीं दिया जा सकता। किसी व्यक्ति को इतनी बुद्धि मिली कि एक बार पढ़े और पूरा याद हो जाये। इतनी बड़ी स्मरण शक्ति मिल जाने पर भी वह आत्मदर्शन का अधिकारी बन जायेगा, यह कहना कठिन है। इस आत्मा को प्राप्त करने के लिए, वरण करने के लिए, जो कटिवद्ध होता है, जो मन में निश्चय करता है कि इन सब का निषेध करूँगा। बुद्धि आये मेधा आये, यह सबसे ऊपर है। जो मन और बुद्धि से भी परे है उस आत्मा को सच मानकर बीच में जितना भी कुछ आये, उसे स्वीकार नहीं करूँगा। देवर्षि नारद ने कहा—लाखों लोग कथा में जाते हैं। उनमें से कुछ को तो भगवान मिलने चाहिए। भगवन के पास जाकर कहा—आपको दया नहीं आती। लाखों लोग कथा में इकट्ठे होते हैं। हजारों लोग प्रवचनों में आते हैं। आपको क्या कठिनाई आ रही है? जब लोग इतना बुलाते हैं तो भगवान ने कहा,—'तुम कह रहे हो तो चलो'। भगवान चले और कहा कि गाँव के बाहर तक मैं आ गया, अब तुम जाकर बुला लाओ लोगों को। इतना तो तुम करोगे। वैकुण्ठ से चलकर यहाँ तक आ गया। पूरे गाँव में ढिंढोरा पीटा गया। चलो भाई भगवान आ गये हैं। गाँव के बाहर हैं जल्दी चलो। पूरे गाँव को एकत्रित किया लेकिन भगवान ने कहा—कि नारद का भ्रम टूटना चाहिए इसका स्वप्न टूटना चाहिए। इसलिए जैसे ही चली भीड़, मार्ग में देखा कि बहुत बड़ा ताम्बे के सिक्कों का ढेर। कुछ लोग वहीं रुक गये। सब ने कहा, 'तुम चलो हम आ रहे हैं थोड़ी देर में'। और अपने कपड़ों में बाँध २ कर वे सिक्के जितना बाँध सकते थे उतना बाँधा और लौटे। बोले भगवान तो वैकुण्ठ से आये हैं। गाँव के बाहर बैठे हैं। उनको कोई इतनी जल्दी थोड़ी होगी कि लौट जायेंगे। लेकिन ये पैसे तो पहले रख लें। थोड़ा और आगे चले तो देखा चाँदी के सिक्कों के ढेर। देवर्षि नारद से कहा आप तो बड़े करुणामय हैं। हमारे लिए क्यों रुकते हैं। आप चलो हम अभी आते हैं। और उसमें से बाकी लोगों में से कुछ ने वे सिक्के बाँधने शुरू किये। थोड़ा और आगे चले तो उन्होंने देखा सोने की मोहरों का ढेर। लोगों ने उसे बाँधना शुरू कर दिया। नारद ने दृष्टि घुमाकर देखा कि इतने बड़े समुदाय को लेकर चले थे, लेकिन यह तो कम ही होता चला जा रहा है। क्या बात है? भगवान को मैं इतना आग्रह करके बुलाकर लाया हूँ कि महाराज आपका जाता क्या है? दर्शन क्यों नहीं देते हो? इतने दिनों के बाद तो उन्होंने मेरी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वात मानी है। इसलिए चलो सबके पीछे मैं चलूँगा। और सबको हाँकते हुए चले। लेकिन आगे हीरे, माणिक, रत्न, पुखराज के ढेर चमकते हुए दिखाई दिये। तब एक बड़ा भला आदमी था। बोला नारदजी मैं अपनी इच्छा से तो नहीं आ रहा लेकिन मैंने सोचा तुम्हारी भी तो कोई लाज रखे, इसलिए मैं तुम्हारे साथ चलूँगा। वहाँ पहुँचने के बाद नारदजी ने कहा—भगवान मैंने प्रयत्न तो बहुत किया था। चले तो बहुत लोग थे लेकिन आ नहीं पाये। भगवान ने कहा चिन्ता मत करो—मैंने पहले ही कह दिया है—

मनुष्याणां सहस्राणां कश्चित् यतते सिद्धये,
यततामपि सिद्धानाम्, कश्चित यातितत्वतः।

तत्व से जानने वाला तो कोई २ होगा लेकिन हम सब लोगों को अपनी उपासना के क्षेत्र में इन सारे दृष्टान्तों से ये प्रेरणा लेनी चाहिए कि अन्तराय इतने चमकीले हैं। इतना उनका प्रभाव जीवन पर पड़ता है हम सबके कि उस समय उनको दवा कर रखना, अपने को रोक पाना बहुत कठिन वात है। जब ऐसे आकर्षण का काल आपके और हमारे जीवन में जागे उस समय प्रार्थना करनी चाहिए कि महाराज उपासना में विघ्न आ रहा है—इसलिए आप ही जानो। इतने दिन मैंने उपासना की है, इसको अवरुद्ध मत कर देना। अब कृपा करके जो अन्तराय आ रहा है इसको आप दूर कर दीजिए। परमात्मा के लिए तो क्या कठिन है। वह तो क्षणमात्र में ही 'कर्तुम् अकर्तुम अन्यथा कर्तुम' समर्थ है। ऐसा ईश्वर परमात्मा अपना २ उपास्य इष्टदेव जरूर कृपा करेगा। भक्त ने कहा—महाराज मुझे योग नहीं चाहिए—सिद्धि नहीं चाहिए। अपुनर्भव नहीं चाहिए। मुझे तो केवल आपकी पावन कृपा, और आपके चरणारविन्द का दर्शन और आपके चरणरज से ही मैं जीवन को कृतार्थ करने का यत्न करूँगा।

मैंने निवेदन किया है—मार्ग कठिन भी है, मार्ग सरल भी है। कठिन उन लोगों के लिए है जो चलने की अभी तैयारी नहीं कर रहे हैं। सरल उनके लिए जो इस मार्ग पर चल पड़े हैं। क्योंकि उपासक इस मार्ग पर चलते हुए भीतर का एक आश्वासन अनुभव करता है। उसे लगता है कि मैंने जिसकी शरण ग्रहण की है वह बहुत विराट है। बहुत शक्ति सम्पन्न है। विश्व का परमाधार, जगदाधार, विश्वाधार है। इसलिए जरूर मेरे ऊपर उसकी कृपा की धार वरसेगी ही। इस आश्वासन और विश्वास के साथ जब मानव चलता है तो उपासना सिद्ध होती है और दो वस्तुएँ कभी न टूटने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पायें। उपसंहार में मैं इतना ही निवेदन करूँगा। आज के युग में श्रद्धा और आस्था पर नित्य कुठाराघात होते हैं। ऐसे कठिन समय में अपनी श्रद्धा और आस्था को निरन्तर जीवित रखने का यत्न कीजिएगा।

> भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वास रूपिणौ,
> याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धास्वान्तस्थमीश्वरम् ॥

यदि कोई सिद्ध व्यक्ति भी हो जाये तो अपने अन्तस में उस परमात्मा के दर्शन न कर पायेगा। यदि उसके पास से दो चीजें, दो साधन सम्पत्ति छिन जाये। वे दो साधन सम्पत्ति है श्रद्धा और विश्वास। इसलिए अविश्वास के इस युग में श्रद्धा की वेल पर जहाँ कुतर्क कैंची बनकर काटने के लिए रोज नया आता हो, वहाँ अपनी श्रद्धा की वेल को हरा रखना। विश्वास के वटवृक्ष में रोज अपनी उपासना का जल डालते रहने से वह वटवृक्ष अपनी छाया में मुझे, आपको जीवित रखेगा। जिसकी श्रद्धा और विश्वास जीवित रहेंगे उसे परमात्मा की करुणा का बोध आज नहीं तो कल निश्चित रूप से होगा। करुणा तो है ही सतत्। बोध नहीं हो रहा है। जब बोध हो जाता है तब उस समय तो संसार कर्तव्य निर्वाह मात्र के लिए शेष रहता है। फिर यह जगत हरिमय हो जाता है। परमात्मा करे मेरे और आपके जीवन में वे धड़ियाँ निरन्तर जीवित रहें जिनमें हम परमात्मा के निकट बैठने का विचार जाग्रत रख सकें।

अपने छह दिनों के प्रवचनों में, अपने चिन्तन को यथामति – क्योंकि मैंने पहले ही कहा कि मैं भारतीय शास्त्रों का अपने को अधिकारी पण्डित मानता नहीं हूँ। भारतीय शास्त्रों का विनम्र विद्यार्थी बनकर जो मुझे सुख मिला उस चिन्तन को आपके सामने विनम्रता से बाँटने का यत्न किया है। जो अच्छा लगा हो उसे स्वीकार करना। अन्ततः तो मैं एक सन्यासी ही हूँ यदि आपको कुछ ठीक न लगा हो तो जब सन्यास लेते हैं तब हमें एक भिक्षा पात्र दिया जाता है 'झोली'—वह मैं सदा अपने पास रखता हूँ। जो अच्छा न लगा हो वह मुझे वापस दीजिएगा—मैं अपनी झोली में डालकर ले जाऊँगा। जो आपको अच्छा लगा हो वह कृपा कर अपनी मति-मंजूषा में रखिएगा। मेरा तो अपना कुछ नहीं हैं सन्तों—शास्त्रों और गुरुजनों के विचार अपनी भाषा में आप तक देने का मैंने विनम्र प्रयत्न किया है। ईश्वर की कृपा मुझ पर, आप पर, सब पर निरन्तर बनी रहे और हम उसकी कृपा के अधिकारी बन जायें।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.